मृणाल पाण्डे का रचना संसार

MRINAL PANDEY KA RACHANA SANSAR

Thesis Submitted to

Cochin University of Science and Technology

For the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

In

HINDI

Under the Faculty of Humanities

By

सन्ध्या.एस

SANDHYA.S

(Dr).K.VANAJA
Professor and
Head of the Department

Prof.(Dr.).R.SASIDHARAN
Supervising Teacher

DEPARTMENT OF HINDI

COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY

Kochi-682 022

APRIL 2015

Certificate

This is to certify that this thesis entitled ***Mrinal Pandey Ka Rachana Sansar*** *is a bonafide record of research work carried by* ***Sandhya.S*** *under my supervision for Ph.D (Doctor of Philosophy) Degree and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any university. All the relevant corrections and modifications suggested by the audience during the pre-synopsis seminar and recommended by the Doctoral Committee of the candidate has been incorporated in the thesis.*

Prof.(Dr.) R.Sasidharan
Department of Hindi
Cochin University of Science& Technology
Kochi-682 022

Place : Cochin

Date : /0 /2015

Declaration

I hearby declare that the work presented in this thesis entitled ***Mrinal Pandey Ka Rachana Sansar*** *based on the original work done by me under the guidance of* ***Dr.R.Sasidharan,*** *Professor, Dept. of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Cochin- 682 022 and no part of this thesis has been included in any other thesis submitted previously for the award of any degree in any other university.*

Sandhya.S

Department of Hindi

Cochin University of Science& Technology

Kochi-682 022

Place : Cochin

Date : /0 /2015

प्राक्कथन

साहित्य और मनुष्य के बीच का सम्बन्ध अटूट है। साहित्य के माध्यम से जीवन में आने वाले परिवर्तनों का सच्चा चित्र हमें मिलता है।नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध जैसे साहित्यिक विधाओं के माध्यम से साहित्यकार समाज का यथार्थ प्रस्तुत करता है। श्रीमती मृणाल पाण्डे हिन्दी साहित्य की ऐसी रचनाकार है जिन्होंने अपने समय के समाज का यथार्थ चित्रण अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। बहुमुखी प्रतीभा संपन्न लेखिका मृणाल पाण्डेजी के रचना संसार का अध्ययन करना प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का लक्ष्य है।उन्होंने अपनी लेखनी इक्कीस वर्ष की आयु में शुरू की थी। पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत रहने के कारण उनकी भाषा शैली तेज-तरार की है। समाज में व्याप्त विसंगतियों को बारीकी से देख-परख कर पाठकों के सामने पेश करने की उनकी क्षमता बहुत उल्लेखनीय है। नारी ज़िन्दगी को ही नहीं सामाजिक जीवन के समस्त पहलुओं को उन्होंने अपनी रचनाओं में पेश किया है। मृणालजी का रचना संसार बहुत व्यापक है, लेकिन वे मूलत: मीडिया पर्सन (पत्रकार) हैं। रचनाकार के रूप में ही नहीं, समाज सेविका के रूप में भी उनका खास योगदान है।इस सफल रचनाकार की रचनाधर्मिता के अध्ययन को लक्ष्य करके इस शोध प्रबन्ध का विषय रखा हैं “मृणाल पाण्डे का रचना संसार”। इसे पाँच अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है-

पहला अध्याय- मृणाल पाण्डे: एक अंतरंग परिचय
दूसरा अध्याय- मृणाल पाण्डे का नाट्य साहित्य
तीसरा अध्याय- मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य
चौथा अध्याय- मृणाल पाण्डे का कहानी साहित्य
पाँचवाँ अध्याय- मृणाल पाण्डे का निबन्ध साहित्य
अंत में उपसंहार है।

पहला अध्याय है –**'मृणाल पाण्डे: एक अतरंग परिचय'**। इस अध्याय में मृणाल पाण्डे जी के जीवन परिचय के साथ-साथ संपूर्ण रचना कर्म का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत किया गया है। मृणालजी के पत्रकार का रूप भी अन्य विधाओं के समान सशक्त है। कई पत्र-पत्रिकाओं का संपादन कार्य भी उन्होंने खूब संभाला है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समसामयिक जीवन के सभी पहलुओं का अंकन पैनी दृष्टि से किया है। अपने विचारों को स्पष्ट करने केलिए साहित्य की सभी विधाओं में उन्होंने लेखनी सफलतापूर्वक चलाई है। उनके नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध और अन्य विधाओं का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत अध्याय में दिया गया है।

दूसरे अध्याय **'मृणाल पाण्डे का नाट्य साहित्य'** में नाटककार के रूप में मृणालजी ने जो योगदान हिन्दी साहित्य को दिया है, इसका अंकन किया गया है। नाटककार के रूप में मृणालजी का व्यक्तित्व खास महत्वपूर्ण है। उन्होंने मुख्य रूप से पाँच नाटक और दो रेडियो नाटक लिखे हैं। ये सभी नाटक समकालीन जीवन से जुडी राजनैतिक-सामाजिक विषमताओं को रेखांकित करते हैं। 'जो राम रचि राखा' में रोमानी अभिजात्यवर्गीय क्रांतिकारी नेताओं की पोल खोली गयी है, तो 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' में संवेदनशील व्यक्ति का टूटन दर्शाया गया है। 'चोर निकल के भागा' में आज के उदारीकरण, वैश्वीकरण की छद्म सभ्यता में कला-सभ्यता में कला संस्कृति के बाज़ारीकरण से जुडे सवालों को व्यंग्य से मिलाकर प्रस्तुत किया गया है। मृणालजी के नाटकों में अभिव्यक्त सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पक्षों को व्यक्त करने का प्रयास इस अध्याय में किया गया है।

तीसरे अध्याय का शीर्षक है **'मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य'**। प्रस्तुत अध्याय में उपन्यासकार मृणाल पाण्डे जी के उपन्यासों में प्रस्तुत विभिन्न मुद्दों का जिक्र किया गया है। मृणालजी ने समकालीन परिवेश में स्त्री-

समाज की त्रासदी और विडम्बना, उसकी शोषित स्थिति, उसकी सामाजिक आर्थिक पराधीनता, सदियों से चली आ रही स्त्री-संबन्धों, रूढ़िग्रस्त मान्यताओं और धारणाओं से जुडे प्रश्नों को खुले व साहसपूर्ण ढंग से अपने उपन्यासों के माध्यम से हमारे सामने रखा है।लेखिका ने अपने उपन्यासों में आजकल के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सभी पहलुओं को हमारे सामने पेश किया है।

चौथा अध्याय **'मृणाल पाण्डे का कहानी साहित्य'** में मृणालजी की कहानियों में अभिव्यक्त समसामायिक मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है। मृणालजी का रचना फलक परिवार तक सीमित नहीं रहा है, सामाजिक परिप्रेक्ष्य को भी आधार बनाकर उन्होंने लिखा है। उनकी कहानियाँ मौजूदा हालत का चित्रण करने में सक्षम हुई हैं। मृणाल पाण्डे की कहानियों में चित्रित सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं के अध्ययन के साथ-साथ उनकी कहानियों के शिल्प पक्ष पर भी इसमें विचार किया गया है। समकालीन समय के साथ निकट सरोकार रखने के कारण उनकी कहानियाँ अत्यंत सफल हुई हैं। विषय की विविधता भी उनकी कहानियों में मिलती है।

पाँचवें अध्याय का शीर्षक है **'मृणाल पाण्डे का निबन्ध साहित्य'** इसमें मृणालजी के निबन्धों में निहित समसामायिक सन्दर्भों को आंकने का प्रयास किया गया है। एक स्त्री के नज़रिए से समसामायिक संदर्भों की पडताल उन्होंने पैनी नज़र से की है। पत्रकारिता के क्षेत्र में जुडे रहने कारण उन्होंने समय- समय पर परिवर्तित समाज में स्त्री की समस्याओं को उसके कर्म, श्रम, भूमिका और सामाजिक संबन्धों से जोडा है। सही आंकडों को प्रस्तुत करके उन्होंने स्त्री से जुडी सारी समस्याओं का आंकन किया है। मृणालजी के निबन्धों के माध्यम से नारी के प्रति समाज का धार्मिक दृष्टिकोण, समाज में स्त्री की स्थिति, गरीबी से त्रस्त ग्रामीण नारी, असमानता के बीच नारी,

मीडिया जगत में घुटती स्त्री की स्थिति, नारीवाद संबंधी विचार-विमर्श और राजनीति में स्त्रियों की भागीदारी आदि का अध्ययन इस अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

अंत में इस अध्ययन से निकले निष्कर्षों को 'उपसंहार' के रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रोफेसर डॉ. आर. शशिधरनजी के निर्देशन एवं निरीक्षण में तैयार किया गया है। समय- समय पर उनसे मिले बहुमूल्य सुझावों एवं सलाहों से ही यह कार्य संपन्न हो गया है। मैं उन्हें हार्दिक कृतज्ञता अर्पित करती हूँ।

मानविकी संकाय के अध्यक्ष और मेरे डॉक्टरल कमिटी के विशेषज्ञ डॉ.एन मोहनन जी की प्रेरणा, मार्गदर्शन और प्रोत्साहन मुझे निरंतर मिलता रहा है। उनके प्रति भी हार्दिक आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य मानती हूँ।

हिन्दी विभाग की अध्यक्षा प्रोफेसर डॉ. के वनजा जी ने मुझे जो सुविधाएँ एवं प्रेरणाएँ दी हैं, उसके लिए मैं उनके प्रति आभार प्रकट करती हूँ।

हिन्दी विभाग के अन्य गुरुजनों के प्रति भी मैं आभारी हूँ कि वे मुझे निरंतर प्रोत्साहन देते रहे हैं।

हिन्दी विभाग के पुस्ताकालय के अध्यक्ष श्री अषरफजी और पूर्व अध्यक्ष श्री पद्मकुमार जी तथा पुस्तकालय के सहयोगी के रूप में वर्षे से कार्यरत श्री बालकृष्णन जी तथा विश्वविद्यालय के सेंट्रल लाईब्रेरी के कर्मचारियों के प्रति और कार्यालय के सभी कर्मचारियों के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ।

मैं अपने प्रिय मित्रों एवं शुभचिंतकों के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ जिन्होंने समय समय पर मेरी सहायता की है, विशेष रूप से सुनीता, विनीता, ब्लसी.वी, कलकलता.ओ, श्रीजिना पी पी, लक्ष्मी प्रिया, सल्मी, शरण्या, नीतू, सल्मा, रंजनी, और सौम्या के प्रति भी मैं अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

इस अवसर पर मैं अपने परिवार के सभी सदस्यों के प्रति विशेषकर माँ-बाप के प्रति कृतज्ञता अर्पित करती हूँ। यह शोध प्रबन्ध मैं अपने गुरुजनों और माँ-बाप को समर्पित करती हूँ। सर्वोपरी ईश्वर के प्रति मैं आभार प्रकट करती हूँ, जिनकी कृपा से यह शोधकार्य संपन्न हुआ है।

मैं यह शोध प्रबन्ध विद्वानों के सामने सविनय प्रस्तुत कर रही हूँ। त्रुटियों एवं कमियों केलिए क्षमा प्रार्थी हूँ।

सविनय

सन्ध्या.एस

अनुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन i-v

अध्याय 1: मृणाल पाण्डे : एक अंतरंग परिचय 1-39

1.0. प्रस्तावना

1.1 जीवन-परिचय

1.2 रचना कर्म

1.2.1 कहानीकार मृणाल पाण्डे

1.2.1.1 दरम्यान

1.2.1.2 एक नीच ट्रैजेडी

1.2.1.3 एक स्त्री का विदागीत

1.2.1.4 यानी कि एक बात थी

1.2.1.5 बचुली चौकीदारिन की कढ़ी

1.2.1.6 चार दिन की जवानी तेरी

1.2.2 नाटककार मृणाल पाण्डे

1.2.2.1 जो राम रचि राखा

1.2.2.2 आदमी जो मछुआरा नहीं था

1.2.2.3 काजर की कोठरी

1.2.2.4 चोर निकल के भागा

1.2.2.5 शर्मा जी की मुक्तिकथा

1.2.2.6 रेडियो नाटक

1.2.3 उपन्यासकार मृणाल पाण्डे

1.2.3.1 विरुद्ध
1.2.3.2 पटरंगपुर पुराण
1.2.3.3 रास्तों पर भटकते हुए
1.2.4 आलोचक मृणाल पाण्डे
1.2.4.1 स्त्री: देह की राजनीति से देश की राजनीति तक
1.2.4.2 परिधि पर स्त्री
1.2.4.3 ओ उब्बीरी
1.2.4.4 जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं
1.2.5 अन्य विधाएँ
1.2.5.1 पत्रकार मृणाल पाण्डे
1.2.5.2 बन्द गलियों के विरुध
1.2.5.3 बोलता लिहाफ
1.2.5.4 स्त्री लम्बा सफर
1.2.6 अनूदित रचनाएँ
1.2.6.1 देवी
1.2.6.2 हमको दियो परदेस
1.2.6.3 अपनी गवाही
1.2.7 अंग्रेज़ी में रचित साहित्य
1.3 निष्कर्ष
अध्याय 2 मृणाल पाण्डे का नाट्य-साहित्य 40-104
2.0 प्रस्तावना
2.1 समकालीन महिला नाटककार और मृणाल पाण्डे
2.2 सामाजिक संदर्भ
2.2.1 मध्यवर्गीय पारिवारिक विघटन

2.2.2 संयुक्त परिवार की टूटन
2.2.3 पुरानी और नयी पीढ़ी का अंतर
2.2.4 युवा पीढ़ी की दिशाहीनता
2.2.5 नारी शोषण
2.2.6 नारी की महत्वाकांक्षा
2.3 राजनीतिक संदर्भ
2.3.1 राजनैतिक अव्यवस्था
2.3.2 राजनीति और शासन तंत्र का बढ़ता प्रभाव
2.3.3 प्रजातंत्र और राजनीति में अखबारों की भूमिका
2.3.4 राजनीति में मीडिया की शक्ति और सीमा
2.4 आर्थिक संदर्भ
2.4.1 आर्थिक तंगी के कारण टूटता मानवीय मूल्य
2.4.2 अभावग्रस्तता के कारण उत्पन्न दिशाहीनता
2.5 सांस्कृतिक संदर्भ
2.5.1 कला और संस्कृति में आनेवाला अपसंस्कृति का प्रभाव
2.5.2 अपसंस्कृति लाने में अखबार और मीडिया का योगदान
2.5.3 पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव
2.6 शैलपिक पक्ष
2.7 निष्कर्ष
अध्याय 3 मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य 105-171
3.0 प्रस्तावना
3.1 हिन्दी की महिला उपन्यासकार और मृणाल पाण्डे
3.2 मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य
3.2.1 मृणाल पाण्डे के उपन्यास : सामाजिक पक्ष

3.2.1.1 पति-पत्नी के बीच का संबन्ध
3.2.1.2 माँ के बीच बेटा-बेटियों का संबन्ध
3.2.1.3 पिता के बीच बेटा-बेटियों का संबन्ध
3.2.1.3 भाई-बहन के बीच का संबन्ध
3.2.1.5 लडके-लड़कियों से भेदभाव की भावना
3.2.1.6 बच्चों पर होनेबाला अत्याचार
3.2.2 भारतीय सामाजिक जीवन की विविध झांकियाँ
3.2.3 समाज में नारी जीवन की विविध पहलू
3.3 राजनीतिक पहलू
3.3.1 राजनीतिज्ञों द्वारा होने वाला शोषण
3.3.2 डाक्टरों या राजनीतिज्ञों द्वारा की जानेवाली अमानवीयता
3.3.3 पत्रकारिता के क्षेत्र में होने वाला भष्टाचार
3.3.4 पुलिस कर्मचारियों का व्यवहार
3.3.5 भारतीय राजनीति के समूचे परिदृश्य
3.4 सांस्कृतिक पहलू
3.4.1 भारतीय संस्कृति के विविध परिदृश्य
3.4.2 पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव
3.5 आर्थिक पहलू
3.6 निष्कर्ष

अध्याय 4 : मृणाल पाण्डे का कहानी साहित्य 172-242
4.0 प्रस्तावना
4.1 आधुनिक हिन्दी कहानीकारों का सामान्य परिचय
4.2 मृणाल पाण्डे की कहानियों में पारिवारिक जीवन की झांकियाँ
4.2.1 पारिवारिक मूल्य
4.2.2 सास-बहू का संबन्ध
4.2.3 पति-पत्नी का संबन्ध
4.2.4 माँ- बाप के बीच बच्चों का संबन्ध
4.2.5 बाल- मनोविज्ञान
4.3 स्त्री विमर्श
4.3.1 स्त्री दोयम दर्जे का नागरिक नहीं
4.3.2 नौकरीपेशा नारी
4.4 पाश्चात्य संस्कृति का बढ़ता प्रभाव
4.5 मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों की आडंबर-प्रियता
4.6 पारिस्थितिक सजगता
4.7 वृद्ध जीवन का यथार्थ
4.8 मृणाल पाण्डे की कहानियों की भाषा की विशेषताएँ
4.9 निष्कर्ष
अध्याय 5: मृणाल पाण्डे का निबन्ध साहित्य 243-317
5.0 प्रस्तावना
5.1 नारी के प्रति समाज का धार्मिक दृष्टिकोण
5.2 समाज में स्त्री की स्थिति
5.3 गरीबी से त्रस्त ग्रामीण भारतीय नारी

5.4 असमानता के बीच भारतीय नारी
5.5 मीडिया जगत में घुटती स्त्रियों की स्थिति
5.6 नारीवादी संबन्धी विचार-विमर्श
5.7 राजनीति में स्त्रियों का भागीदारी
5.8 निष्कर्ष
उपसंहार 318-322
परिशिष्ट
शोध छात्रा के प्रकाशित शोध लेख 323
संदर्भ ग्रंथ सूची 324-334

अध्याय एक

मृणाल पाण्डे : एक अंतरंग परिचय

अध्याय एक

मृणाल पाण्डे : एक अंतरंग परिचय

1.0 प्रस्तावना

समकालीन हिन्दी रचनाकारों में मृणाल पाण्डे की खास पहचान है। उन्होंने जिन्दगी को नज़दीक से देखने,अनुभव करने और जीवन संस्पर्श से उसकी सजीव सशक्त अभिव्यक्ति साहित्य में देने की कोशिश की है।नारी जिन्दगी की ही नहीं,सामाजिक जीवन के समस्त पहलुओं को उन्होंने अपनी रचनाओं में पेश किया है।साहित्य की अक्सर सभी विधाओं में उन्होंने सफलतापूर्वक कलम चलाई है । उनका रचना - संसार बहुत व्यापक है लेकिन वे मूलत: मीडिया पर्सन हैं । नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, पत्रकारिता, आलोचना खास तौर पर स्त्री - विमर्श आदि सभी विधाओं में उन्होंने अपनी अमिट छाप छोडी है । रचनाकार के रुप में ही नहीं,समाज सेविका के रुप में भी उनका खास महत्व है।

मृणालजी ने अपना लेखन कार्य हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में किया है। आर्थिक समानता के द्वारा अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष की खाई को पाटने का संकल्प उनकी रचनाओं में प्रकट है । उनके लेखन में उच्च वर्ग की भावहीनता, प्रेम, व्यवहार, अकेलापन, दहशत आदि का चित्रण तथा उनमें घुटती-पिसती स्त्री को उकेरने का प्रयास भी है । वैचारिक तीखापन के साथ-साथ मानव-मूल्यों के प्रति गहरा लगाव उनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है । धर्म, नैतिकता, परंपरा, विश्वास आदि को लोकाचार, बौद्धिकता और तार्किकता के धरातल पर दिखाने

का प्रयास मृणालजी ने किया है । आडंबरों और कुरीतियों पर प्रहार करने में उन्हें बड़ी सफलता भी हासिल हुई है ।

किसी साहित्यकार की साहित्यिक सृष्टि बारे में लिखने या कहने से पहले उसके जीवन और व्यक्तित्व के पहलुओं को जानना जरूरी है । साहित्यकार जो कुछ सर्जना करते हैं उसमें उनके व्यक्तित्व की छाप अवश्य दिखाई देती है । हिन्दी साहित्य को मृणालजी ने जो योगदान दिया है इसके समग्र मूल्यांकन के पहले उनका संक्षिप्त जीवन परिचय देना जायज होगा ।

1.1 जीवन - परिचय :-

मृणाल पाण्डे समकालीन हिन्दी साहित्य की एक ऐसी महिला रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनात्मक उपस्थिति से गद्य साहित्य की अक्सर तमाम विधाओं को समृद्ध किया है । हिन्दी के साथ वे अंग्रजी में भी लिखती हैं । मृणालजी जानी-मानी वरिष्ठ लेखिका, कवयित्री और राष्ट्रकवि रवीन्द्रनाथ टागौर की प्रिय शिष्या श्रीमती गौरापंत 'शिवानी' की सुपुत्री हैं । इनका जन्म मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ जिले में 26 फरवरी 1946 में एक साहित्यिक परिवार में हुआ । इनके पिता श्री शुकदेव पंत उत्तर प्रदेश राज्य के उच्च शिक्षा मंत्री थे । मृणालजी के एक भाई है । तीन बहनें हैं । मृणाल पाण्डे, इरा पाण्डे और वीणा जोशी गायिका है । उनका भाई मुकेश पंत इस समय रेबोक अमेरिका में जनरल मेनेजर है । मृणाल पाण्डे के पति का नाम अरविंद पाण्डे है । वे स्टील ओर्थीरीटी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड के चेयरमान थे। अब रिटायर्ड हैं । दो लडकियाँ हैं। अब वे अमेरिका में रह रहे हैं ।

मृणाल पाण्डे के नानाजी अश्विनीकुमार पाण्डेय राजकोट के राजकुमार

कॉलेज में अंग्रेजी प्रोफसर थे।नानी लीलावती पाण्डेय थी । वे गुजरात की विदुषी थी । उनका अपने घर पर ही हिन्दी गुजराती एंव बंगाली साहित्य में विशेष रूचि थी । नारी शिक्षा के प्रति उनकी विशेष रूचि थी।

मृणाल पाण्डेजी की प्राथमिक शिक्षा अंग्रेजी - माध्यम तथा माध्यमिक शिक्षा हिन्दी माध्यम से हुई । उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए की उपाधि प्राप्त की । उसके बाद नैनिताल विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य के अध्ययन के साथ-साथ प्राचीन भारतीय इतिहास,शास्त्रीय संगीत, प्राच्यवस्तु तथा दृश्य कलाओं का भी अध्ययन किया है । इसके अलावा उन्होंने वाशिगंटन डी सी(अमेरिका) के कांरकोरन स्कूल ऑफ आर्ट से चित्रकला एंव डिज़ाइन का विधिवत् अध्ययन भी किया है ।

मृणालजी ने इक्कीसवीं वर्ष की आयु में अपनी पहली कहानी **कोहरा और मछलियाँ** लिखी जो सन् 1967 में **धर्मयुग** हिन्दी सप्ताहिक में प्रकाशित हुई । उस समय से अब तक वे निरंतर लेखन कार्य से जुड़ी रही हैं । वे एक अच्छी अध्यापिका भी रह चुकी हैं । कई वर्ष विभिन्न विश्वविद्यालयों (प्रयाग, दिल्ली, भोपाल) में भी उन्होंने अध्यापन का कार्य संभाला।मध्यप्रदेश में अंग्रेज़ी भाषा का अध्यापन, भोपाल कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी,नई दिल्ली के जीसस एण्ड मेरी कॉलेज में अंग्रेजी की प्राध्यापिका भी रहीं । भारत के अलावा मृणालजी ने अमेरिका और यूरोप में भी अध्यापन का कार्य बखूबी निभाया है ।

वे साप्ताहिक हिन्दुस्तान, दुरदर्शन और स्टार न्यूज की संपादिका भी रहीं । उन्होंने सुप्रसिद्ध महिला पत्रिका 'वामा' का संपादन सन् 1984 से 1987 तक किया और इसके साथ प्रमुख समाचार केन्द्रों में न्यूज रीडर के रूप में भी

मुख्य भूमिका निभाई है । लोकसभा चैनल के **बातों-बातों** में नामक कार्यक्रम में व्याख्याता के रूप में सुपरिचित हुई । वे महिला रोज़ागार योजना आयोग में भी कई वर्ष कार्य कर चुकी हैं । उन्हें भारत सरकार ने 'प्रसार भारती' का चेयरमैन पद सौंपा था| उन्होंने इस पद को 24 जनवरी 2010 को ग्रहण किया था। तीन साल तक वे प्रसार भारती में कार्यरत रही थीं। पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके महत्वपूर्ण योगदान के आधार पर भारत सरकार ने उनको पद्मश्री से सम्मानित किये है। वे एक साहित्यकार के अलावा महिला चिंतक, विमर्शक और समीक्षक भी हैं । उन्होंने अपनी रचनाओं में तात्कालीन समय की नारी की इच्छा,आशा और आकांक्षाओं को सामने रखकर बड़ी ईमानदारी और सच्चाई के साथ साहित्य का सृजन किया है ।

1.2 रचनाकर्म

मृणाल पाण्डे जी समकालीन साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाने में सक्षम हुईं । उनका रचना संसार बड़ा ही विशाल है ।उन्होंने नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंन्ध, पत्रकारिता ,अनुवाद, आलोचना खास तौर पर स्त्री विमर्श आदि सभी विधाओं में लेखनी चलायी है । उन्होंने अपनी रचनाओं के ज़रिये नारी अस्मिता को जगाने का प्रयत्न किया है । सामाजिक यथार्थ का चित्र उनके साहित्य में मिलता है । मृणाल पाण्डे ने अपने साहित्य में आधुनिक परिवेश में अपनी अस्मिता को तलाशती स्त्री का चित्रण किया है । साथ ही स्त्री और पुरूष के संबंन्धों को नए रूप से देखने की कोशिश भी की है । मृणाल पाण्डे जी के साहित्य में आधुनिक नारी की नियति, भटकाव, यंत्रणा, जिजिविषा आदि सभी विषयों का खुला चित्रण हुआ है ।

1.2.1.कहानीकार मृणाल पाण्डे

मृणाल पाण्डे की कहानियाँ कहानी कला की दृष्टि से अत्यंत श्रेष्ठ हैं । ये कहानियाँ हमारे समय की कहानियाँ हैं । ये कलाकार के कलात्मक और सृजन-प्रतिभा से छन कर निकली हैं । उनकी कहानियाँ अपने परिवेश को व्याख्यायित करती हैं । मध्यवर्गीय जीवन की व्यापकता इसमें देखने को मिलती है । टूटते मानव मूल्यों पर गहन चिंता रचनात्मक धरातल इनकी रचनाओं में व्यक्त हुई है ।

मृणाल पाण्डे ने स्वंय अपनी कहानियों के संबंन्ध में लिखा है- 'हर कहानी या उपन्यास घटनाओं-पात्रों के ज़रिए सत्य से एक आंशिक और कुतूहलभरा साक्षात्कार होता है।साहित्य हमें जीवन जीना सिखाने की बजाय टुकडा-टुकडा दिखाता है,वे तमाम नर्क-स्वर्ग,वे राग-विराग,वे सारी उदारता और संकीर्णता भरे मोड,जिनका सम्मिलित नाम मानव-जीवन है । जो साहित्य उघाडता है,वह अंतिम सत्य या सार्वभौम आदर्श नहीं बहुस्तरीय यथार्थ होता है।'"[1]

मृणालजी की कहानियों के प्रमुख संकलन हैं:-**दरम्यान, शब्दबेदी, एक नीच ट्रैजेडी, एक स्त्री का विदागीत** (1985),**यानी की एक बात थी**(1990),**बचुली चौकीदारिन की कढ़ी**(1990) और **चार दिन की जवानी तेरी**(1995)।

डॉ.पुष्पपाल सिंह ने मृणाल की कहानियों के बारे में यों कहा है- "'मृणाल पाण्डे का नाम इधर के कहानी लेखन में चर्चित और प्रसिद्ध नाम है।नारी की अस्मिता केलिए आधुनिक सामाजिक परिवेश में जो लेखिकाएँ अपनी कलम से संघर्ष कर रही हैं,उनमें मृणाल पाण्डे का नाम अग्रणी है।'"[2]

1.2.1.1. “**दरम्यान**”

दरम्यान” मृणालजी का पहला कहानी संकलन है।दूसरा कहानी संकलन “**शब्दबेदी”** है।कहानी जगत में प्रवेश करते समय इस नाम से कहानी संकलन निकाला था।बाद में दो दशकों की कहानियों को मिलाकर “**यानी की एक बात** थी”,और “**बचुली चौकीदारिन की कढ़ी**” नामक कहानी संकलन निकाले गये । मध्यवर्गीय परिवार में होने वाले शोषण आदि को इन कहानियों में व्यक्त किया गया है।उनकी तमाम कहानियाँ कहानी कला की दृष्टि से खास महत्वपूर्ण हैं।अपने सूक्ष्म निरिक्षण के बल पर उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन-स्थितियों के विभिन्न आयामों को अपनी कहानियों में उद्घाटित किया है।

1.2.1.2. **एक नीच ट्रैजेडी**

एक नीच ट्रैजेडी उनका तीसरा कहानी संकलन है,जिसमें मृणालजी की नौ कहानियाँ संकलित हैं।ये कहानियाँ हैं-‘बर्फ’,’अन्धेरे से अन्धेरे तक’,’दोपहर में मौत’,’यानी की एक बात थी’,’बिब्बो’,’पितृदाय’,’कुत्ते की मौत’,’प्रतिशोध’,’एक नीच ट्रैजेडी’।उनकी ये कहानियाँ यह साबित करती हैं कि अपने व्यक्तित्व और परिवेश को झुठलाता नहीं है तो अपनी तमाम समय सापेक्षता के बावजूद वह लांघना भी है। मध्यवर्गीय जीवन की व्यापक चरित्र का तटस्थ विश्लेषण और टूटते मानवमूल्यों के प्रति गहन रचनात्मक चिंता आदि इन कहानियों की बड़ी विशेषता है।मानव जीवन और सामाजिक अंतर्विरोधों का चित्रांकन भी इन कहानियों में हुआ है।भौतिक सुख सुविधाओं के पीछे भागने की स्पर्धा में सम्बन्धों का विघटन,पारिवारिक तनाव,संत्रास

और घुटन के वातावरण में जीने का अभिशाप,कृत्रिम ह्रास और मुस्कान ओढ़ने की विवशता आदि का चित्रण प्रस्तुत कहानी संकलन में संकलित कहानियों में देखने को मिलता है।

1.2.1.3. एक स्त्री का विदागीत

'एक स्त्री का विदागीत' उनका चौथा कहानी संकलन हैं।इसमें 'एक स्त्री का विदागीत' शीर्षक कहानी के अतिरिक्त 'कुन्नु','प्रेमचन्द जैसा कि मैं ने उन्हें देखा','जगह मिलने पर साइड दी जाएगी उर्फ परियों का नाच ऐसा',लक्का-सुन्नी'दूरियाँ','हमसफर',भी संकलित हैं।लेखिका की आज तक लिखी हुई प्राय: सभी कहानियाँ नारी चेतना से सम्पृक्त हैं।अपनी पहचान अस्तित्व और अस्मिता केलिए सजग और क्रियाशील नारी पात्रों का सृजन कहानी कला की विशेषता है।यहाँ लेखिका इस कहानी के माध्यम से इस तथ्य को बड़ी तीक्ष्णता से प्रस्तुत करती हैं कि पुरूषसत्तात्मक समाज की सभी रीति-नीति के नियम सिर्फ स्त्री के लिए हैं, पुरूष स्वतंत्र है और स्त्री परतंत्र।इसमें पुरुषों की निरंकुशता प्रश्नांकित हुई है।इस संकलन की कहानियाँ हमारे समय और खुद कलाकार की रचनात्मक शक्ति की आखिरी बूँद तक **निथार(?)** कर उससे वह अंतिम आकार छान पाने की कोशिश करती हैं जो प्रचार माध्यमों की पकड़ के परे कहानी-कला का **विशुद्ध** रूप है।अलमोडा की आंचलिकता में गुम्फित कहानियों में लोक-जीवन का गहरा रंग है।इसमें पहाडी जीवन की विविध झाकियाँ प्रस्तुत हुई हैं । इसके अलावा पारिवारिक सम्बन्धों का चित्रण भी इनमें बारीकी से किया गया है।

1.2.1.4. यानी कि एक बात थी

'यानी की एक बात थी' में मृणालजी की अठाईस कहानियाँ संकलित हैं । इसमें संकलित अधिकांश कहानियाँ उनके पूर्व प्रकाशित संकलनों की ही कहानियाँ हैं । ये कहानियाँ हैं-'कोहरा और मछलियाँ' , 'चिमगादडें ,'ढलवान','और' 'व्यक्तिगत','शरण्य की ओर', 'चेहरे', धूप छाँह', 'प्रेत बाधा', 'तुम और वह और वे', 'कगार पर', 'दरम्यान' ,'कैंसर' ,'दुर्घटना', 'आततायी' 'शब्दबेधी' ,'समुद्र की सतह से दो मीटर ऊपर', 'रूबी', 'कौवे', 'लकीरें', 'मीटिंग', 'नुक्कड तक', 'गर्मियाँ', 'खेल', 'बर्फ', 'अन्धेरे से अन्धेरे तक', 'दोपहर में मौत' और 'यानी की एक बात थी' । मृणाल पाण्डे की कहानियों में आधुनिक वातावरण के प्रभाव के कारण उत्पन्न सम्बन्धों में ह्रास का बहुत ही मार्मिक चित्रण हुआ है । **कोहरा और मछलियाँ** कहानी की माँ हर बात का वर्णन अपने मित्रों के बीच विस्तार से कर रही है।उनका पति इतना बीमार है कि उसकी मृत्यु कभी भी हो सकती है । वह पति के कमरे में सिर्फ पत्रकारों को इंटरव्यू देने आती है और तभी पति की सेवा में तत्पर पत्नी के रूप में फोटो भी खिंचवा लेती है । पति की मृत्यु के बाद भी उनके इस नाटकीय जीवन में कोई अंतर नहीं आता । **शरण्य की ओर** कहानी में भी माँ और बेटी के बीच टूटते रिश्ते की झलक मिलती है ।**बर्फ** कहानी में ऐसे परिवार का चित्रण है जहाँ माँ-बाप की लडाई चल रही है और तीनों बच्चे सहमे से एक कमरे में बैठे हैं ।

1.2.1.5 बचुली चौकीदारिन की कढ़ी

बचुली चौकीदारिन की कढी मृणाल जी की कहानी-यात्रा की अगली कडी है । इस संकलन में उन्नीस कहानियाँ हैं- 'बिब्बो', 'पितृदाय', 'कुत्ते की मौत', 'प्रतिशोध', 'एक नीच ट्रैजेडी', 'एक स्त्री का विदागीत', 'कुन्नु', 'प्रेमचन्द जैसा कि मैं ने उन्हें देखा', 'जगह मिलने पर साइड दी जाएगी उर्फ तीसरी दुनिया की प्रेमकथा', 'परियों का नाच ऐसा', 'लक्का-सुन्नी', 'हमसफर' ,'दूरियाँ' , चार नंबर सुनहरी बाग लेन', 'एक हंस मुख दें', 'लेटीज', 'लेटीज टेलर', 'बचुली चौकीदारिन की कढी' आदि । दिनेश द्विवेदी की राय में 'सन्दर्भित परिवेश और उस परिवेश से जूझता टकराता चरित्र तथा उस चरित्र के घनत्व को बनानेवाली टकराती सी भाषा मृणालजी के कथालेखन की अपनी शख्सियत और अलग पह्चान बनती है । कथाकार के साथ वे एक समीक्षिका भी हैं । यही वजह है कि मृणाल जी का लेखन लोक से हटकर है ।"[3]

1.2.1.6. चार दिन की जवानी तेरी

चार दिन की जवानी तेरी मृणालजी का सातवाँ कहानी संकलन है।इसमें बारह कहानियाँ संकलित हैं । ये कहानियाँ हैं- 'लड़कियाँ', 'एक पगलाई सस्पेंस कथा', उमेशजी', 'कर्कशा', 'हिर्दो मेयो का मँझला', 'मुन्नुचा की अजीब कहानी' ,बीज', 'सुपारी बुआ', 'अब्दुल्ला', 'विष्णुदत्त शर्मा केलिए एक समकालीन नीति कथा' और 'चार दिन की जवानी तेरी' ।

इस संकलन की कहानियाँ अपनी ज़मीन में जडों को पसारती,तने को ठसके से खडा हुए दिखती हैं । मृणालजी की सूक्ष्म दृष्टि इसमें देखने को मिलती

है। उनमें पहाड़ का दरकता जीवन अपने रूढ़ विश्वासों और गतिशीलता दोनों के साथ दीखता है । इस कहानी संकलन में हिर्दा मिया जैसा अनूठा चरित्र है । उसकी हँसी में ऐसा रुदन छिपा है जो सीधे पहाड़ में ही तलाशता है । प्रकृति के आदिम प्रजनन कृषि पर पड़ती परायी छाया की दारुण कथा 'बीज' में है । इन कहानियों में आत्म विश्वास से भरा खुलापन है जो परंपरा की मिट्टी पर प्रयोग करता चलता है।

1.2.2. नाटककार मृणाल पाण्डे

बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न रचनाकार मृणाल पाण्डे ने यद्यपि कहानी, उपन्यास, नाटक ,पत्रकारिता आदि क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा दर्ज की है,तो भी नाटककार के रूप में उनकी पहचान खासी है । समकालीन हिन्दी साहित्य में महिला नाटककारों के नाटकों की चर्च भी मुख्य धारा में नहीं के बराबर ही की जाती है । मृणाल पाण्डे ने अपने समकालीन अन्य महिला नाटककार जैसे कुसुम कुमार, त्रिपुरारी शर्मा, मन्नू भण्डारी, गिरिश रस्तोगी, मृदुला गर्ग, शांति मेहरोत्रा, के समान हिन्दी नाट्य - साहित्य और रंगमच को संपन्न बनाने का प्रयास किया है ।

मृणाल पाण्डे ने समकालीन नाटक साहित्य को अपनी रचनात्मक उपस्थिति से घनत्व प्रदान किया है । नाटककार के रूप में उनकी यात्रा अस्सी के दशक से शुरू हुई और उसे उन्होंने अपनी तमाम कार्यकारी तथा रचनात्मक व्यस्तताओं के बीच बरकरार रखा । इनके नाटक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता व्यंग्य रही है । उनके नाटक मूलत: लोकनाट्य की शिल्प - छवियों को लेकर मंच पर अवतरित होते हैं । हास्य-व्यंग्य से भरपूर चुटीले भाषा-शिल्प के

कारण उनके नाटक मंच पर अत्यधिक सफल रहे हैं । हास्यावरण में वर्तमान गंभीर समस्या की तह तक जाने की अपूर्व क्षमता इनके नाटकों में है ।

जो राम रचि राखा (1981),**आदमी जो मछुआरा नहीं था** (1984), **काजर की कोठरी**, **चोर निकल के भागा**(1995)' और **शर्म जी की मुक्तिकथा** (2008) मृणाल पाण्डे जी के प्रमुख नाटक हैं | **धीरे-धीरे रे मना**, **सुपरमैन की वापसी**(2010) उनके रेडियो नाटक हैं ।

मृणाल पाण्डे का नाटककार अपने समय की जटिलताओं का सामना करता रहा।उनका मानना है कि "अपनी सच्ची स्थिति को,वह चाहे जितनी भी जटिल क्यों न हो,पारिभाषित करना हर लेखकीय अनिवार्यता है।"[4] उनका पहला नाटक 'मौजूदा हालत को देखते हुए' था जिसका प्रकाशन 'नटरंग' में हुआ और भोपाल में इसका मंचन भी हुआ,लेकिन दुर्भाग्य से उसकी कोई प्रतिलिपि अब प्राप्य नहीं है।यही स्थिति उनके रेडियो नाटकों की भी है,जिनमें से अधिकांश आकाशवाणी के आर्काइव्ज़ में गुम हैं।

1.2.2.1 जो राम रचि राखा

पहला नाटक '**जो राम रचि राखा'** उस दौर में लिखा गया था जब हिन्दी में जनवादी तर्ज की 'प्रतिबद्धता' धार्मिक आस्था की तरह स्थापित थी।उस दौर में उन्होंने इस नाटक के पात्र मन्नासेठ के हास्यास्पद क्रांति-स्वप्नों के माध्यम से अपने समाज से अपरिचित और निरर्थक प्रतिकों से भरी तत्कालीन वैचारिक दुनिया की तरफ इशारा किया।मृणाल पाण्डे का नाटक 'जो राम रचि राखा', विजयदान देना की 'खोज' नामक राजस्थानी लोककथा के आस्वाद जैसी

कहानी से अनुप्रेरित है जो पहली बार 'मध्य प्रदेश कला परिषद' द्वारा दिसंबर 1980 में आयोजित 'पहले पहल' नामक नाट्योत्सव के अंतर्गत भोपाल में खेला गया था।1981 में 'नटरंग' में इसका प्रकाशन हुआ।यह नाटक उच्च अभिजात्य वर्ग से आने वाले तथाकथित विद्रोहियों और क्रांतिकारियों के आंतरिक द्वंद्व या खोखलेपन से हमारा सामना कराना चाहता है।इसमें समकालीन परिस्थितियों को भी उजागर किया गया है।नाटक का नवयुवक श्यामलाल मन्नासेठ नगर सेठ राम लाल (घन्ना सेठ) का अति उत्साही आदर्शवादी पुत्र है,जो जनता और समता के रूमानी रूवाब देखता और क्रांति का गीत गाता है।कथा-प्रंसग अत्यंत रोचक है और नाटक मनोरंजन के साथ साथ व्यंग्य की प्रखर धार से पाठकों को उद्वेलित करने में भी सक्षम है।

1.2.2.2. आदमी जो मछुआरा नहीं था

'आदमी जो मछुआरा नहीं था' मृणाल पाण्डे जी का दूसरा प्रमुख नाटक है।इसमें उन्होंने समसामयिक सामाजिक-राजनीतिक सरोकार को व्यक्त किया है।यह नाटक एक जानीमानी योरिपिय लोककथा 'द फिशरमैन एण्ड हिज़ वाइफ' को शुरूआती बिन्दु के तौर पर इस्तेमाल करता है।नाटक 1984 में श्रीराम सेंटर तलघर में खेला गया।नाटक का केंन्दीय पात्र एक 'समर्पित',नौकरशाह है जो अपनी एकछत्र महारानी का स्वामी भक्त ताबेदार है।अपनी आका की इच्छा और अपनी तथा अपनी पत्नी की महत्वाकांक्षा के दबावों से उम्र भर काम करने के बाद वह पाता है कि मनुष्य केलिए उसकी स्वतंत्रता और नियति अंतत: एक निजी सवाल है।एक दुविधा भरे महत्वांकाक्षी राजसेवक के मन का राज-समाज तथा निजी जीवन से जुडे तीखे

सवालों के टकराव से जूझना और उसके परिवार का बिखराव तो नाटक की त्रासदी का मूल है।नायक घर और बाहर इन दोनों मोर्चों में से किसी से भी अंतत: पलायन नहीं कर पाता।लोककथा के ढाँचे में ढला यह नाटक नन्ददुलारे नामक एक ब्राह्मण युवक और उसके माता- पिता, दादा, पत्नी रुक्मिणी और बेटे मिलिंद बेटी ममता की कहानी है। नाटक में राजनीति मूर्त रूप में नहीं आयी है। लेकिन उसके कई अमानवीय पहलुओं का आभास निरंतर मिलता रहता है। इसमें राज्य और कर्मचारी के रिश्ते, संवेदनशीलता, और महत्वाकांक्षा के संबन्ध तथा वरदान और अभिशाप के आंतरिक तंतु-जाल की त्रासदी भी चित्रित किया गया है। मृणाल पाण्डे जी ने इस नाटक में एक सामान्य आदमी किस प्रकार राजनीति की आग में राख होता है, इसका सही अंकन किया है।

1.2.2.3 काजर की कोठरी

मृणाल पाण्डे जी का तीसरा नाटक ‘काजर की कोठरी’ है।‘यहदेवकीनन्दन खत्री के उपन्यास का नाट्य़ - रूपांतर है। इस नाटक के माध्यम से लेखिका ने सामंती जीवन की पतनशीलता तथा मूल्यहीनता को स्पष्ट क़िया है।सरला नामक चरित्र को केंन्द्र में रखकर स्वार्थी प्रवृत्तियों के लालच में विवाह पूर्व संन्ध्या पर उसका अपहरण होता है।हरनंदन वेश्याओं की सहायता से उसे मुक्त करके उद्धार करता है, लेकिन स्वार्थपूर्ण दृष्टिकोण सामने रखकर।सरला के उद्धार की अपेक्षा उसे अपनी इज्जत और दहेज की रकम की चिंता रहती है।जिस प्रकार वह अपने इस कार्य में वेश्याओं की सहायता लेता है,उससे उसकी स्वार्थपरता स्पष्ट होती है।

1.2.2.4. चोर निकल के भागा

मृणालजी का चौथा नाटक 'चोर निकल के भागा' 1995 में लिखा गया।यह नाटक आज के उस शहरी वर्ग को संबोधित है,जो कॉमिक्स,टी.वी धारावाहिक, फिल्म ,माफिया, सुपरमैन, जेम्स बॉण्ड या इसी तरह के तस्करों जासूसों के कारनामों से भरी काल्पनिक दुनिया में डूबा हुआ है।यह नाटक इस चकाचौंध पूर्ण रंगीन दूनिया की पैरोडी है।नाटक की अंर्तवस्तु को उद्घाटित करने केलिए लेखिका ने प्रेम और सौंन्दर्य के प्रतिक ताजमहल की चोरी की कल्पना की है। वास्तव में यह एक फैंटसी है जिसके सहारे लेखिका ने उन मानव-मूल्यों पर मँडराते खतरों को रेखांकित किया है,जो मनुष्य जाति की तमाम कलात्मक उपलब्धियों को निरर्थक बना रहे हैं।

इस नाटक में मृणाल पाण्डे जी ने विडम्बनापूर्ण हास्य-स्थितियों रोंमाचक घटनाओं और प्रेम तथा सौंन्दर्य के प्रतिक ताजमहल की चोरी की कल्पना के ज़रिए मानव-मूल्यों और भारत की तमाम कलात्मक संस्कृति,साहित्य पर फैले हुए बाज़ारीकरण की भयंकर विपत्ति को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया है।बाज़ारवाद के कुप्रभाव को इसमें दर्शाया गया है।ताजमहल की चोरी की घटना के माध्यम से राजनीति की अवसरवादी और दायित्वहीन प्रशासन व्यवस्था की कृत्रिमता को उभार कर देखने का प्रयास भी नाटक में हुआ है।उसी प्रकार नाटककार ने राजनेताओं की उथली राजनैतिक समझ के साथ ही बुद्धिजीवियों पत्रकार तथा सरकारी मीडिया की भी पोल खोली है।

लोकनाट्य की शिल्प छवियाँ इस नाटक में प्रस्तुत हुई हैं।इसमें कला, संस्कृति से जुडे हुए मुद्धों को पेश किया गया है।वर्तमान भारत में

उपभोक्तावादी संस्कृति की सर्वग्रासी विसंगतियों का चित्रण नाटक का मुख्य उद्देश्य है।बीसवीं शताब्दी की अपसंस्कृति को भी इसमें प्रस्तुत किया गया है। हास्यावरण में गंभीर समस्या को दर्शाने की क्षमता इस नाटक की सफलता का प्रमाण है।यह समकालीन जीवन यथार्थ को प्रस्तुत करनेवाला सफल रंग नाटक है।

1.2.2.5 शर्मा जी की मुक्तिकथा

मृणालजी का पाँचवाँ नाटक है 'शर्मा जी की मुक्तिकथा'| यह एक व्यंग्य नाटक है जो हिन्दी के नये मौलिक नाटकों के रूप से उल्लेखनीय रचना है। इसमें संपादकों-पत्रकारों पर मालिकों द्वारा लगाये गये जबरदस्त अंकुश और उन पर किये जानेवाले अमानवीय अत्याचार का रूप दर्शाया गया है।विज्ञापनों के बीच कहीं-कहीं समाचार भी छापने की अनुमति देनेवाले मैनेजरों और उनके साथियों का विचार है कि सोचना, सहमत होना, पढ़ना, लिखना ही असली बीमारी है, ऐसे करनेवालों की सही जगह पागलखाना ही है।अनन्त नारायण शर्मा को पागलखाने के दस नबंर वार्ड में भेजा गया है क्योंकि जो लिखना जानते हुए भी कभी-कभी भूल जाते हैं कि किस तरह की चीज़ के बारे में नहीं लिखना चाहिए।

उसका जुर्म यह है कि पत्रिकाओं में नंगी औरत की तस्वीरों से लेकर धर्म गुरूओं तक के बारे में लेख छापने में असहमति हो गयी थी। मैनेजमेंट के मानसिक चिकित्सक के अनुसार इन्हें वजह-बेवजह विवाद पैदा करके बहुत उत्तेजित हो जाने और अंड-संड बकने और शिकायत करने की बीमारी है। पागलखाने में उसके कमरे में दूसरा साथी है- अवध नारायण शर्मा| यह संगीत

मास्टर है जो पूरी तरह पागल है और वह अपने को श्रीकृष्ण मानता है। वह इस कल्पना में बैठता है कि उसके आसपास भक्तगण, ग्वाल-बाल और गोपियाँ मौजूद हैं और वे कीर्तन कर रहे हैं। दोनों का संक्षिप्त नाम अ.न.शर्मा है। इस समानता का नाटकीय तथा रोचक उपयोग नाटककार ने नाटक के अंत में किया है,जहाँ भ्रमवश सवालों के बदल जाने से दोनों को स्वतंत्र करार दिया जाता है।

मृणालजी काफी समय से पत्रकारिता से जुडी हुई हैं। इसलिए पत्रकारिता के क्षेत्र में व्याप्त क्रूरताओं ,विसंगतियों एवं विडम्बनाओं को अच्छी तरह देखने,समझने, जानने और शायद किसी हद तक भोगने के कारण ‘शर्मा जी की मुक्तिकथा’ के अनुभव में इतनी प्रखरता, कटुवाहट और करूणा आ सकी है। मृणाल पाण्डे जी ने नाटक में बडी कुशलता से अखबार के मालिकों और प्रबन्धकों की निरंकुशता के सामने एक संवेदनशील पत्रकार की विवशता और त्रासदी को मार्मिक ढ़ंग से रेखांकित किया है। सत्ता की असहमति या विरोध के परिणामों को दिखानेवाला यह नाटक प्रांसगिक एंव अर्थपूर्ण है।

1.2.2.6. रेडियो नाटक

मृणालजी ने दो रेडियो नाटकों का भी सृजन किया है। उसमें पहला है ‘धीरे-धीरे रे मना’ और दूसरा है ‘सुपरमैन की वापसी’ ।आधुनिक समाज में होने वाली विसंगतियों का चित्रण इसमें निहित है। लड़के और लड़कियों को लेकर जो भेद-भाव समाज करता आ रहा है उसको भी इसमें दर्शाया गया है। इसी

प्रकार सुपरमैन की वापसी' में बाजारीकरण से होने वाली विकृतियों का चित्रण किया गया है।

1.2.3. उपन्यासकार मृणाल पाण्डे

हिन्दी उपन्यास के उद्भव से लेकर आज तक कई सशक्त उपन्यासकार सृजनरत रहे हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल की प्रसिद्ध लेखिका मृणाल पाण्डे का स्थान सविशेष रहा है। मृणाल पाण्डे ने अपने साहित्य में आधुनिक परिवेश में अपनी अस्मिता को तलाशती नारी का चित्रण किया है। साथ ही नारी और पुरूष के संबन्धों को नये रूप से देखने-परखने की कोशिश भी उन्होंने की है। आधुनिक नारी की नियति, भटकाव, यंत्रणा, जिजिविषा आदि सभी विषयों का खुले आम चित्रण इनके उपन्यासों में पाया जाता है। नारी जीवन में संघर्ष के बाद जो स्वतंत्रता आई है और नये मूल्यों को आत्मसाथ करने और पुराने मूल्यों को अस्वीकार या नकार करने केलिए आज की नारी तैयार है। ऐसा ही परिवर्तित और नारी अस्मिता का रूप मृणाल पाण्डे के साहित्य में अभिव्यक्त हुआ हैं।

उनके प्रमुख उपन्यास हैं ”विरूद्ध(1977)”,”पटरंगपुर पुराण(1983)” और “रास्तों पर भटकते हुए(2000)”।

1.2.3.1. विरुद्ध(1977)

मृणाल पाण्डे का पहला उपन्यास 'विरूद्ध'1977 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में नारी मन की कोमल भावनाओं का मार्मिक अंकन किया गया है। आज की आधुनिक नारी का यथार्थ चित्रांकन इस उपन्यास में हुआ है। 'विरूद्ध'

उपन्यास एक उच्च शिक्षित तथा उच्च वर्गीय स्वाभिमानी नवयुवती के मानसिक घात-प्रतिघातों की अत्यंत मार्मिक कथा पेश करता है। इस उपन्यास की नायिका रजनी कांवेंट स्कूल में टीचर है। उदय के साथ उसका प्रेम विवाह होता है। पति उदय ऊँचे पद पर है। रजनी को सारी सुख-सुविधाएँ उपलब्ध हैं| फिर भी वह संतुष्ट नहीं ।वह पति उदय को अपने साथ व्यवस्थित नहीं कर पाती।

"विरूद्ध" उपन्यास की नायिका रजनी परंपरागत स्वरूप से अपने को अलग कर लेना चाहती है। उस प्रक्रिया में वह न समाज में परिवर्तन ला पाती है न अपनी स्थिति में। वह सिर्फ **विरूद्ध** हो जाती है। इसमें नारी जीवन को दर्शाने की कोशिश लेखिका ने की है। मृणालजी का यह एक चरित्रप्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने नायिका रजनी के मानसिक द्वन्द्व को उभारने का प्रयास किया है। एक स्त्री के वैवाहिक जीवन की समस्त गतिविधियों का प्रामाणिक अंकन 'विरूद्ध' को एक दस्तावेज़ी उपन्यास साबित करता है।

1.2.3.2. पटरंगपुर पुराण(1983)

मृणालजी का दूसरा उपन्यास 'पटरंगपुर पुराण' 1983 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास एक पहाडी कस्बे की गाथा प्रस्तुत करता है। पर्वतीय अँचल कुमायूँ-ग़ढ़वाल का पहाडी क्षेत्र है। इसके केन्द्र में पटरंगपुर नाम का गाँव है। पटरंगपुर पुराण ग्यारह पीढियों की कहानी है। ग्यारह पीढियों की कहानी है। ग्यारह पीढियों में पहाडी जीवन में होनेवाले परिवर्तन का चित्रण इसमें है। गाँव के सभी क्षेत्र में परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन से केवल जीवन शैली

नहीं,बल्कि आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थितियाँ भी प्रभावित होती हैं। सरकारी नीतियों और विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के कारण पहाडी जीवन परिष्कृत एवं समृद्ध होता है।

इस उपन्यास में पहाडी जीवन और उसमें हो रहे परिवर्तन का सूक्ष्म चित्रण प्रस्तुत करने में लेखिका सक्षम हुई है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु को छ: पर्वों में विभाजित किया है। इसमें त्रेतायुग से मध्य युग तक और अंग्रेजी राज से होकर बीसवीं शताब्दी तक का सफर प्रस्तुत किया गया है। यह सफर स्त्रियों की स्मृति और कल्पना में तय होता है और हमें पटरंगपुर की और हमारे वक्त की एक बिलकुल अनदेखी तस्वीर भी हासिल होती है।

मृणाल पाण्डे जी ने उपन्यास को आधुनिक विडंबना के साथ जोडकर हमारी मौजूदा सामाजिक राजनीतिक और व्यक्तिगत त्रासदी को नया अर्थ प्रधान किया है।उपन्यास का केन्द्र पात्र आमा है। इसमें आमा के परिवार के फलने-फूलने और उजड़ने के चित्र के ज़रिए भारतीय समाज के फलने-फूलने और उजडने की तस्वीर बेखूबी से उभारी गयी है। पटरंगपुर पुराण की किस्सा दादी-नानी के सुनाये किस्से - कहानी और दिलचस्प बातों की तरह आगे बढ़ता है। पहाड का पूरा जीवन अपनी ठेठ लोक संस्कृति के साथ आँखों के आगे साकार उठता है। आमा की गौरवपूर्ण ज़िन्दगी इसमें है, साथ ही इसमें खानदान की कई पीढियों की कहानी के रूप में पहाड का एक पूरा गतिमान चित्र है।

उपन्यास की उल्लेखनीय विशेषता इसकी भाषा है। आँचलिक भाषा और मुहावरों का प्रयोग इसमें किया गया है। इसीलिए पटरंगपुराण एक जीवंत तथा प्रबुद्ध पाठकों केलिए पठनीय सफल कृति है।

1.2.3.3. रास्तों पर भटकते हुए

मृणालजी का तीसरा उपन्यास "**रास्तों पर भटकते हुए**" 2000 में प्रकाशित हुआ। इसमें भटके हुए लोगों की ही सशक्त गाथा है। भष्टाचार एवं मूल्यहीनता दोनों आज के जीवन का पर्याय बन गये हैं। सभी क्षेत्रों में अब भष्टाचार व्याप्त हुआ है। यह उपन्यास आधुनिक समाज में व्याप्त, विसंगतियों का आईना है। उपन्यास में भष्टाचार, वेश्यावृत्ति, स्वार्थलोलुपता, अवसरवादिता और झूठ को सच कहने - करने में लगे असामाजिक तत्व का उद्घाटन किया गया है। लेखिका का मुख्य उद्देश्य आजकल की भ्रष्ट राजनीति की पोल खोलने और मनुष्य की समस्याओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत करना रहा है।

'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास की नायिका मंजरी अकेलेपन, विवाह विच्छेदन, माँ की मृत्यु एवं संबन्धों के ठंडेपन से पीडित हुई है। वह पति से तलाक लेकर अकेली ज़िन्दगी बिता रही थी। उस समय उसके जीवन में बंटी नामक लड़के का प्रवेश होता है। उसके भीतर की हिमवारिधि पिघलने लगती है। किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति की रहस्यमयी रखैल का यह मासूम गर्वीला लड़का ऊंगली पकडकर मंजरी को अपने साथ उन रास्तों पर भटकता है,जहाँ पैर रखने से वह कतराती रही है। पहले बंटी और उसके बाद उसकी माँ की नृशंस

हत्या और राजधानी के सुरक्षातंत्र की रहस्यमय चुप्पी मंजरी को इन हत्याओं की तह में जाने को बाध्य करती है। मंजरी शिक्षित एंव जागरूक स्त्री होने के कारण पडोस में रहनेवाले बंटी और फिर उसकी माँ पार्वती की हत्या के बाद अपने परिचित मित्र पत्रकारों के पास सहायता केलिए जाती है, किंतु वह उसे सहायता देने के बदले उसके मन में भय पैदा करता है।

पहले मंजरी और पार्वती उसके बेटे के हत्यारे को सज़ा दिलाने केलिए कई प्रकार के प्रयास करती हैं, किंतु वे प्रत्येक बार असफल होती हैं । सामाजिक एवं राजनीतिक अराजकता का उदाहरण इसमें उद्घाटित हुआ है। राजकीय भ्रष्टनीतियों को खुलकर सामने लाने का प्रयास साफ-साफ इसमें दिखाई देता है। अनजान रास्तों पर भटकती हुई मंजरी अंत में लक्ष्य तक पहूँचती है। किंतु वह पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं होती है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से तात्कालीन समाज में होनेवाली घटनाओं का जीता-जागता चित्रण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। लेखिका ने इसमें उच्चवर्ग और निम्न वर्ग की सभी ऊँचाइयों को तथा गहराइयों को बडे पैमाने में अंकित किया है। पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता है। लेखिका ने भाषा को कलात्मक रूप प्रधान किया है। कथ्य और शिल्प की दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण है।

1.2.4. आलोचक मृणाल पाण्डे

स्वतंत्रता के पश्चात तथा आधुनिकीकरण के फलस्वरूप महिला आज जागृत है और समाज के द्वारा शोषण का प्रतिकार करने में सक्षम है, जिसे

लेखिकाओं ने अपने आलोचनात्मक आलेखों में अभिव्यक्त किया है। आज की नारी शिक्षित होने के कारण अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ खुला विरोध करती है। रूढियों और प्रचीन संस्कारों में दबती नारी आज अच्छे जीवन को समझ गयी है। सदियों से पुरुष प्रधान समाज में रहकर स्त्री अपने तेवर लेखन में व्यक्त करने का प्रयास किया है।

स्त्री को पहले से ही समाज में दबाकर रखा गया है। उसकी आवाज़ यदि उठी तो घर की चारादीवारी की अनगूँज में खो जाती थी। फिर भी लेखिकाएँ हमारे सामने आयीं, जिनका साहित्य हम बार-बार पढते हैं।उनकी कृतियाँ मनोरंजन के साथ शिक्षा प्रदान करती हैं। मृणालजी स्त्री-विमर्श संबन्धी प्रमुख पुस्तकें निम्नलिखित हैं-

"**स्त्री :देह की राजनीति से देश की राजनीति तक** (1987)", "**परिधि पर स्त्री** (1996)", "**ओ उब्बीरी** (2003)", "**जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं** (2006)"और "**स्त्री:लम्बा सफर** (2012)"।

1.2.4.1. स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक

'स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक' का प्रकाशन 1987 में हुआ| स्त्री-पुरुष परस्पर पूरक होकर भी दो स्वतंत्र इकाईयाँ हैं, दोनों का स्वतंत्र अस्तित्व है,फिर दोनों की स्वतंत्र अस्मिता क्यों नहीं ? इसी सवाल को मुख्यतया इस पुस्तक में उठाया गया है। इस दृष्टि से मृणाल जी के रचनाकर्म को उत्कृष्ट माना जाना चाहिए। उनको साहित्य में नारी के संघर्ष का यथार्थ चित्रण हुआ है। वे जानती हैं कि आज भी समाज में नारी के जीने की

एक विशेष नियमावली है तथा उसके निर्धीरित दायरे हैं जिनका उल्लंघन करने पर वह प्रताडित होती है, तिरस्कृत होती है।

हमारे उपनिषदों-पुराणों के समय से स्त्रियों को लेकर जिन नियमों और मर्यादाओं की रचना हुई , उनके द्वारा स्त्री की स्वाधीनता और आत्म निर्भरता के खिलाफ षडयंत्र रचा गया और भारतीय संविधान के लागू होने के बाद भी व्यावहारिक जीवन में स्त्रियों को कई जटिलताओं और अंतविरोधों से जूझना पड रहा है-प्रस्तुत रचना में एक स्त्री के नज़रिए से उन सबकी जाँच-पड़ताल समसमायिक संदर्भों में की गयी है।

एक नागरिक और एक कामगार के रूप में स्त्रियाँ पाती हैं कि स्त्रियों को कमज़ोर और पराधीन बनाने की कोशिशें पहले उनके ही घर-आँगनों से शुरू होती हैं और दहलीज लाँघने के बाद कार्यक्षेत्र में वही कोशिशें उनके आगे ताकतवर और सामूहिक पुरूष-एकाधिकार की शक्ल धारण करके मंडराती रहती हैं।एक ओरर स्त्री में 'पराधीन' और 'सहनशील' बनने की महत्ता का बीज बचपन से रोपा जाता है और दूसरी ओर उसकी पराधीनता और सहनशीलता की मार्फत उसकी शक्ति का पूरा दोहन और नियोजन खुद उसी के और स्त्री जाति के विरोध में किया जाता है।

दिहाडी पर काम करनेवाली तमाम कामगार स्त्रियों को आज भी पुरूषों के मुकाबले कम मज़दूरी मिलती है जबकि कार्य के समय व स्वभाव में कोई फर्क नहीं होता।उसमें जैविक,सांस्कृतिक और आर्थिक सन्दर्भों में स्त्री की शक्ति और शक्तिहीनता का विवेचन हुआ है।यह स्त्री शोषण की करुण कथा मात्र नहीं, बल्कि उसके कारणों की जड में जाकर की गयी भारतीय सामाजिक-

आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था का सटीक विश्लेषण भी है।

मृणालजी ने तेईस लेखों के ज़रिए स्त्रियों पर हो रहे शोषण के विविध आयामों को दर्शाया है। स्त्री के प्रति समाज में होने वाले दृष्टिकोण के व्यक्त करने का प्रयास भी इन आलेखों में हुआ है। स्वावलंबन स्त्री में स्वाभिमान पैदा करता है और स्वाभिमान उन्हें चेतना से संपन्न करता है।इससे उसमें सामर्थ आ जाती है। स्त्री को अपने ऊपर होनेवाले शोषण को सहने के बदले अपने अधिकार को हासिल करने का आह्वान भी लेखिका प्रस्तुत रचना के माध्यम से प्रधान करती है।

1.2.4.2. परिधि पर स्त्री

'परिधि पर स्त्री' पुस्तक का प्रकाशन 1996 में हुआ। इसमें उन्होंने स्त्री विमर्श संबन्धी अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया है।इक्कीसवीं सदी के इस दौर में स्त्रियों के प्रति दिन-ब-दिन शोषण बढता जा रहा है। इस रचना के माध्यम से स्त्री को सबल बनाने का कार्य मृणालजी ने किया है।

मनुष्य की परंपरा को सुरक्षित रखने में स्त्री की केंन्द्रीय भूमिका होने के बावजूद पुरूष आज भी समाज के केन्द्र में है और स्त्री तो समाज की परिधि पर| इसी सामाजिक विसंगति को मृणालजी की पुस्तक 'परिधि पर स्त्री' में उजागर किया गया है। इसमें कुल बीस लेख हैं।पितृसत्तात्मक समाज में नारी की अस्मिता को पहचानकार उसे पाठकों के सामने अभिव्यक्त करने की कोशिश इन लेखों में जाहिर है। लेखिका का उद्देश्य पुरूषों को दोषी ठहराना नहीं, बल्कि नारी को अपने शोषण के बारे में अवगत कराकर अपने अधिकार के प्रति लड़ने का आह्वान देना भी रहा है। इसमें एक लेख है '**हज़ार बरस की**

असमानता क्यों'। इस लेख में राजकीय भागीदारी की स्थितियों का चित्रण किया गया है। हजारों वर्षों से असमानता झेलकर जीनेवाली नारियों की विभिन्न स्थितियों का चित्रण इसमें हुआ है।

लेखिका इसमें सच्चे नारीवाद की व्याख्या भी प्रस्तुत करती है। "नारीवाद कतई स्त्रियों को बृहत्तर समाज से अलग-थलग रखकर देखते और हर क्षेत्र में पुरूषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नहीं। यह तो एक समग्र दृष्टिकोण है,जो संवेदनशील नागरिकों में पहले शोषित और प्रवंचित स्त्रियों की स्थिति के प्रति सहानुभूति और मानवीय दृष्टिकोण विकसित करके उसके उजास में उन्हें अपने पूरे समाज के शोषित और प्रवंचित तबकों को समझने की क्षमता देता है। साथ ही उनके प्रति एक तरह की सदयता तथा कर्मठ दायित्वबोध भी जगाता है।"[5]

मृणालजी की स्त्री विमर्शक दृष्टि अत्यंत विशाल है। निम्न वर्ग की स्त्रियों से लेकर उच्चवर्ग की स्त्रियों तक की समस्याओं पर चिंतन उन्होंने किया है। नारी के प्रति होनेवाले अत्याचार और अन्याय को समझाने का कार्य मात्र नहीं,उससे बदल लेने केलिए कई उपायों को भी उन्होंने प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत लेख के ज़रिए मृणालजी ने स्त्री को हाशिए से मुख्यधारा की ओर लाने का प्रयास किया है।

1.2.4.3 ओ उब्बीरी

स्त्री विमर्श संबन्धी अगली पुस्तक है 'ओ उब्बीरी'। इसका प्रकाशन 2003 में हुआ। इसमें मृणालजी ने स्त्री के स्वास्थ्य संम्बन्धी विषय पर चर्चा की है। भारत में बारह में से ग्यारह गर्भपात गैरकानूनी होते हैं ; सन् 2001 की

जनगणना के अनुसार देश के सबसे शिक्षित और संपन्न राज्यों में,प्रति हज़ार पुरूषों के मुकाबले स्त्रियों की संख्या में,खासकर 0-5 के आयु वर्ग में,काफी गिरावट आयी है ;और भारतीय परंपराएँ जहाँ प्रजनन और मातृत्व को पवित्र करार देती हैं,वहीं भारत सरकार नीतियाँ और स्वास्थ्य सेवाओं का जो प्रजनन को नियंत्रित करने पर है।

भारतीय स्त्री के स्वास्थ्य के बारे में जानने केलिए जब लेखिका निकली तब उनको भारत की सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली और प्रजनन स्वास्थ्य के इतिहास से गुज़रना पडा। तब उनके सामने एक व्यापक यथार्थ खुलकर आया। स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं और स्वास्थ्यकर्मियों से बातचीत करने आयी महिलाओं से उनके अपने जीवन और शरीर के बारे में सुनकर उन्हें कुछ बडी वास्तविकताओं का बोध हुआ।

मृणालजी ने इस में जनसंख्या नीति और जनकल्याण में राज्य की भूमिका जैसे मुद्दों पर भी विचार किया है। वे स्वयंसेवी संगठनों में अपना गहन विश्वास व्यक्त करती हैं, जिनकी कोशिशों के चलते स्त्रियाँ अपने जीवन की अँधेरी गलियों और खामोशियों से बाहर आ रही हैं।

1.2.4.4. जहाँ औरतों गढ़ी जाती हैं

मृणालजी की स्त्री विषयक अगली पुस्तक है 'जहाँ औरतें गढ़ी जाती है'। इसका प्रकाशन 2006 में हुआ। इसमें भी वे बडे फलक पर भारतीय समाज में स्त्री चिंता करती दिखाई देती हैं । मृणालजी अपने लेखन में समय तथा समाज के गंभीर मसलों को लगातार उठाती रही हैं। भारतीय स्त्रियों के संघर्ष और जिजिविषा के भी वे व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखती हैं । यही कारण है कि स्त्री

प्रश्न के प्रति गहरी प्रतिबद्धता के बावजूद उनका लेखन स्त्री-विमर्श के संकीर्ण दायरे में सिमटा हुआ नहीं है। इसमें समय-समय पर लिखी गयी उनकी टिप्पणियाँ और आलेख संकलित हैं।

लेखिका ने राजनीति में ‘महिला सशक्तिकरण’ और पंचायती राज में महिला भागीदारी जैसे बडे सवालों के साथ-साथ कई छोटे-छोटे मसलों और प्रश्नों को भी उठाया है,जिनमें पुरुषवादी समाज की नृशंसता में फाँसी नारी की छटपटाहटों के कई रूप दिखलाई देते हैं।

मृणालजी की दृष्टि में नारीवादी आन्दोलन की सबसे बडी विडंबना यह है कि सारे शोर–शराबों के बीच स्त्री उत्पाद में बदल रही है। सौंन्दर्य प्रतियोगिताओं का देह-प्रदर्शन और उन्मुक्त भोगवाद स्त्री को सामाजिक सरोकारों एवं दायित्व से काट रहे हैं । वे लिखती हैं- “हमारे ‘उदित भारत’ का मध्यवर्गीय समाज और उसकी महिलाएँ आत्म केन्द्रीत और बृहत्तर सामाजिक सच्चाइयों की ओर जिस तेजी से लापरवाह होती जा रही हैं,वह स्वस्थ नहीं है।आज की प्रौढ हो चली महिला नारीवादियों ने जब स्त्रियों को अपनी देह और अपने जीवन पर अधिकार दिलाने केलिए आन्दोलन किया था तो इस इच्छा से नहीं की उस आज़ादी का विलय ‘काँटा लगा’ गर्ल की आक्रामक उच्छृंखलता और ‘सैंया दिल में अनारे’ की हंटरवाद के पुरुषों के प्रति हिकारत स्वामित्व भाव में हो जाए|“[6]

1.2.5. अन्य विधाएँ:

कहानी , उपन्यास , नाटक, स्त्री विमर्श के अलावा हिंदी

गद्य साहित्य की विधाओं पर सफलतापूर्वक कलम चलाई है |उसका विवरण नीचे दिया जाएगा-

1.2.5.1. पत्रकार मृणाल पाण्डे

अंग्रेजी में पत्रकारिता को जर्नालिज़्म (JOURNALISM) कहा जाता है। जर्नालिज़्म शब्द 'जर्नल' से निकला है जिसका शब्दिक अर्थ है 'दैनिक' प्रतिदिन की गतिविधियों का विवरण 'जर्नल' में रहता है। पत्रकारिता का प्रमुख उद्देश्य संपूर्ण समाज में नव-संचार, सजीवता, जागरण, नवस्फूर्ती, सक्रियता और गतिमयता के संदेश का प्रचार और प्रसार करना है।

पत्रकारिता के उद्देश्यों के बारे में राष्टपिता महात्म गाँधी ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये थे:-" पत्रकारिता का पहला उद्देश्य जनता की इच्छाओं और विचारों को समझना तथा उन्हें व्यक्त करना है। दूसरा उद्धेश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जागृत करने तीसरा उद्धेश्य सार्वजनिक दोषों निर्भीकतापूर्वक प्रकट करना है ।"[6] समाज को बदलना पत्रकारिता का ही उत्तरदायित्व है।

पत्रकारिता एक अर्थ में अतीत की व्याख्याता वर्तमान की कहानी और भविष्य का निर्माता है। मृणालजी जाने-माने पत्रकार तथा हिन्दी की वरिष्ठ लेखिका हैं।वे कई वर्ष विभिन्न विश्व-विद्यालयों में अध्यापन के बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में आई। उन्होंने 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'वामा' तथा 'दैनिक हिन्दुस्तान' की कार्यकारी संपादक रही,उन्होंने स्टार यूथ केलिए हिन्दी

बुलेटिन का संपादन किया। पत्रकारिता के क्षेत्र में या संपादक के रूप में उनकी महत्वपूर्ण रचनाएँ है:- 'बंद गलियों के विरुद्ध (2001)', 'बोलता लिहाफ (2007)' और 'स्त्री: लम्बा सफर(2012)'।

1.2.5.1 बंद गलियों के विरूद्ध

'बद गलियों के विरुद्ध' रचना का प्रकाशन 2001 में हुआ है।मृणालजी ने 'बद गलियों के विरुद्द' साहित्य में पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया है। क्षमा शर्मा और मृणालजी ने इंडियन विमेंस प्रेस कोर के ज़रिए कई लेखिकाओं के आलेखों का संपादन किया है।इन आलेखों में लेखिका का एक मात्र लेख है जिसका शीर्षक है **'नर्क राहें माँगती हैं नए मुहावरे'।**

लेखिका ने 'बंद गलियों के विरुद्ध' में अलग-अलग विषय को लेकर सामायिक समय की समस्याओं का चित्रण किया है।इस में उन्होंने यह देखने का प्रयास किया है कि भारतीय लेखिकाएँ क्या लिखती हैं? उनका कथानक कैसे होते हैं ? समीक्षक - लेखिकाएँ साहित्य किस मुद्दे पर समीक्षा करती हैं ? मृनाल्जी का कहना है कि यदि आप महिला हैं तो आपके साहित्य की समीक्षा नारीवादी या फिर नारीवाद- विरोध के आधार पर कर सकती हैं। मृणालजी के अनुसार "नारी लेखन पर हमें एक अन्य आक्षेप यह सुनने-पढ़ने को मिलता रहा है कि इस पूरे लेखन पर पश्चिमी तर्ज के नारीवाद का गहरा असर है।उनके अनुसार साहित्य समीक्षित होना अनिवार्य है। कथानक नया हो तो उसकी समीक्षा भी नए मुहावरों से की जानी चाहिए।

1.2.5.2 बोलता लिहाफ

'बोलता लिहाफ' का प्रकाशन 2007 में हुआ है। मृणालजी और विष्णु नागर दोनों के संपादकत्व में यह कृति प्रकाशित हुई है। पत्रकार के रूप में विख्यात मृणालजी अच्छी संपादिका भी रही हैं।इस संग्रह में हिन्दी के श्रेष्ठ कथाकारों द्वारा लोकप्रिय मासिक 'कादंम्बिनी' के 'कथा प्रतिमान' स्तम्भ केलिए चयनित विश्व-साहित्य की श्रेष्ठ कहानियाँ संकलित हैं।चयनकर्ता कथाकारों ने इसमें अपनी पसंद के कारणों का ज़िक्र करते हुए इन कहानियों की विशिष्टताओं का भी वर्णन किया है।

विभिन्न कालखंण्डों में रची गयी कहानियाँ अपनी रचनात्मक विशिष्टता केलिए चर्चित रही हैं। इस संग्रह में शामिल कथाकारों की कहानी-कला का मर्म मानव-जीवन के मूल्यों को लेकर उनकी सतत दुविधा और विस्मय का भाव है जो हमारे मन में मानव जीवन की असारता या क्षुद्रता के प्रति खीज़ नहीं उपजाते बल्कि एक गहरी हलचल मचाये रहते हैं । इसमें कुल सोलह कहानियाँ हैं।ये इस प्रकार है 'सांप'(जान स्टीन बैक),'बोलता लिहाफ' (भीष्म साहनी),'टिकटों का संग्रह' (कारेल चापेक).'उसने कहा था'(चन्द्रधर शर्मा गुलेरी), 'अमृतसर आ गया है' (भीष्म साहनी),'भेडिये' (भुवनेश्वर),'रूमाल'(अरविंद बिन्दु), 'घोडी की हाय'(यशपाल), 'आत्मा की मुक्ति केलिए' (राबर्टों ब्राको),'पहला मेहनताना'(इज़ाक बेबाल), जडें (जीरो मूका), 'मनुष्य का बेटा'(प्रीतम सिन्हा पंछी), दो बाँके (भगवती शरण वर्मा), 'गुप्त इतिहास' (बेन ओकरी),'वांका' (एंटन चेखव), 'आदमी' (ईश्वर)।

विश्व के सभी बडे कहानीकार अपने निजी और राष्टीय जीवन में

भारी उतार-चढ़ाव झेल चुके हैं। भीष्म साहनी और यशपाल ने विभाजन की त्रासदी को करीब से जिया था, तो ओकरी, चपेक तथा स्टीन बैक ने भी अकाल, तानाशाही और विस्थापन का दर्द झेला है। गुलेरी विश्वयुद्ध के चरमदीद गवाह रहे हैं, तो विद्यासागर नौटियाल भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के उत्थान-पतन चरम क्षणों के गवाही हैं। इसीलिए उन सभी की कहानियाँ मानव जीवन के मूल्यों को लेकर लिखी गयी हैं, जो सचमुच साहित्य महानतम उपलब्धियाँ हैं।

विश्व के समर्थ कहानीकारों और उनकी विशिष्ट कथाकृतियों को सुलभ करने का प्रयास लेखिका ने किया है। समकालीन सदर्भों में भी इन कहानियों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से भी ये कहानियाँ श्रेष्ठ हैं। समाज में होनेवाले भ्रष्टाचार और अनीतियों को उजागर करना और पाठकों को वरिष्ठ कथा लेखकों की अच्चेई कहानियों का परिचय प्रदान करना आदि इन रचनाओं का मुख्य उद्देश्य है।

1.2.5.3. स्त्री:लंबा सफर

'स्त्री :लंबा सफर' रचना का प्रकाशन 2012 में हुआ है। मृणालजी अनेक पत्र-पत्रिकाओं की संपादिका रही हैं। पत्रकार के रूप में उनकी पहचान खासी है। मृणालजी ने अनेक पत्रिकाओं में वैचारिक लेख भी लिखे हैं।तत्कालीन समाज में घटित समस्याओं को दूसरे के सामने उभारने की कोशिश ही इन वैचारिक लेखों में उन्होंने की है। मृणालजी ने स्त्री विषयक संबन्धी कई पुस्तकें भी लिखी हैं।

मृणालजी की रचनाओं का केन्द्र बिन्दु 'स्त्री' है। नारी अस्मिता को पहचानने की कोशिश उनकी रचनाओं में जाहिर है। इस संकलन में 'हिन्दुस्तान' और 'कादम्बिनी' में नियमित रूप से छपे उन आलेखों को समेटा गया है, जो अपने वक्त में अपने देश और समाज में स्त्री की स्थिति की पडताल का प्रयास करते हैं।मृणालजी का कहना है कि स्त्री की मुक्ति कहने से नहीं होती,उस केलिए संघर्ष करना जरूरी है।

इक्कसवीं सदी में स्त्री-मुक्ति से सवाल को उसके सभी पहलुओं से देखने समझने केलिए संसद से सडक,सडक से घर और घर से दफ्तर तक का पूरा पट चित्र हमें घटना- दर - घटना पढ़ना होगा। मृणालजी ने इसमें अपने इक्कतीस वैचारिक लेखों का संकलन किया है। उन्होंने 'स्त्री:लंबा सफर' नामक में स्त्रियों की लंबी यात्रा का ब्योरा प्रस्तुत किया है। सभी स्तर पर स्त्रियों को झेलनी पडी कष्टताओं को दिखकर और उसमें से ऊर्जा ग्रहण कर आगे की ओर सफर करने का आह्वान लेखिका ने किया है। समय-समय पर समाज में होने वाले परिवर्तनों का सच्चा चित्र प्रस्तुत करने में लेखिका सक्षम हुई हैं । विधायिका से लेकर सभी स्तरों पर स्त्रियों की जो भागीदारी हैं उन्होंने उसकी प्रशंसा की है। अपने अधिकार के प्रति सजग होकर अपने पैरों पर खडा करने का सन्देश लेखिका ने उपस्थित किया है।

1.2.6 अनूदित रचनाएँ

मृणाल पाण्डे एक ऐसी सशक्त लेखिका हैं जिन्होंने सभी विधाओं में कलम चलायी है। अंग्रेज़ी और हिन्दी भाषा में उन्होंने अपना लेखन ज़ारी

किया। उन्होंने तत्कालीन समाज में होने वाले अन्याय और अत्याचारों के प्रति पाठकों का ध्यान खींचने का सफल कार्य किया है। उन्होंने मुख्य रूप से नारी को जागरूक बनाने और समाज में उनके दायित्व को सही ढंग से समझाने की कोशिश की है। साथ ही साथ अपने प्रति होने वाले शोषण का खुला विरोध करने का आह्वान भी उन्होंने किया है। मृणाल पाण्डेजी स्त्री अस्मिता केलिए अपनी कलम से संघर्ष करने वालों में अग्रणी हैं। उन्होंने स्त्री स्वातंत्र्य के प्रश्न को बडी सूक्षमता से रेखांकित किया है। सामाजिक यथार्थवाद का सबसे अधिक प्रयोग मृणालजी के उपन्यासों में हुआ है। उन्होंने अंग्रेजी में जो रचनायें की हैं उनका अनुवाद भी कुछ अनुवादकों के द्वारा हिन्दी में हुआ है। वे रचनाएँ हैं :- 'देवी(अनुवादक-मधु.बी.जोशी,1999)', 'हमको दियो परदेश (अनुवादक – मधु.बी.जोशी,2001)', अपनी गवाही(अनुवादक-अरविन्द मोहन 2003)।'

1.2.6.1. देवी

'देवी' मृणालजी का उपन्यास - रिर्पोताज है,जिसकी रचना उन्होंने अंग्रेज़ी में की। इसमें स्त्रियों की समयातीत गाथाएँ प्रस्तुत हैं।अंग्रेज़ी से हिन्दी में इसका अनुवाद मधु बी जोशी ने किया है। इसका प्रकाशन 1999 में हुआ है।'स्त्रियाँ: समस्ता: सकला जगत्सु तव देवी रूपा:.....' संपूर्ण सृष्टि की महिलाएँ देवी के ही विभिन्न रूप हैं। स्त्रियों के विभिन्न स्वरूपों की डोर पकडकर आदिशक्ति के मूल स्वरूप को समझना और शक्ति के नाना रूपों के आईने में आज से लेकर आर्षकालीन समाज की स्त्रियों की ढेरों लोक कथाओं महागाथाओं ,आख्यानों को नये सिरे से व्याख्यायित करने का प्रयास इस रचना में हुआ है। यह न विशुद्ध कथा परक उपन्यास है न कपोलकल्पित मिथकों की लीला और न ही

यह एक वैज्ञानिक इतिहास ।इसमें युयुत्सु देवी, शैल पुत्री, सरस्वती, लक्ष्मी, भूदेवी जैसी देवियों के किस्से पेश किये गये हैं। जीवन की ही तरह देवी की वे कथायें भी कभी कालातित गहराइयों को मापती हैं तो कभी समकालीन इतिहास में कदमताल करती हैं ।

मृणालजी ने देवी की भूमिका में लिखा है कि देवियों से स्त्रियों का रिश्ता कहीं न कहीं देवियों - औरतों से बहुत सुपरिचित बहुत विश्वसनिय और अपनी ही सरीकी प्रतीत होती हैं।अपने झनझनाते आक्रोशों में, अपनी स्वार्थ पूर्ण गुटबाजी में ,अपने वैवाहिक जीवन के द्वन्द्वात्मक भावावेश भरे क्षणों में जो कुछ आम स्त्री में है, देवियों की गाथाओं में भी मौजूद है।लेखिका ने आज की स्त्री को देवी से जोडा है।

मृणालजी ने 'देवी' उपन्यास के माध्यम से बताया है कि देवियाँ- ये वे तमाम स्त्रियाँ हैं, जिन्हें देवता भी नियंत्रित करने में असमर्थ हैं-इन्हीं का प्रताप है कि हर तरह की भवबाधा और नकारात्मक दबावों के बावजूद युग-युगों से पूरी स्त्री जाति जीवन की जटिलताओं से सफलतापूर्वक जूझ गयी। स्त्रियाँ क्षमा कर पायी,इसीलिए हम हैं सभ्यताएँ हैं, पृथ्वी है।

1.2.6.2. हमको दियो परदेश

मृणालजी का अंग्रेज़ी में लिखित दूसरा उपन्यास है हमको दियो परदेश |अंग्रेज़ी से हिन्दी में इसका अनुवाद मधु बी जोशी ने किया है। इसका प्रकाशन 2001में हुआ है।यह उपन्यास मर्दवादी व्यवस्था के मकड जाल में फंसी स्त्री की नियति को अंकित करता है।

प्रस्तुत उपन्यास टीनू नामक सात-आठ वर्षीय बच्ची की आँख से संसार को देखने का प्रयास है।जहाँ अपने आसपास के माहौल पर अपनी उथली समझ के साथ रनिंग कमेंट्री करते हुए अंतत: वह पाती है कि बेटी होना और वह भी बेटी की बेटी होना समाज में उसके लिए कोई सुखकर नहीं है। बच्ची की निरपेक्ष नज़र उभरा घर और संबन्धों का, समाज और व्यक्ति का परिवेश जिन जाने-चिन्हें मगर नज़रअंदाज कर दिये जाने लायक समझे जानेवाले और जरूरी प्रसंगों का स्मरण करता है, वह समाज की कई अंदरूनी परतों का पर्दाफाश करते हुए पितृसत्तत्मक व्यवस्था को कटघरे में खडाकर देता है। इस उपन्यास का समाज हमारे रचा-बसा वह समाज है जहाँ बेटियाँ गर्म जाडे की छुट्टियाँ होते ही बच्चों से लदी-फंदी मायके आ-धमकी हैं; जहाँ माँ कुंवारी बहनों और भाभियों के साथ पुराने दिनों को जीने की लालसायें है; जहाँ अपने भाई के बच्चों की आपसी लडाईयों के बीच खुद को लगने और बोझपरक होने का अहसास है।लड़कियों से ज़्यादा लड़कों से प्यार किया जाता है। लडके केलिए पढाई जरूरी है। लेकिन लडका होने के नाते उस पर इच्छायें थोपी नहीं जा सकतीं। लडकियों को विवाह केलिए प्रशिक्षित किया जाता है और लडकों को 'आदमी' बनने केलिए।

यहाँ बेटियों के साथ दर्द का रिश्ता महसूसते हुए भी माँ बेटे के हितचितंन से बंधी है। कुलमिलाकर स्त्री आँसुओं का पुतला है, प्रतिरोध की प्रतिमूर्ति नहीं है। यहाँ उपन्यास स्त्री-जीवन के बदरंग सत्य की अंतरंग तस्वीर प्रस्तुत करता है| उपन्यास भारतीय समाज व्यवस्था में लड़की की आचार संहिता का अनुपालन करना एवं कराने की परंपरा को सामने लाता है जिसे

भारतीय लड़की किसी न किसी रूप में भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी न चाहते हुए भी पालन करने केलिए विवश है। इसमें भारतीय लड़की टीनू-दीनू के माध्यम से लड़कियों की समस्याओं को स्पष्ट किया गया है। लेखिका ने ऐसे नैतिक सडाँध को रोकने की एकमात्र कोशिश की है। मृणालजी का यह उपन्यास बाल-मनोविज्ञान पर भी आधारित सफल कृति है।

1.2.6.3. अपनी गवाही

मृणालजी का तीसरा अंग्रेज़ी से हिन्दी में अनूदित उपन्यास 'अपनी गवाही' है ।अंग्रेज़ी से हिन्दी में इसका अनुवाद अरविन्द मोहन ने किया है। इसका प्रकाशन 2003 में हुआ है। अपनी गवाही उपन्यास की नायिका कृष्णा है जो मूलत: कुमाऊँ अंचल के मध्यमवर्गीय परिवार की शिक्षित एवं प्रतिभा संपन्न स्त्री है। वह अपनी प्रतिभा के बल पर हिन्दी पत्रकारिता में आती है। किंतु यहाँ आकर वह स्त्री पत्रकार होने का कष्टकर बोध से ग्रस्त है। इस उपन्यास में स्त्री की प्रगतिशीलता का स्वर भी है और भारतीय पुरुष सत्तात्मकता की स्त्री के प्रति उपेक्षित दृष्टि भी देखने को मिलती हैं।

इस उपन्यास के आरंभ में कथानायिका कृष्णा की अपनी चाची की दु:खद मृत्यु की चर्चा एक प्रकार स्त्री विमर्श ही है : "औरतों के संतान पैदा होने के भारी कष्ट की घडियों में मर्द कैसी मूर्खताएँ करते हैं; या शायद वह यह बताना चाहती ठीक कि अगर कोई मर्द उससे बहुत प्रेम करें तो इसमें भी औरत का मरण ही है। वह कहना चाहे जो चाहती हो, उसके चेहरे की हल्की मुस्कान यहीं बताती ठीक कि और जो हो यह किस्सा पति-पत्नी के रिश्तों था सहज मानवीय प्रेम के बारे में तो नहीं ही है।"[8] कृष्णा चाचा और माँ के विरोध के

बावजूद परिचित मित्र पत्रकार पी.पी की सिफारिश से पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश तो पाती है, किंतु इस क्षेत्र में उसे उच्च पदों पर आसीन पुरुषों की काम लिप्सा,अहंभाव और चरित्रहीनता से खिन्नता मिलती है।इस उपन्यास में मीडिया तंत्र में पुरुषों के एकाधिकार और स्त्रियों की उपेक्षा का निरूपण हुआ है।

मृणालजी के 'अपनी गवाही 'उपन्यास में कृष्णा एक आधुनिक नारी है। वह एक सफल पत्रकार बनने का इच्छुक है। फिर भी उसके मन में यह बात खटकती है कि वह औरत है।परंतु वह इन सारी बातों को नज़रअदाज़ करके एक श्रेष्ठ पत्रकार बनती है, जो एक आधुनिक स्वतंत्र नारी का रूप है। यह उपन्यास आधुनिक नारी और आधुनिक परिस्थितियों का चित्रण करता है।

1.2.7. अंग्रेज़ी में रचित साहित्य

समकालीन महिला रचनाकारों में मृणालजी एक ऐसी लेखिका हैं जिन्होंने हिन्दी में ही नहीं, अंग्रेज़ी भाषा में साहित्यिक सृजन करके अपनी रचनाधर्मिता का परिचय दिया है। बचपन से ही साहित्य में तत्पर होने के कारण वे एक 'अच्छी साहित्यकार' बन सकीं।अंग्रेज़ी और हिन्दी दोनों भाषाओं में समान रूप से लिखकर मृणालजी ने तत्कालीन समाज की सभी समस्याओं पर अपना विचार व्यक्त किया है। उनका साहित्य स्त्री केन्द्रित है। अंग्रेज़ी में रचित उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं -द सब्जेक्ट इज़ वूमन (महिला विषयक लेखों का संकलन),द डॉटर्स डॉटर, माई ओन विटनेस (उपन्यास), देवी(उपन्यास-रिपोर्ताज), स्टेपिगं आउट :लाइफ एंड सेक्सुआलिटी इन रूरल इंडिया।

1.3.निष्कर्ष

मृणाल पाण्डे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न भारतीय रचनाकार हैं| उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं में समान रूप से अपनी प्रतिभा दर्ज की है। उनकी सभी रचनाएँ स्त्रियों को केन्द्र में रखकर लिखी गयी हैं। मीडिया पर्सन होने के कारण स्पष्टवादिता उनकी सभी रचनाओं में पायी जाती है। उनकी रचनाएँ समाज का दर्पण ही है। उन्होंने समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और अन्यायों-अत्याचारों को सूक्ष्म रूप से देख-परखकर अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। विषय की व्यापकता उनकी रचनाओं की बड़ी खासियत है। मृणालजी की रचनाएँ समय सापेक्षितता को सामने रख कर लिखी गयी हैं। इसलिए उनकी रचनाएँ अत्यंत मार्मिक और रोचक बन पडी हैं। समाज में स्त्री -पुरुष के बदलते संबन्धों और पारिवारिक विचलन को उन्होंने अपनी रचनाओं में बहुत गहराई से उभारने की कोशिश की है। वर्तमान में यह हम नहीं कह सकते हैं कि तुम स्त्री हो, इसलिए तुम यह कार्य नहीं कर सकती। क्योंकि स्त्री ने अपनी हिम्मत से अपना प्रभुत्व जमा दिया है। मृणालजी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्रियों का हौसला बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। उनकी सभी रचनाएँ न केवल अपने परिवेश की सच्चाइयों को उजागर करती हैं,बल्कि पाठक को उन समस्याओं के प्रति चौकन्ना भी करती हैं जो तत्कालीन परिवेश से उत्पन्न हुई हैं। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मृणालजी ने हिन्दी साहित्य जगत को जो योगदान प्रदान किया है, वह अत्यंत महत्वपूर्ण ही है। **जो राम रचि राखा, आदमी जो मछुआरा नहीं था, काजर की कोठरी, चोर निकल के भागा, शर्माजी की मुक्ति कथा, धीरे-धीरे रे मना और सुपरमैन की**

वापसी आदि उनके नाटक हैं| **विरुद्ध, पटरंगपुर पुराण, और रास्तों पर भटकते हुए** आदि उनके उपन्यास हैं। **दरम्यान, शब्दबेधी, एक नीच ट्रैजेडी, एक स्त्री का विदागीत, यानी की एक बात थी, बचुली चौकिदारिन की कढ़ी** और **चार दिन की जवानी** तेरी आदि उनके कहानी संकलन हैं। **स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, परिधि पर स्त्री, ओ उब्बीरी, जहाँ औरतें गढ़ी जाती है और स्त्री:लंबा सफर** आदि समीक्षात्मक निबंध है। समय के साथ सरोकार रखनेवाली ये रचनाएँ उनकी पहचान के चिह्न हैं।

सदर्भ:-

1.मृणाल पाण्डे :-यानी की एक बात थी – पहले फ्लैप से

2. पुष्पपाल सिंह :- समकालीन कहानी रचना मुद्रा :-पृ 208

3 दिनेश द्विवेदी(सं) :- महिला कथाकारों की कहानियाँ ;- पृ.10

4. मृणाल पाण्डे :- संपूर्ण नाटक :- पहला फिल्प से

5. मृणाल पाण्डे:- परिधि पर स्त्री:-पृ.47

6. मृणाल पाण्डे:- जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं:-पृ.6

7. अर्जुन तिवारी:- आधुनिक पत्रकारिताएँ

8.मृणाल पाण्डे:- अपनी गवाही:-पृ.3

अध्याय दो

मृणाल पाण्डे का नाट्य-साहित्य

अध्यायदो

मृणाल पाण्डे का नाट्य-साहित्य

2.0.प्रस्तावना:-

नाटक साहित्य की सर्वाधिक सशक्त एंव प्रभावशाली विधा है। नाटक और मानव जीवन का शाश्वत सम्बन्ध रहा है। यह संसार एक रंगमच है और मानव उसका शाश्वत पात्र है। मानव जीवन के व्यापक सदर्भों और यथार्थ जीवन के विविध आयामों से विषय चुनकर वह समाज केलिए ही नाटक का निर्मण करता है। महिला नाटककारों में मृणाल पाण्डे को खास पहचान मिली है। आज महिलाएँ केवल घर में ही सीमित न रहकर सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक एंव सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी अपनी नई पहचान बना रही हैं। समाज में अपने ऊपर हो रहे शोषण एंव अन्यायों को उन्होंने खुलकर साहित्य के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया है। समकालीन परिप्रेक्ष्य में मृणालजी के नाटक अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे नाटक के ज़रिए तत्कालीन समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार एंव अनीतियों के विरूद्ध अपनी लेखनी निरंतर चलाती रहती हैं। हास्य-व्यंग्य से भरपूर अपने चुटीले भाषा-शिल्प और लोकनाट्य की शैली के कारण मृणालजी के नाटक अत्यंत रोचक लगते हैं। यहाँ मृणालजी के नाटकों में अभिव्यक्त विविध पहलुओं के माध्यम से देखने का कार्य किया है।

2.1 समकालीन महिला नाटककार और मृणाल पाण्डे

हिन्दी नाट्य साहित्य की एक विशेषता यह है कि स्त्री हमेशा इसके केन्द्र में रही है और महिला नाटककार हाशिए पर। स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम से लेकर स्वातंत्र्य प्राप्ति तक के समय में हिन्दी नाट्य साहित्य के इतिहास में एक मात्र महिला नाटककार का नाम प्राप्त होता है। वे हैं श्रीमती लालीदेवी। उनका एक मात्र नाटक 'गोपीचंद' लखनऊ से प्रकाशित हुआ था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के नाटककारों में कंचनलता सब्बरवाल, शोभना भूटानी, विमला रैना, मन्नुभण्डारी, मृदुला गर्ग, शांति मेहरोत्रा, कुंथा जैन, रेखा जैन, मंजुल गुप्ता, कमलिनी मेहता, गिरिश रस्तोगी, कुसुम कुमार, मृणाल पाण्डे, मीराकांत और त्रिपुरारी शर्मा उल्लेखनीय हैं।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य-साहित्य में पहले महिला नाटककार डॉ.क़ंचनलता सब्बरवाल है। उनके प्रमुख नाटक हैं 'अमिया' और 'भीगी पलकें'। 'अमिया' एक ऐतिहासिक नाटक है इसमें 'अमिया' नामक स्त्री की वीरता को दर्शाया गया है। धर्मवीर भारती के 'अंधा युग' और जगदीशचन्द्र माथुर के 'कोणार्क' के साथ हिन्दी नाटक और रंगमंच का एक नया विकास आरंभ होता है। इस दौर में मन्नुभण्डारी, शोभना भूटानी, शांति मेहरोत्रा,

नादिरा साही बब्बर और मृदुला गर्ग जैसी महिला रचनाकारों का योगदान महत्वपूर्ण है।

मन्नुभण्डारी मूलत: कथाकार के रूप में ख्याति प्राप्त हैं। नाट्य क्षेत्र में उनका प्रवेश 'बिना दीवारों के घर' से हुआ। स्नेह, सुरक्षा, विश्वास, और त्याग की चारदीवारों से घर बनता है और आपसी अटूट रिश्तों से बना परिवार उसमें बसता है। लेकिन आधुनिक भौतिकवाद जनित अंहकार और अविश्वास के कारण घर की दीवारें ढह रही हैं और परिवार बिना दीवारों की छत के नीचे घुट रहा है। आज का इस भीषण यथार्थ को मन्नुभण्डारी ने रंगशिल्प के माध्यम से प्रस्तुत किया है। घर, परिवार और रिश्तों की टूटन का चित्रण शोभना भूटानी के 'शायद हाँ', शांति मेहरोत्रा के 'एक और दिन', 'ठहरा हुआ पानी' तथा मृदुला गर्ग के 'एक ओर अजनबी' आदि नाटकों में देखने को मिलता है। सातवें दशक के अधिकांश नाटकों में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का चित्रण किया गया है, लेकिन महिला रचनाकारों के नाटकों में इसका अलग रूप आया है। प्रसिद्ध नाट्य चिंतक डॉ.गिरिश रस्तोगी ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा भी है-"यूँ तो स्त्री-पुरूष सम्बन्धों का चित्रण आधुनिक साहित्यकारों के साहित्य के बहुत बडे भाग में हुआ है, लेकिन लेखिकाओं ने जब इन सम्बन्धों के अलग-अलग पक्षों का, स्तरों का चित्रण किया है तो वहाँ महिलाओं का

अनुभव क्षेत्र होने के कारण उसमें उनकी नारी दृष्टि की निजी विशेषताएँ हैं और एक भिन्न प्रकार का विशिष्ट लगाव है। निश्चय ही इसका प्रभाव एक रचना पर, उसके कथ्य और शिल्प पर और उसके संपूर्ण वातावरण पर पडता है।"[1]

महिला नाटककार मात्र घर, परिवार, रिश्तों-नातों की चारदीवारी तक सीमित नहीं रही हैं अपितु बाहरी दुनिया को भी उन्होंने उतनी सशक्तता से आँका है। साथ ही हिन्दी नाटक और रंगमंच को नया मोड देने का प्रयास भी किया है। इस दृष्टि से आठवें, नवें तथा अंतिम दशक में नाट्य-सृजन में रत महिला रचनाकारों को देखा जा सकता है। त्रिपुरारी शर्मा, कुसुम कुमार तथा मृणाल पाण्डे के नाट्य-सृजन को कथ्य एवं रंगशिल्प के धरातल पर कई नयी उपलब्धियाँ प्राप्त हैं।

त्रिपुरारी शर्मा एक सक्रिय रंगकर्मी हैं। उन्होंने कई नाटकों की रचना की है। 'बहू', 'अक्स पहेली', 'विक्रमादित्य का सिंहासन', 'बिरसा मुण्डा', 'सम्पदा', 'बाँझ घाटी' आदि उनकी चर्चित नाट्य रचनायें हैं। 'बहू' और 'अक्स पहेली' दोनों नारी विमर्श की नाट्य रचनायें हैं। 'बहू' सामंती संस्कारों से जर्जर ग्रामीण समाज में एक विधवा युवती की निजी और पारिवारिक स्थिति की मर्मस्पर्शी कथा है, तो 'अक्स पहेली' में आज की मध्यवर्गीय नारी की

मानसिकता और बौद्धिक द्वन्द्व का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। ‘बाँझ घाटी’ भोपाल गैस दुर्घटना की विभिषिकाओं की जीवंत अभिव्यक्ति है।

कुसुम कुमार आज तक पूरी तरह नाट्य-सृजन में संलग्न एक महिला रचनाकार हैं। अब तक इनके सात नाटक और दो एकांकी प्रकाशित हुए हैं। ‘ओम क्रांति क्रांति’, ‘सुनो शेफाली’, ‘दिल्ली ऊँचा सुनती है’, ‘संस्कार को नमस्कार’, ‘रावण लीला’ तथा ‘पवन चतुर्वेदी की डायरी’ आदि नाटक प्रमुख हैं। ‘ओम क्रांति क्रांति’ में शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त अराजकता को दर्शाया गया है तो ‘दिल्ली ऊँचा सुनती है’ में सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार का चित्रण हुआ है। ‘सुनो शेफाली’ में राजनायकों के छल-कपट और अवसरवादिता के खिलाफ दलित युवती का संघर्ष दिखाया गया है। ‘रावण लीला’ में कला-साधना के क्षेत्र में फैली अनैतिकता का चित्रण है तो ‘संस्कार को नमस्कार’ में नारी-सुधार की आड़ में महिला आश्रम में होने वाले नारी-शोषण को व्यक्त किया गया है। ‘पवन चतुर्वेदी की डायरी’ में जीवन संघर्ष से पलायन की वर्तमान कायरता के दर्शन पर व्यंग्य कसा गया है।

समकालीन महिला नाटककारों में मृणालजी की पहचान खास महत्वपूर्ण है। उनका पहला नाटक सन् 19 प्रकाशित हुआ ‘मौजूदा हालत को देखते हुए’ तब से आज तक उनकी छः नाट्य कृतियाँ प्रकाशित हुई हैं-‘जो राम

रचि राखा', 'चोर निकल के भागा', 'मुक्तिकथा', 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' और 'काजर की कोठरी'। इनमें से 'काजर की कोठरी' देवकीनदंन खत्री के उपन्यास का नाट्य रूपांतर है, शेष सभी मौलिक नाटक हैं। इसके अलावा दो रेडियो नाटक भी उन्होंने लिखे हैं। 'सुपरमैन की वापसी' और 'धीरे-धीरे रे मना'। ये सभी नाटक समकालीन जीवन से जुडी राजनैतिक-सामाजिक विषमताओं विसंगतियों को रेखांकित करते हैं। 'मौजूदा हालत को देखते हुए' में खोट, नोट और वोट से 'समर्थ' बने राजनायकों की भ्रष्ट लीलाओं को उजागर किया गया है। 'जो राम रचि राखा' में रोमानी अभिजात्य वर्गीय क्रांतिकारी नेताओं की पोल-खोली गयी है तो 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' में मंत्रालय-सचिवालयों के मेधावी, दैवी वरदान प्राप्त उच्चाधिकारी सलाहकारों की। 'चोर निकल के भागा' में आज के उदारीकरण-वैश्वीकरण की छद्म सभ्यता में कला-संस्कृति के बाज़ारीकरण से जुडे सवालों को व्यंग्य से मिलाकर प्रस्तुत किया गया है। व्यंग्य, चुटीली भाषा और लोकधर्मी शिल्प शैली के कारण मृणालजी के नाटक अत्यंत सफल हुए हैं। प्रस्तुत अध्याय में मृणालजी के नाटकों में अभिव्यक्त सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पक्षों को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।

2.2. सामाजिक संदर्भ:-

एक सामाजिक प्राणी होने के नाते नाटककार समाज से प्रेरणा ग्रहण कर अपने युगीन वातावरण का चित्रण नाट्य रचनाओं के द्वारा करते हैं। नाटककार अपनी रचनाओं के माध्यम से निरंतर परिवर्तित समाज का तथा समाज की गतिविधियों का चित्र रेखांकित करते हैं। मृणालजी ने समाज को अपनी पैनी दृष्टि से देखा है। समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, अत्याचारों के खिलाफ अपनी लेखनी चलाई है। मानव सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज से उसका गहरा संबन्ध है। समाज में होनेवाले अत्याचारों के बदले आवाज़ उठाना उसका कर्तव्य भी है। पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करने के कारण मृणालजी ने समाज के सभी स्तरों को सूक्ष्म दृष्टि से देखने की कोशिश की है। अपनी रचनाओं के माध्यम से लोगों पर चेतना जगाने का कार्य भी किया है। समकालीन संदर्भ में मानव की जिन्दगी तेज़ी से बढ़ रही है। इसलिए मूल्यों का भी ह्रास देखने को मिलता है। मृणालजी के नाटक समाज से सीधा संबन्ध रखनेवाले हैं।

2.2.1. मध्यवर्गीय पारिवारिक विघटन:-

परिवार मानव जीवन की सर्वोत्तम व्यवस्थित संस्था है, जिसमें पति-पत्नी के साथ-साथ कई सदस्य एक साथ रहकर जीवन व्यतीत करते हैं।

मध्यवर्ग पाश्चात्य ढंग का जीवन पसंद करता है। मध्यवर्ग के व्यवहार के सम्बन्ध में मंजुलता सिंह का कथन यहाँ विशेष उल्लेखनीय है-" मध्यवर्ग की सबसे बडी दुर्बलता है कि वह कुल मर्यादा को निभाने केलिए अनेक प्रदर्शन करता है और वे प्रदर्शन उसकी आर्थिक स्थिति से मेल न खाकर मानसिक संघर्ष का कारण बन जाते हैं। अपनी स्थिति से बढ़कर अपने को प्रदर्शित करने की प्रवृत्ति ने मध्यवर्ग को खोखला बना दिया है।"[2]

मृणालजी के 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' नाटक में भी मध्यवर्गीय पारिवारिक विघटन देखने को मिलता है। पत्नी की महत्वाकांक्षा के कारण नन्ददुलारे राज कर्मचारी का पद तक हासिल करता है। पुत्र की मृत्यु के बाद पत्नी रूक्मिणी पागल हो जाती है। नन्ददुलारे भी काम में व्यस्त होने के कारण अपने को परिवार से कटा हुआ मानते हैं। मध्यवर्गीय नारी की आडम्बर प्रियता को मृणालजी ने इस प्रकार व्यक्त किया है। नन्ददुलारे राजकर्मचारी के पद पर आ जाते हैं। उस वक्त रूक्मिणी उससे कहती है "इतने बरसों बाद हँसी-खुशी का मौका आया है। मैं तो ऐसी बड़ी दावत दूँगी, ऐसी बड़ी दावत दूँगी कि सब देखते जाएँगे। मैं नया पन्नों का सेट बनवाऊँगी मैं हरी काँचीपुरम की साडी पहनकर बाहर जाऊँगी, मैं धूप का चश्मा लगाकर गाडी में गूजूँगी तो लोग कहेंगे-ये हैं, बड़े आदमी की बीवी।"[3]

इस प्रकार की महत्वाकांक्षा कभी-कभी पारिवारिक विघटन का कारण बन जाती है। समकालीन बाज़ारीकृत संस्कृति आज पारिवारिक विघटन को बढ़ावा दे रही है। मध्यवर्गीय संवेदनशील व्यक्ति का टूटन भी इस नाटक में व्यक्त किया गया है। राजकर्मचारी होने के बावजूद नन्ददुलारे भ्रष्टाचार के विरोधी भी है। इसीलिए सह कर्मचारियों से कोई ताल-मेल नहीं होता। पुत्री ममता को छोडकर परिवार वाले तो अधिक धन और दौलत कमाने केलिए नन्ददुलारे को भ्रष्टाचारी बनाना चाहते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि नन्ददुलारे अपने परिवार से और कार्यलय से पूरी तरह दूर हो जाते हैं। उनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रह जाता है। उसे तो सत्ता की अंगूठी के इशारे पर नाचना पडता है। यही उसके जीवन की विसंगति बनती है

राजकर्मचारी के पद हासिल करने केलिए घर के सभी सदस्य उसे उकसाते हैं। वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल अपने को बदलने केलिए वे तैयार हो जाते हैं। मिश्राजी भी नन्ददुलारे को प्रेरित करते हुए यों कहते हैं "सिर्फ राजकर्मचारी ही नहीं, हर ओहदे और धन्धे के लोग बात करते हैं आपकी। पर भाई साहब, आपके निन्दक और प्रशंसक सब एकमत हैं इस बात पर, कि राज्य चला सकने की कूव्वत आप में है- आपकी सत्ता आपके तेजस्वी दिमाग का सबूत है, ऊपर से थोपा गया ओहदा या अहसान नहीं"[4]

नन्ददुलारे परिवार से कट जाते हैं, सुखी पारिवारिक जीवन त्रासद स्थितियों से गुज़रता है। मध्यवर्गीय समाज में संवेदनशील व्यक्ति की टूटन अत्यंत कठिन समस्या है। समाज में अपने व्यक्तित्व को बनाये रखने केलिए उसे अत्यंत संघर्ष करना पडता है। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल बनाने में नन्ददुलारे कोशिश करते हैं फिर भी वे असमर्थ बन जाते हैं। चारों ओर की परिस्थितियाँ उसे भ्रष्टाचार करने केलिए विवश कर देती हैं। फिर भी वे अपने व्यक्तित्व को बनाये रखने में सफल हो जाते हैं। आज के लोग अवसरवादी बनते जा रहे हैं। मृणालजी ने नन्ददुलारे जैसे पात्र के द्वारा समाज में भ्रष्टाचार के विरूद्ध संघर्ष करने वाले मध्यवर्गीय आदमी का चित्रण किया है।

वर्तमान युग में मानवीय मूल्यों का ह्रास देखने को मिलता है। आपसी रिश्तों में भी विघटन आया है। मृणालजी का एक छोटा सा रेडियो नाटक है 'धीरे-धीरे रे मना'। इसमें एक परिवार का चित्र है। घर के सभी सदस्य व्यस्त हैं। घर में पति के भाई सुरेश आते हैं। कई दिन के बाद वे आये हैं। सुरेश और भाई के बीच वाद-विवाद होता है। उस वक्त सुरेश कहते हैं " टी.वी के अलावा देखने-सुनने को इस मुल्क में बचा ही क्या है ? दिन-रात हम छोटे पर्दे पर दूसरों के दु:ख, दूसरों के सुख देखते हैं। सचमुच के रिश्तों को कितना सहते उनको देखकर दु:खी-सुखी होते रहते हैं। पर हम लोग ? एक दिन आएगा जब समाज गूँगा होगा,सिर्फ टी.वी बोलेगे ?"[5]

आज के वैज्ञानिक युग में टी.वी जैसे दृश्य माध्यमों का स्थान बहुत बड़ा है। आपस में खुलकर बातें करने केलिए आज किसी के पास समय नहीं है। रिश्तों में होने वाले दूरी को 'धीरे-धीरे रे मना' में दर्शाया है। पारिवारिक जीवन सुखमय बनाने केलिए लोग धन के पीछे भाग रहे हैं। इसके कारण रिश्तों में या अन्य लोगों के बीच के संबन्ध नष्ट हो जाते हैं। धन-दौलत कमाने केलिए भाइयों के बीच भी संघर्ष चलता रहता है। इस प्रकार परिवार में विघटन संभव हो जाता है। मृणालजी ने अपने नाटकों के ज़रिए मध्यवर्गीय परिवार में होनेवाली विसंगतियों का चित्रण किया है। आजकल पुराने पारिवारिक मूल्यों का विघटन हुआ है। महत्वाकांक्षा, स्वार्थपरता और संवेदनाओं के अभाव ने पारिवारिक जीवन को प्रभावित किया है। इस कारण से परिवार में टूटन बढ़ने लगी है। पुराने ज़माने में पारिवारिक सम्बन्ध आत्मीय एवं मानवीय धरातल पर रहता था। वर्तमान काल में आत्मीयता का स्थान सुखवादिता ने ग्रहण किया है। इसीलिए परिवार में विघटन देखने को मिलता है।

2.2.2. संयुक्त परिवार की टूटन:-

प्राचीन काल से भारत में संयुक्त परिवार की प्रथा चली आई थी। तत्कालीन आर्थिक परिस्थितियों का योगदान भी संयुक्त परिवार को बनाये रखने में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीनता एवं नवीनता का द्वन्द्व, आर्थिक

विषमता, वैयक्तिक आवश्यकताओं का महत्व, पीढ़ी-संघर्ष, वैचारिक मतभेद, पारस्परिक समन्वय एवं सामंजस्य के अभाव और मानवीय मूल्यों के ह्रास संयुक्त परिवार पद्धति पर भीषणता लाये हैं। "संयुक्त परिवारों में प्रत्येक व्यक्ति अधिकतम विकास नहीं कर सकता, न प्रत्येक व्यक्ति अधिकतम स्वतंत्रता का भोग कर सकता। परिवार मर्यादा(नार्मस) पर चलते हैं और अपनी संभावनाओं के प्रति जागरूक व्यक्ति केवल मर्यादा केलिए अपना जीवन एक घेरे में बन्द नहीं कर सकता।"[6]

नारी स्वतंत्रता तथा वैयक्तिक प्रधानता संयुक्त परिवार के विघटन का कारण बना। नारी को पैतृक संपत्ति पर अधिकार भी इसका अन्य कारण है। आर्थिक परवशता के कारण परिवार टूट जाता है। आर्थिक तनाव के कारण परिवार के सदस्यों के बीच आपसी संघर्ष शूरू होता है। भौतिक सुखों के प्रति आस्था के कारण मानवीय संबन्धों में बिखराव हर परिवार में दिखायी पडता है। मृणालजी के 'काजर की कोठरी' नामक नाटक में संयुक्त परिवार की टूटन को दर्शाया गया है।

सरला नामक युवती इस नाटक के केन्द्र बिन्दु है। वह संयुक्त परिवार की लडकी है। उसके पिता ने एक वसीयत तैयार की है। सरला के नाम पर उन्होंने संपत्ति लिख कर रखी है। लालसिंह ने अपनी बेटी के नाम पर इस प्रकार वसीयत लिखी है "मैं लालसिंह अपनी 20 लाख रुपये की जायदाद

अपनी बेटी सरला के नाम करता हूँ। इस जायदाद पर सिवा मेरी बेटी के किसी का हक न होगा। बशर्तों कि चार शर्तों का पूरा बरताव किया जाए- एक सरला को अपनी कुल जायदाद का मैनेजर अपने पति को बनाना होगा। दो, सरला अपने पति की मरज़ी बिगैर उसे न किसी को दे सकेगी और ना ही उसमें से कुछ खर्चा कर सकेगी। तीन, सरला के पति को जायदाद पर बतौर मैनेजरी का हक होगा, न कि बतौर मालिकाना। वो चाहे तो मनेजरी की तनखा बतौर पाँच सौ रुपे महीने उसकी आमदनी से ले लो। और चार ये, कि सरला की शादी मैं ने ठाकुर कल्याणसिंह के बेटे हरनन्दनसिंह से तै कर दी है। गर मेरे रहते हो गई तो ठीक, वरना मेरे ना रहने पर भी सरला केलिए लाजमी होगा कि उसी से शादी करे। अगर मेरी मरजी के खिलाफ वो किसी गैर से ब्याह करेगी,तो मेरी कुल जायदाद के आधे हिस्से के वारिस मेरे चारों भतीजे-पारसनाथ, राजाजी, धरनीधर और दौलतसिंह होंगे-बाकी आधा सरला के पति का होगा।"7 यहाँ सरला के पिता का पुरुषवर्चस्ववादी नज़रिया भी देखने को मिलता है।

इस वसीयत के कारण परिवार की टूटन हो जाती है। विवाह के पूर्व सरला को उठाया जाता है। उसे बन्दी बनाकर रखा जाता है। ये सब कार्य उस परिवार के लोग करते हैं। धन-दौलत हडपने केलिए उसे फँसाया जाता है। वेश्याओं की सहायता से हरनंदन उसे बचाता है। वह भी दहेज की रकम के

मोह से इस प्रकार करते हैं। धन और दौलत के सामने सभी मानवीय मूल्य नष्ट हो जाते हैं। इस नाटक के ज़रिए इस प्रकार की विसंगतियों को सामने रखा गया है। यहाँ नारी,शोषण का शिकार बन जाती है। धन के पीछे भागने के कारण परिवार के सभी लोग अलग-अलग हो जाते हैं। धन के सामने सभी मूल्य नष्ट हो जाते हैं। परिवारवाले और हरनंदन धन के लालच के कारण लालसिंह की सहायता करते हैं। समाज से विनष्ट हो जाते मानवीय मूल्यों का ह्रास इसमें बखूबी से व्यक्त किया है।

संयुक्त परिवार में अपने को ऊँचे रखने केलिए लोग सब कुछ करने केलिए तैयार हो जाते हैं। आज का समाज पुराने ज़माने के समाज से बिलकुल बदल गया है। आज परिवार वालों के बीच आपस में समझौता करना कठिन कार्य बन गया है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव हर कहीं देखने को मिलता है। उपभोग के बाद फेंकने केलिए लोग आज हिचकते नहीं हैं। इसीलिए सभी तबकों के बीच टूटन संभव हो गयी है। संयुक्त परिवार के स्थान पर आज छोटे-छोटे परिवार उग रहे हैं। संयुक्त परिवार के लोगों के बीच होने वाली एकरसता नष्ट हो रही है। इसका मुख्य कारण आज का सामाजिक परिवेश है।

2.2.3.पुरानी और नयी पीढ़ी का अंतर:-

पुरानी पीढ़ी अपनी रुढिगत मान्यताओं और विचारधाराओं पर आधारित है। नयी पीढ़ी पुरातनता के विरोधी और नवीनता के पक्षधर है। मृणालजी के 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' नाटक में बूढ़ी माँ कहती हैं "खाना

गरम कर देना लल्ला केलिए । मेज़ पर रखा आजकल बरफ बन जाता है, बरफ। हम तो अपने टेम में चूल्हे के पास बिठाकर वहीं परसती थीं-"8

नन्ददुलारे पत्नी रुकमिणी की इच्छानुसार राजकर्मचारी के पद पर आ जाते हैं। नन्ददुलारे भष्टाचार विरोधी हैं। बूढ़ी माँ नन्ददुलारे की इस पदोन्नती से अधिक खुश नहीं होती ।उसे डर लगता है "जाने क्यों मुझे डर लगता है,अपने बेटे केलिए, इस घर केलिए। सबसे ज़्यादा वही टूटता है, जो सबसे सीधा होता है। जाने क्यों दाहिनी आँख भडके जा रही है। मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आता। अरे,छोटे-बडे का मेल कैसा ?"9 पुत्र के प्रति माँ का स्नेह इसमें व्यक्त होता है। माँ बेटे को हमेशा अपने पास रखना चाहती है। नन्ददुलारे की पत्नी रुकमिणी अपने बेटे को विदेश में पढ़ने केलिए भेजती है। माँ इससे सहमत नहीं होती है। वह हमेशा इसके बारे में बातें करती रहती है। पुरानी और नयी पीढ़ी का अंतर देखने को मिलता है। पुरानी पीढ़ी की माँ बच्चों को हमेशा अपना पास रखना चाहती है। तो नयी पीढ़ी की माँ अपने स्टाटस को बढ़ाने केलिए बच्चों को दूर भेजने को तैयार है।

रुकमिणी के बारे में बूढ़ी माँ कहती है " कहूँ क्या? मुझे पोते- पोती की फिक्रर होती है। अरे शहर में नई थे अच्छे स्कूल जो उठा के इतनी दूर भेजी दिया महतारी ने? आजकल की लुगाइयाँ तो नौ महीने के बच्चे को पेट में ही रख लें, यहीं बहुत है साल में महीने-भर को घर आए, सो भी बेगाने-बेगाने से।

संस्कार क्या पडेंगे उनके?"[10] पढ़ने केलिए बच्चे को दूर भेज देने से बूढ़ी माँ परेशान होती है। वहाँ जाकर बच्चे के बिगड जाने का भय उसे हमेशा रहता है। पुराने ज़माने के लोग अनेक रूढ़ियों और रीति रिवाज़ों का पालन करते हैं। उन्हें अपने संस्कार नष्ट होने का भय लगता है।

नयी पीढ़ी के लोग अपनी ज़िन्दगी को सुख-सुविधाओं से बिताने केलिए घर से बाहर जाना चाहते हैं। बदलाव को स्वीकार करने केलिए वे तैयार हो जाते हैं। आज की उपभोग संस्कृति का प्रभाव उन पर खूब पड़ा है। इसीलिए सभी रिश्तों को वे 'वस्तुओं' की हैसियत से बनाये रखते हैं। रिश्तों का बिखराव उनके लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है। ममता और रुकमिणी की बातचीतों से यह भावना जाहिर है -"क्या नहीं किया गया तुम्हारे लिए ज़रा मैं भी तो सुनूँ? कभी किसी बर्थडे नहीं मनाया गया तुम्हारा? कभी छुट्टियों में तुम्हें-?"[11] उसे चीज़ों से बढ़कर कुछ देने का ख्याल नहीं आता। उसकी बेटी ममता माँ के प्यार केलिए तडपती है। लेकिन वह उसे कभी नहीं मिलता है। इस पर उसमें एक तरह का निराशा भाव छा जाता है। यह उसके इन शब्दों से व्यक्त हो जाता है, "इसके आगे भी कोई इच्छा हो सकती है, कहाँ जाना तुमने? मन उचाड है तो सिर में तेल डाल लो, नींद नहीं आती, च्यवनप्राश खा लो, पढ़ाई से मन उचटता है, बादाम चबा लो। पेट के अलावा बच्चों के भीतर और भी कुछ दु:खता है, तुमने जाना क्या?"[12]

पुरानी और नयी पीढ़ियों में कुछ समानतायें भी पायी जाती हैं। मृणालजी का एक और नाटक है 'चोर निकल के भागा'। इसमें युवा वर्ग के लोग धार्मिक गुरू की आज्ञा का पालन करते हैं। आर्थिक तंगी से बचने केलिए वे बाबा के आदेशानुसार काम करते हैं। इसमें गेंदालाल और शरीफा नामक लोग भी शामिल हैं। वे बाबा के परम भक्त हैं। वर्तमान समाज में भी इस प्रकार के धार्मिक अंधविश्वासों में लोग आसक्त हैं। बदलते सामाजिक परिवेश पीढ़ियों के बीच के अंतर के कारण बन जाते हैं। आज ज़माना बदल गया है। स्त्रियाँ घर से बाहर जाकर काम करने लगी हैं। इसमें नीता अपने दोस्तों से मिलकर काम करती है। बदलते सामाजिक परिदृश्य के कारण मूल्यों में भी ह्रास देखने को मिलता है।

2.2.4.युवा पीढ़ी की दिशाहीनता:-

पारिवारिक मूल्य विघटन के कारण भारतीय युवक समाज संस्कार हीन होकर अनेक विसंगतियों का शिकार बन जाता है। वर्तमान युवा पीढ़ी देश की विभिन्न समस्याओं के प्रति सजग है। आधुनिक युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के दकियानूसी विचारों, शिक्षा समाज तथा सामाजिक मान्यताओं से असंतुष्ट है। इस असंतोष की भावना को मिटाने में असमर्थ रहने के कारण देश में अनुशासन हीनता पनप रही है। आज की युवा पीढ़ी दिशाहीन है, वह न तो स्वंय रास्ता ढूढ़ने में सक्षम है और न हमारी बुजुर्ग-पीढ़ी उसका सही मार्ग दर्शन कर रही है। इसीलिए दोनों पीढ़ियों के बीच संघर्ष होता रहता है।

राजनीतिक नेतागण भी युवा पीढ़ी में तनाव तथा विद्रोह की भावना जगाने में भागीदार है। बेकारी और बेरोज़गारी भी युवा में स्वप्न भंग का कारण बनता है। शिक्षा के अनुरूप नौकरी प्राप्त न होने के कारण प्रशासन के प्रति उनके मन में विद्रोह की भावना उठती है। युवा पीढ़ी की निराशा और विद्रोह की भावना समाज में अव्यवस्था फैलाती है। आज पढ़-लिख जाने के बाद भी युवकों को नौकरी नहीं मिलती,उसे समाज में कोई महत्व नहीं मिलता । इससे वह व्यक्तित्व हीन बन जाता है। युवकों की दिशाहीनता, निरंकुशता, स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति का उद्घाटन मृणालजी ने अपने नाटकों में किया है।

मृणालजी ने अपने नाटक 'चोर निकल के भागा' में दिग भ्रमित युवा वर्ग का चित्रण किया है, जो सिर्फ काल्पनिक दुनिया में विचरण करता है। ये युवक उपेक्षित गुमराही एवं दिशाहीन हैं। युवक और युवतियों के गुमराह बनने के कई कारण हैं ।ये हैं दोष पूर्ण शिक्षा पद्धति, नियोजन का अभाव, लोक संख्या में वृद्धि, नौकरियों की उपलब्धता में कमी, श्रम के प्रति उपेक्षा का भाव, योग्यता और प्रतिभा की अवमानता, कोमिकों-फिल्मों की बातों को सच मानने की भूल आदि।

'चोर निकल के भागा' नाटक की प्रमुख विषयवस्तु युवा मन की दिशाहीनता है। नाटक के चार युवा लोग बाबा जैसे जादूगर के मायाजाल में फंसकर याने काल्पनिक दुनिया में फंसकर अपनी वास्तविक दुनिया को भूलकर जीते हैं। यहाँ बाबा एक जादूगर है तो भभूत उसकी जासूसी है। आज की युवा पीढ़ी श्रम का महत्व भूल जाती है और बिना मेहनत से पैसा कमाकर जीने केलिए सपना देखती है। इसके कारण वह इन्द्रजाल या अंधविश्वास में फंस जाती है। यह आज की युवा पीढ़ी की सबसे बड़ी विडम्बना है। युवा वर्ग वास्तविक और काल्पनिक दुनिया को पहचानने में असमर्थ है।

'चोर निकल के भागा' नाटक में बेरोज़गार युवा लोग एक ढाबे में बैठकर बातें करते रहते हैं। नौकरी न मिलने के कारण वे लोग आपस में बैठकर कई विषयों के बारे में चर्चा करते रहते हैं। इसमें एक युवती भी शामिल है उसका नाम नीता है। वह कहती है -"क्या आज सारी शाम हम ब्रेश्त के वर्ग-संघर्ष की बात करते हुए ड्रॉपर से चाय पिएँगे?"[13] बेरोज़गार किंतु पढ़े-लिखे नौजवानों के वार्तालाप से नाटक का आरंभ होता है। रमेश, सुरेश, महेश और नीता ये चारों रंगकर्मी युवा मित्र भी हैं।

वे बाज़ारीकरण के जुडे सवालों को भी उठाते हैं। उसका मानना है कि यह बाज़ारीकरण कला और संस्कृति के आधार पर है। एक स्थान में रमेश ने सुरेश से बताया -"ये सब तुम कलावादी कैपलिस्टों के धार्मिक मिथक हैं।"[14]

वर्ग संघर्ष, पूँजीवादी सभ्यता आदि सामाजिक व्यवस्था पर नाटक में विचार प्रस्तुत है। “कलाओं के जनतंत्र में लगातार हस्ताक्षेप हो रहा है, तुम खिल्ली उठाते हो। भारत भवन में यानी भारत भर में इस समय कला का जनतंत्र खतरे में है।"[15] महेश के इन शब्दों के ज़रिए मृणालजी ने भारतीय कलाओं की खोई हुई पवित्रता और उसकी ख्याति कम करने की सामाजिक व्यवस्था पर सवाल उठाया है। यहाँ कला और जनतंत्र का जो संबन्ध है उसे स्पष्ट करने की कोशिश की गयी है। महेश ने नुक्कड नाटक को महत्व दिया है। वह अपने नाटकों में नये विषय लाने की चिंता में मग्न है। लेकिन युवा होने के कारण वह क्रांति, वर्ग-संघर्ष, सामाजिक अन्याय आदि पर नज़र डालता है।

उस समय वहाँ एक बाबा आता है। वे युवकों की सारी मुसीबतों का निवारण करने केलिए दो प्रकार का भभूत देते हैं। बाबा के उपदेशानुसार ये युवा लोग भभूत को लेकर अपनी तकदीर बदलने के इरादे से पुरानी पारसी थियटेर कंपनी से जुडे मास्टर गेंदालाल और उसकी पत्नी शरीफा से मिलते हैं। गेंदालाल और शरीफा उन्हें सहायता प्रदान करने की इच्छा प्रकट करते हैं। भभूत के चमत्कार से ताजमहल चुराने की योजना वे बनाते हैं। काल्पनिक दुनिया में मग्न युवा पीढ़ी भारतीय संस्कृति में अपसंस्कृति लाती है ।भारतीय संस्कृति के प्रेम प्रतीक ताजमहल को चुराकर विदेश में बेचने केलिए वह योजनाएँ बनाती है।

घरेलू वातावरण, बेरोज़गारी और पाश्चात्य अन्धानुकरण, देखी सुनी पढ़ी काल्पनिक कहानियों को सच मानने की प्रवृत्ति आदि युवा वर्ग की दिशाहीनता के कारण हैं। इन्हीं की वजह से समकालीन भारतीय युवा समाज संस्कारहीन होकर अनेक विसंगतियों का शिकार बनता है। हिन्दी नाटककारों ने युवा पीढ़ी की दिशाहीनता को अपने नाटकों में प्रस्तुत करके उसके कारणों को खोजने का प्रयास किया है। भौतिक जीवन के प्रति अत्याकर्षण और व्यक्तिवादिता पाश्चात्य संस्कृति की विशेषता है। आधुनिक भारत के युवकों की दिशाहीनता का जिम्मेदार उनका घर और उनके माता-पिता हैं।

2.2.5. नारी शोषण

समाज या परिवार में स्त्री-पुरुष आवश्यक अंग ही हैं। वे दोनों परिवार रूपी व्यक्ति की दो टाँगें हैं। उनमें एक के भी अभाव में परिवार लगंडा हो जाता है और लगड़ा व्यक्ति सफर करने में असमर्थ बन जाता है। समाज में स्त्री-पुरुष दोनों का अस्तित्व समान है। मानव समाज में पुरुष की अपेक्षा नारी की स्थिति बहुत समय पहले से हीन और दयनीय रही है। मृणालजी ने अपने नाटक 'काजर की कोठरी' में संभ्रांत परिवार में पत्नी नारी के शोषण को व्यक्त किया है।

सरला उच्चमध्यवर्गीय नारी है। अपने पिता की वसीयत के नाम पर उसे अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ होती हैं। विवाह के पूर्व दिन भतीजे द्वारा

उसे उठाया जाता है। संयुक्त परिवार में नारी के प्रति होने वाला शोषण इसमें व्यक्त हुआ है। सरला के पिता उसे अपने दोस्त के पुत्र हरनन्दन से विवाह कराना चाहते हैं। हरनन्दन भी सरला से ज़्यादा उससे मिलने वाले दौलत का इच्छुक है। दौलत हडपने केलिए वह किसी भी प्रकार से उसे ढूंढ़ना चाहता है। दौलत मिलने केलिए वह उसे अपने पास रखना चाहता है।“सरला के साथ जो लक्ष्मी अपने यहाँ आने को थी, उसको एकाएक अनदेखा करना उचित नहीं। हम पत्तल न भी चाटें, उसे अपने दालान में तो डाल ही.......”।[16] इसमें नारी को केवल एक उपभोग वस्तु के रूप में देखने की मान्यता पर विचार किया गया है।

हरनन्दन वेश्याओं की सहायता लेकर सरला को बचाने की योजना बनाता है। हरनन्दन वेश्याओं से संबन्ध रखता है। सरला आदर्श नारी है वह पिता के आदेशानुसार चलना चाहती थी। वह परिवार और समाज में स्वतंत्र नहीं थी। इसीलिए उसे पिता की वसीयत के माध्यम से कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं। वसीयत में कई प्रकार की शर्तें बतायी गयीं । उसके अनुसार जीने केलिए वह बाध्य हो जाती है। वहीं तो वसीयत से उसे कोई फायदा नहीं मिलता । “ये मान लो ब्याह होने के बाद सरला ने हल्ला कर दिया कि हरहर बाबू से मेरी शादी ज़बरदस्ती हुई है तो? इसकी बदचलनी का ऐलान करके वो बेदखल न करा देगी इसे मनेजरी से?”[17]

इस नाटक में समाज में वेश्याओं की स्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है। कोई स्त्री जन्म से वेश्या नहीं। वह ऐसा बनना भी नहीं चाहती। समाज में अच्छे जीवन जीने केलिए और समाज के अनुरूप जीने केलिए वे वेश्यायें बनने केलिए मज़बूर हो जाती हैं। उच्च वर्ग के लोग अपने इच्छानुसार उससे संबन्ध रखते हैं। अपनी स्वार्थता की पूर्ति केलिए उसे सहारा बनाते हैं। समाज वेश्याओं को घृणा भरी दृष्टि में देखता है। उसका बदनाम करता है। इस नाटक में एक वेश्या का कथन इसके लिए एक नमूना है-"लोग हमें बदनाम करते हैं। पर इन्हें देखिए, खानदानी इनसान होके भी दोस्तों की सगी चचेरी बहन के नसीब फोड़ते इन्हें सोग नहीं-ना ही शरम।"[18] यहाँ खानदानी लोगों की प्रवृत्ति पर व्यंग्य उठाया गया है। हरनन्दन पैसा देकर उस से सहारा लेता है। 'अगर आप जैसा अमीर इसे नौकर न रखेगा तो रखेगा ही कौन?, अपनी स्वार्थता की पूर्ति केलिए स्त्रियों का उपयोग करता है। समाज में उसे हमेशा दबा कर रखने की कोशिश हो रही है। यह समस्या समाज की सबसे बड़ी विसंगति है।

आपसी रिश्तों में भी टूटन देखने को मिलता है। भाई-बहन के बीच भी ये देखने को मिलता है। बाज़ारीकरण के इस दौर में पैसे को सभी मूल्यवान मानते हैं। मृणालजी के 'चोर निकल के भागा' नाटक में नीता भी भाई के शोषण की शिकार है। "माँ-बाप की जायदाद तो आधों आध हम दोनों

के नाम थी, पर अफसोस कि भाई ने हेराफेरी करके दबा ली। अब मैं हूँ, औ' मेरी पार्टटाइम नौकरियाँ हैं- इन दोस्तों की ओट है।"[19] नीता के भाई बब्बर ने सारी संपत्ति हडप ली है। वह विदेश में जीता है। बब्बर नीता के सौतेला भाई है, वह आज लखपति बन कर बैठा है और नीता अकिंचन। नीता अपने दोस्तों के साथ भटकती है।

2.2.6.नारी की महत्वाकांक्षा

मध्य वर्ग की अंतहीन महत्वाकांक्षा पारिवारिक विघटन का कारण बन जाती है। समकालीन बाज़ारीकृत संस्कृति पारिवारिक विघटन को बढ़ावा दे रही है। वस्तुओं के प्रति लोगों की आसक्ति ने एक गहन संकट की स्थिति उत्पन्न की है। 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' की रुक्मिणी इस अंतहीन महत्वाकांक्षा की शिकार बनी हुई मध्यवर्गीय नारी है। उसका मन चीज़ों की ललक से भरी हुई है। मध्यवर्गीय समाज की विशेषता यह है कि वह अपने अस्तित्व को समाज में बनाये रखने की कोशिश करती है।

रुक्मिणी पति के सामीप्य से ज़्यादा उसके द्वारा प्राप्त धन को या उसके द्वारा बनाये गये स्टैटस को महत्व देती है। इतना सब होते हुए भी वह अंदर ही मधुर है। उसकी हरकत के पीछे उसकी मध्यवर्गीय चेतना है। उच्च वर्ग की चमक धमक से वह अंधी हो गयी है। उसके मन में अपने पति और बच्चों के प्रति प्यार था। लेकिन उसकी महत्वाकांक्षा के कारण इसकी सही अभिव्यक्ति प्रकट करने में वह असमर्थ होती है। उसमें रिश्तों को बाज़ारू दृष्टि से देखने की

चतुरा का पूर्ण विकास नहीं हुआ था। इसलिए अंत में वह पागल बन जाती है।

नन्ददुलारे की पत्नी रुक्मिणी भी औसत मध्यवर्गीय पत्नी के समान महत्वाकांक्षी है। वह अपने पति को उकसाते हुए कहती है-"तुम दूसरों से अलग हो। अनुभव में, उम्र में वो बडे हैं, तो क्या हुआ? तुम एक बार मुँह खोलकर माँगो तो सही। मना करने का सवाल नहीं।"[20] रुक्मिणी बड़े आदमी की पत्नी होकर बड़ी दावत देने, कांचीपुरम साडी पहनकर बाहर जाने और धूप का चश्मा पहनकर गाड़ी में सवार करने का सपना देखती है। नन्ददुलारे भ्रष्टाचार विरोधी है| इसीलिए वे ऊँचा पद नहीं चाहते हैं। रुक्मिणी हौसला बढ़ाती है- "आपकी इस भलमनसाहत-भरी चुप्पी को लोग कायरता की निशानी समझ बैठते हैं। एक बार दिखा तो दीजिए उन्हें कि गरजने वाले बरसते भी हैं। कभी गरज,तो कभी फुहार। ज़रा ये संजीदगी की पर्तें कुछ काटिए। कुछ हँसी-दिल्लगी, कुछ दिलजोई, कुछ रौब-दाब धमकी, लोगों को ऐसे ही बस में करना होता है।"[21] सबकी प्रेरणा पाकर नन्ददुलारे ऊँचे ओहदा प्राप्त करते हैं जिसका नतीजा बहुत बुरा ही निकला। वे अपने परिवार से कट गये, सुखी पारिवारिक जीवन ने त्रासद स्थितियों से गुज़रना शुरू किया। मध्यवर्गीय परिवार की अधिकांश नारियाँ अपनी क्षमताओं से अधिक

स्वप्नदर्शी होती हैं। महत्वाकांक्षा बढ़ने का मुख्य कारण सामाजिक व्यवस्था में होने वाले बदलाव ही हैं।

2.3.राजनीतिक संदर्भ:-

स्वतंत्रता के पश्चात भारत का राजनीतिक वातावरण अत्यधिक कलुषित हो गया है। वर्तमान राजनीति की सबसे बड़ी विसंगति राजनीतिक व्यवस्था का भ्रष्ट होना ही है। वर्तमान राजनीति के संबंध में डॉ.लक्ष्मीनगर वार्ष्णेय ने कहा है कि आज का युग राजनीतिक प्रधान युग है,'डेमोक्रेसी' के स्थान पर माँबोक्रसी' का युग है, और दुर्भाग्यवश स्वतंत्र भारत की राजनीति भी भ्रष्ट हो गई है। अब महात्मा गांधी का राजनीतिक आदर्श तो यहाँ नहीं रहा। उसके स्थान पर बहती गंगा में हाथ धोने की प्रवृत्ति बढ़ गई है। आज के युग में राजनीति सभी प्रकार की अनैतिकताओं को पनपने में सहायक बन गयी है। जनप्रतिनिधि, जनता के राजनीतिक नेता आज जनता की पहूँच से दूर हैं। प्रजातंत्र कहने को मात्र है, वर्तमान स्थिति में प्रजा मात्र एक तंत्र(मशीन) हो गई है। नेता लोग बेरोज़गार, भ्रष्टाचार, महंगाई आदि समस्याओं के विरूद्ध नारे लगा कर अपने स्वार्थ की पूर्ति कर रहे हैं।

वर्तमान राजनीति ने अनेक समस्याएँ उत्पन्न कर जीवन मूल्यों में बिखराव तथा विषमता उपस्थित किया है। इसके प्रभाव ने मानव जीवन को बुरी तरह झकझोरा है। राजनीति ने युवापीढ़ी के मस्तिष्क में बदबू भर दी

और व्यक्ति को जीवन मूल्यों से अलग कर उसमें ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ आदि भावों से बाँध लिया है।

हमारे भ्रष्ट एवं जहरीली राजनीतिक परिवेश की तीखी अभिव्यक्ति डॉ.चन्द्रशेखर ने भी की है "भ्रष्ट शासन, जनघाती तंत्र, लुच्ची व्यवस्था, दोगली सिंहासन धर्मिता बेहया शाक्ति का वंशानुगत ध्रुवीकरण यह है कि हमारा कुल राजनैतिक पर्यावरण|"[22] आज़ादोत्तर राजनैतिक परिवेश तमाम विसंगतियों से तर गया है। सत्ता के पीछे भागने के कारण मानव जीवन मूल्यों को भूलकर व्यक्ति तक सीमित हो गया। राजनीति में आये बदलाव का समाज और साहित्य में भी प्रभाव पड़ा है। राजनीति से नाट्य-साहित्य का संबंध बहुत पुराना है। प्राचीन संस्कृत नाटकों में भी तत्कालीन सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। 'मृच्छकटिक', 'मत्तविलास', 'स्वप्नवासवदत्ता' आदि इसके उदाहरण हैं। सन् 60 तक आते-आते भारतीय राजनीति का खोखलापन खुलकर सामने आ गया। अपने युग के यथार्थ को प्रमाणिक बनाने केलिए नाटककारों ने कहीं वर्तमान संदर्भ के द्वारा, कही रूपकों के द्वारा, कहीं मिथकों के द्वारा तो कहीं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर शासन के अत्याचारों, षडयंत्रों, कुटिल नीतियों तथा उसमें निहित सभी तरह के भ्रष्टाचारों और संघर्षों को उजागर करने का

प्रयास किया है। साठोत्तर हिन्दी नाटककारों में लक्ष्मीनारायण लाल(‘यक्षप्रश्न’, ’रक्तकमल’, ’कलंकी’) , सर्वेश्वरदयाल सक्सेना (‘बकरी’,’लडाई’ तथा ‘अब गरीबी हटाओ’), सुशीलकुमार सिंह (‘सिंहासन खाली है’, ’नागपाश’), शंकर शेष (‘कालजयी’,पोस्टर), मन्नुभण्डारी (महाभोज) आदि प्रमुख हैं।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में देखे तो मृणालजी ने भी अपने नाटकों के ज़रिए राजनैतिक क्षेत्र में हो रहे अत्याचर या भ्रष्टाचार का खुला चित्रण प्रस्तुत किया है। पत्रकार होने के कारण राजनीति कैसे पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रभाव डालती है इसका चित्रण भी उन्होंने किया है। वर्तमान समाज में भूमंडलीकरण की समस्या भी बहुत बडा है। हमारे समाज में भूमंडलीकरण के अधिक प्रभाव के कारण भारतीय संस्कृति भी नष्ट हो रही है। राजनीति में भी इसका खूब प्रभाव पडा है। वर्तमान समाज में व्याप्त राजनीतिक विसंगतियों को हमारे सामने लेखिका ने प्रस्तुत किया है।

2.3.1.राजनैतिक अव्यवस्था

मृणालजी ने अपने नाटकों के ज़रिए राजनीति के क्षेत्र में होने वाली अव्यवस्था का चित्रण किया है। नेता लोग वोट लेने केलिए जनता को कई तरह के वादे देते हैं। गद्दी प्राप्त करने पर वे जनता को भूल जाते हैं। यह बहुत बडी विसंगति है। राजनीति के क्षेत्र में सर्वत्र भ्रष्टाचार का बोल-बाला हम देख सकते हैं। राजनीति आज एक पेशा मात्र बन गई। आज लोग अपने

स्वार्थ लाभ केलिए राजनीति में प्रविष्ट हो रहे हैं, देश प्रेम व देश सेवा उनका लक्ष्य नहीं है। इन लोगों केलिए राजनीति पैसा कमाने का ज़रिया है।

मृणालजी ने अपने नाटक 'चोर निकल के भागा' में राजनैतिक अधिकारियों की मानसिकता व्यक्त किया है। लेखिका ताजमहल की चोरी के माध्यम से आज की राजनैतिक क्षेत्र में होने वाले अत्याचारों का पोल खोला है। अखबारों में ताजमहल की चोरी को लेकर खबर आ गई है। इसमें संसद में भी अधिकारियों का वाद-विवाद हो रहा है। अधिकारी को उच्चालय का निर्देश आता है "उच्चालय का निर्देश चुनाव सिर पे हैं। ताज की चोरी हो गई कहने से जो तारीफ मिली है- एक दम कट जावेगी।"[23] नेता लोग हमेशा अपनी कुर्सी को स्वस्थ रखना चाहते हैं। उसको ताज की चोरी होने से कोई संकट नहीं है। भारतीय संस्कृति के प्रेम प्रतीक और कला के मूर्तिमान स्तूप के नष्ट हो जाने की चिंता उन्हें नहीं है। अगले चुनाव में जीतकर फिर से सत्ता को अख्तियारने में वे व्यस्त हैं। ये आज की वर्तमान विसंगति है। अच्छे अधिकारियों की आज कमी हो गयी है। ताज की सुरक्षा करने के बदले उसे लेकर चर्चा मात्र वे कर रहे है। कर्मचारी लोग भी सत्ताधिकारियों के निर्देशानुसार काम करते हैं। इसलिए मूल्य भी नष्ट हो रहे हैं।

मृणालजी के 'शर्माजी की मुक्ति कथा' में हाईकमान के निर्देश के अनुसार चिकित्सा करने वाले डाक्टर का चित्रण किया गया है। समाज में डॉक्टर को देव तुल्य माना जाता है । विपदा में देवता हरदम आकर आदमी

को नहीं बला करता। इसलिए उन्होंने ईश्वर की सृष्टि की हैं। चिक्तिसक रोगी को दूसरा जन्म प्रदान करने वाला ईश्वर है। वर्तमान समाज की स्थिति बिलकुल बदल चुकी है। अनंत नारायण शर्मा एक संपादक हैं। वे अन्याय के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने वाले आदमी हैं। अग्रेज़ी से अलग भाषा में पढ़ने लिखने के कारण उन्हें पागलखाने में भेज दिया जाता है। उन्हें किसी भी प्रकार की बीमारी नहीं है। फिर भी डाक्टर उन्हें गोलियाँ खाने को देता है। हाईकमान के प्रश्नों को कैसा उत्तर देना ये सब डाक्टर उन्हें सिखाता है। अनंत नारायण सहमत होने केलिए तैयार नहीं हैं। उनका कथन है "देखिए डाक्टर साहब, आपको अच्छी तरह मालूम है कि मैं नाटक नहीं करता। मैं न पागल था, न हूँ। और इसीलिए मेरी यह सज़ा और आपका इलाज और ये सब सलाहें मेरे साथ एक क्रूर, जंगली और अपमानजनक मज़ाक हैं।"[24]

यहाँ एक आम आदमी की जिन्दगी को लेकर खेला जा रहा है। उच्च पद में आसीन व्यक्ति अपनी स्वार्थपूर्ति केलिए आम जनता का इस्तेमाल करते हैं। जो उससे सहमत होकर काम करते है उसे सारी सुख-सुविधायें देते हैं। असहमत होने वाले की स्थिति दर्दनाक है। उसे पागल बनाकर पागलखाने में भेज दिया जाता है। डाक्टर लोग भी उसकी सहायता प्रदान करनेवाला बन गया है। हाईकमान के निर्देश के अनुसार बीमारी न होने वाले व्यक्ति की बीमारी का इलाज वे करते हैं और रिपोर्ट भी उसके पास भेज देते हैं। इसमें डाक्टर का कथन हैं "मुझे अपने हाईकमान के आगे यह प्रमाणित करना है कि

मैं ने तुम्हारी दिमागी का सफलता से इलाज कर दिया है। और तुम्हें प्रसन्नता और आभार जताते हुए उनके आगे कहना है कि थैंक्यू, अब मैं बिलकुल ठीक हूँ सर, फिर हमें एक टीम की तरह सुर में सुर मिलाकर एक साथ गाना है कि मुझको है आशा......... हम होंगे कामयाब। सारे जहाँ से अच्छा...... वगैरा।"[25]

अनंत नारायण शर्मा अनेक सघर्षों से जूझने वाले आदमी हैं। वे किसी से डरते नहीं हैं। जो कुछ कहना है वे साफ-साफ लिखते हैं। पागलखाने में डाल दिया तो भी वे लिखना बदं नहीं करते। डॉक्टर से भी वह वाद-विवाद करता है। डॉक्टर उसे कई तरह की बातें बताकर उसे ठीक करने की कोशिश करते हैं। फिर भी वह बातों पर अटल रहने वाले हैं। अनंत नारायण कहते हैं कि “जब हाथों में कागज़-कलम छिन जाते हैं, तो भी मन में तो शब्द आते जाते हैं ही। एक लेखक के दिमाग में शब्द मीलों लम्बी डरावनी झुगी-झोंपडी बस्तियाँ बनाने लगते हैं। इन बस्तियों को जितना उजाडोगे उतनी ही बनती चली जाएँगी।"[26] डॉक्टर उससे दवा खाने केलिए धमकियाँ देता है। परिवार वालों के पास मिलने की बात बताकर उसे गोलियाँ देता है। इस नाटक में लेखिका ने समाज के उच्च पद से लेकर सभी क्षेत्र में व्याप्त विसंगति का चित्रण प्रस्तुत किया है। नेता लोग स्वस्थ रहने केलिए निम्न तबके के लोगों को दबाकर रखते हैं। उसके विरूद्ध बोलने वाले को पागल घोषित करते हैं। यह राजनीतिक अव्यवस्था का सच्चा नमूना ही है।

2.3.2. राजनीति और शासन तंत्र का बढ़ता प्रभाव:-

राजनीति आज एक धंधे के सिवाय और कुछ नहीं है। जो अमानवीय स्थिति को अपनाने में सक्ष्म है वही इस धंधे में फिट हो जाता है। ईमानदार और संवेदनशील व्यक्ति का पतन मृणालजी ने 'जो आदमी मछुआरा नहीं था' नामक नाटक में दिखाया है। जिस व्यक्ति को बाजारू दृष्टिकोण नहीं है, वह राजनीति में असफल बन जाता है। नन्ददुलारे के माध्यम से लेखिका इस प्रकार की विसंगति को उभारा है। नन्ददुलारे मध्यवर्गीय लोगों के हथियारा बनकर राजकर्मचारी पद प्राप्त करता है।

राजनीति अपनी भिन्न-भिन्न छवि हमारे सामने प्रस्तुत करती है। यह रूप वास्तविकता का नहीं बल्कि बनावटी का मात्र है। आज राजनीतिज्ञ अंग्रेजी शासन के दमघुटते वातावरण से मुक्ति की बात बताकर और स्वतंत्रता की सुदंर कल्पना को परोसकर लोगों को ललचाते हैं। वे इस तरह अपनी तानाशाही को छिपाते हैं। प्रस्तुत नाटक में बूढ़ा-बूढ़ी के माध्यम से अंग्रेज़ी शासन नीति एवं वर्तमान राजनीति के उद्देश्य की भिन्नता को व्यक्त किया गया है। इस सत्य को बूढ़ी ने प्रतिकात्मकता से व्यक्त किया है।"पछुआ चले या पुरवइया-वह तो निमित्त-भर है। अरे जो धरती पे आया, उसे धरती ने खाया।"[27]

आज राजनीति को ईमानदार व्यक्तियों की सेवा नहीं उनकी छवि से मतलब है। नन्ददुलारे को इसीलिए पदोन्नति दी जाती है कि समाज में उसकी छवि अच्छी है। नन्ददुलारे की ईमानदारी को सत्ताधारी कभी भी मानने केलिए तैयार नहीं हैं। नन्ददुलारे जैसे आदमी राजनीतिज्ञों के हाथ के मोहरे हैं। जब ऐसे 'आदमी' उनके 'मोहरे' बनने को तैयार नहीं होता उसका पतन निश्चित होता है। नन्ददुलारे जैसे ईमानदार व्यक्ति की बात एवं सोच तक में भी पाबन्दी लगाई जा रही है। उनके पदों से हज़ारों लोगों की आस्था जुड गयी है इसीलिए वे स्वार्थ सत्ताधिकारियों के आगे झुकने केलिए विवश है "और उसके लिए मुझे खुद जो झुकना होगा सो? जानते हैं आप कि निजी सलाहकार के दिन अपने नहीं होते, न ही रातें। उसके हर शब्द पर हज़ारों की जाने झूलती हैं, उसकी कलम से निकलने हर अक्षर पर अरबों के वारे-न्यारे हो जाते हैं और कैसे-कैसे घाटिया लोगों का घेरा दिन-रात उसके कार्यलय के गिर्द खिंचा रहता है।"[28] नन्ददुलारे को एक आदमी की तरह व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने की आज़ादी नहीं है। सिर्फ एक बाज़ारू दृष्टि वाली व्यक्ति ही ऐसी व्यस्तता से पूरा फायदा उठा सकते है। यहाँ नन्ददुलारे संवेदनशून्य मछुआरा नहीं था बल्कि वह 'आदमी' था। ऐसी आदमी का पतन निश्चित है।

2.3.3. प्रजातंत्र और राजनीति में अखबारों की भूमिका:-

समाचार पत्र समाज का अभिन्न अंग है। यह राजनैतिक लोगों की स्वतंत्र इच्छाओं की अभिव्यक्ति और चयन की क्षमता के प्रयोग का सबसे संगठित और सुस्पष्ट माध्यम है। आज की राजनीति में बाज़ारीकरण ने अपने एकछत्र अधिकार को स्थापित किया है। इसके कारण सांस्कृतिक मूल्य नष्ट होने लगा है। इस ने एक प्रकार की सत्तात्मक या आर्थिक निरंकुशताओं को जन्म दिया है। राजनीति आज संस्कृति के बिक्रेता बन गयी है। राजनीति के द्वारा प्रजातंत्रीय शासन संभालनेवाले इसके बिचौलिए जैसे लगने लगे हैं। हमारी भारतीय संस्कृति बिकाऊँ चीज़ बन गया है।

मृणालजी के नाटक 'चोर निकल के भागा' में ताज की चोरी की खबर पर समाचार पत्र में विविध प्रकार के प्रस्ताव निकलते हैं। अपनी युक्ति के अनुसार पत्रकार समाचार प्रस्तुत करते हैं। इस मसाले को लेकर राजनीतिज्ञों की जो प्रतिक्रिया है उसका मार्मिक चित्रण नाटक में है। विपक्षियों की प्रतिक्रियाओं का समाचार अखबार में इस प्रकार आता है कि "ताज की सुरक्षा के सवाल पर विपक्ष द्वारा वाक आउट" इस में यह भी बताया गया है कि इस नापाक साजिश के पीछे अमेरिकी, पूंजीवादी, साम्राज्यवादी ऐजंसीयों का हाथ है। इस प्रकार राजनीति के क्षेत्र में जो घटनायें, तर्क-वितर्क आदि को जनता के सामने प्रस्तुत करने केलिए समाचार पत्र किस प्रकार का दायित्व निभा रहे हैं, उसका पता हमें मिलता है। समाचार पत्र देश का प्रहरी है जिसे

जनतंत्र का 'चौथा स्तंभ' भी कहा जाता है। गलत खबर देकर समाचार पत्र आजकल अधिकांश जनता को गुमराह कर रहे हैं। इस नाटक में पत्रकारिता के क्षेत्र में मौजूद अनैतिकता एवं दायित्वहीनता पर भी प्रकाश डाला गया है।

युवा पीढ़ी भी आज राजनीतिज्ञों के हाथ के मोहरा बन गयी है। युवकों में राष्टीय भावना और राजनीतिक चेतना की कमी है। युवा लोग गलत रास्ते पर चलकर देश में संकट की स्थिति पैदा करते हैं। इस नाटक में यह बताया गया है कि सरकार ने सदन को पूरा आश्वास दिया है कि ताजमहल की चोरी की तथाकथित धमकी के मामले की गहरायी से छानबीन की जा रही है। सरकारी बयान आगे यों बताता है -"सरकारी सूत्रों ने इस खबर को भी निराधार तथा शरारत पूर्ण बताया कि विदेशी मुद्रा अर्जित करने केलिए भारत सरकार विश्व बैंक के दबाव से ताजमहल को विकसित देशों के गुट के हाथों गिर्वी रखने को बाध्य हुई है।"[29] इस विषय पर केन्द्रीय कला तथा संस्कृति विभाग के प्रवक्ता का कथन भी है "आज एक पत्रकार ने सभा में आश्वासन दिया है कि भारत की स्थापत्य कला तथा प्रेम के पवित्रतम प्रतिक ताज तक पहूँचने की दुश्मनों की हर तरकीब नकाम कर दी जायेगी। उन्होंने सदन को यह जानकारी भी दी कि सरकार के हाथ कुछ ऐसे गुप्त सूत्र लगे हैं, जिनसे साबित होता है कि कार्यवाही का संचालन बहुत बड़े पैमाने पर एक बहुत धन संपन्न विदेशी गुट द्वारा किया जा रहा है, जिसके प्लानों की पूरी जानकारी सरकार को है।"[30] सरकार ने ताज की सुरक्षा केलिए अनेक प्रकार

की घोषणायें की है। राजनीति में आज की स्थिति भी ऐसी है। किसी भी घटना के बारे में खबर मिलते वक्त से लेकर अनेक प्रकार की घोषणायें की जाती हैं। उनके पास कई वाद हैं और करनी भी ।

राजनीति में मीडिया की शक्ति और सीमा:-

आदमी की संवेदनशीलता को बढ़ाये रखने या मिटाने में समाचार पत्रों की भूमिका बहुत बड़ी है। इससे जुडे राजनीतिक हस्ताक्षेप को नकार भी नहीं सकते। आज पत्रकारिता के क्षेत्र में भी भ्रष्टाचार का बोल-बाला है। ऐसे भ्रष्टाचारी पत्रकार सत्ता के उच्च पद पर आसीन व्यक्तियों के अनुसार समाचारों को जनता के सामने प्रस्तुत करते हैं। पत्रकार समाज से सरोकार रखनेवाला है। मृणालजी ने अपने 'नाटक आदमी जो मछुआरा नहीं था' में सामाजिक सरोकारों से दूर रहनेवाले पत्रकार का चित्रण किया है। आज के पत्रकार भारत के आम आदमियों की समस्याओं से अवगत नहीं हैं। दूसरा वह वास्तविकता से ज़्यादा सेनसेशन को महत्व देते हैं। राजनीति में समाचार पत्रों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। जिसके पास अधिकार है, सत्ता है पत्रकार उसके अनुकूल लिखता है। यही आज की पत्र और पत्रकार की स्थिति है।

आज समाचार पत्र सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। पत्र की शक्ति असीम है। समाचार पत्रों द्वारा देश की उन्नति एवं अवनति दोनों संभव हैं। सच्चा समाचार पत्र जनता के विचारों का वाहक है। पूंजीपति लोग समाचार पत्रों के मालिक होते हैं और ये अपने पत्र के प्रचार करते रहते

हैं। कुछ समाचार पत्र सरकारी नीति की भी पक्षपातपूर्ण प्रशंसा करते हैं। कुछ ऐसे पत्र भी हैं जिनका एकमात्र उद्देश्य सरकार का विरोध करना है। राजसत्ता की तरह बड़े सत्य के समक्ष छोटे सत्य को उपेक्षित करने का रवैया पत्र भी अपनाते हैं। सत्ता का विमर्श समाचार पत्र का वास्तविक विमर्श है। पत्रकार का काम खबर देना मात्र नहीं है। सत्ता की रक्षा करना भी है। इसीलिए वह जनता को खबर देकर जनता की भी खबर लेती है।

मृणालजी के नाटक में नन्ददुलारे एक संवेदनशील राजकर्मचारी है। उस से इटरंव्यू लेने केलिए कूरियर पत्र से लोग आते हैं। यहाँ नन्ददुलारे बेटी ममता से जिम्मी का परिचय इस प्रकार देते हैं “बेटे, ये हैं जिमी। मुल्क के इस वक्त एक बहुत अच्छे और होनहार पत्रकार। हम थरथर काँपते हैं इनकी कलम से-क्यों ?”[31] जिमी और बनी पत्रकार हैं, दोनों नन्ददुलारे के यहाँ इटरव्यूं लेने केलिए आये हैं। नन्ददुलारे जैसे ईमानदार व्यक्ति के मुँह से कई प्रकार के प्रश्नों का उत्तर लेते हैं। भ्रष्टाचार के विरोधी होने के कारण कर्मचारियों के बीच भी उनका स्थान अच्छा नहीं है। उनका पतन सामने देख कर ये लोग आते हैं। नन्ददुलारे से बातें करते हैं। पत्रों में उसके विरूद्ध लिखते हैं। नन्ददुलारे जैसे सच्चे आदमी की ज़िन्दगी में कीचड उछालकर देते हैं। सच्ची खबर जानकर भी ये गलत खबर देते हैं। आज की हालत भी ऐसी है। धन और अन्य सुख-सुविधा प्राप्त करने केलिए या कुरसी को स्वस्थ रखने केलिए काम करने वाले कई व्यक्ति हैं। भारत जैसे देश में कई राजनैतिक दल हैं। जो राजनैतिक दल शासन करता है उसकी मर्जी के अनुसार समाचार पत्रों में

खबर छपता है। मृणालजी ने इस नाटक में पत्रकारिता के क्षेत्र में राजनीति के कार्य व्यवहार किस प्रकार होते हैं; उसका स्वरूप प्रस्तुत किया है।

2.4. आर्थिक संदर्भ:-

समाज में बढ़ती हुई अर्थलोलुपता ने व्यक्ति को धूर्त, अवसरवादी और स्वार्थी बना दिया है। अर्थोपार्जन हेतु आदमी ईमानदारी को छोड सब हथंकडे अपनाता है। इस अर्थप्रधान युग में आदमी आदमीयत को छोडकर पैसा ही 'मूल्य' समझता है। अर्थ को महत्व ज़्यादा देने के कारण मानव मानव के बीच का आपसी संबध भी नष्ट हो रहा है। मृणाल पाण्डे जी ने समाज में अर्थ के माध्यम से होने वाली समस्याओं का चित्रण नाटक में खूब किया है। धन के पीछे भागते आदमी के चित्रण के साथ-साथ बेकारी और गरीबी की समस्या को भी नाटक में उभारा गया है।

2.4.1. अर्थिक तंगी के कारण टूटता मानवीय मूल्य:-

आर्थिक तंगी के कारण मानवीय मूल्यों में भी ह्रास देखने को मिलता है। 'काजर की कोठरी' नामक नाटक के ज़रिए लेखिका ने आर्थिक तंगी के कारण उत्पन्न शोषण का चित्रण किया है। पिता द्वारा लिखी गयी वसीयत के कारण शोषण के शिकार बनती सरला की कहानी नाटक में चित्रित है। धन-दौलत हडपने केलिए विवाह के पूर्व दिन सरला को भाई द्वारा उठाया

गया। वह उसे कैद करके रखता है। सब सरला की खोज में है। सरला की रक्षा करने केलिए पारसनाथ (भाई) लालसिंह (सरला के पिता) से पैसा मांगता है। “मेरी बातों में रत्ती-भर भी झूठ हो तो जो सजा चोर की, सो मेरी। मैं छाती ठोक के दावे के साथ कहता हूँ कि अगर आप खर्चों की पूरी-पूरी मदद करेंगे तो मैं थोडे ही दिनों में ये सब बातें सिद्ध करके दिखा दूँगा।"32 पारसनाथ को सरला के बारे में सब पता है। वह भी बहन की रक्षा करने के बहाने धन कमाना चाहता है। इसमें लेखिका ने घटते मानवीय संबंधों को दर्शाया है। स्वार्थता के कारण संयुक्त परिवार में भी टूटन संभव है। यहाँ अर्थ को मानव से ज़्यादा मूल्य दे रहा है। अर्थलोलुपता के कारण परिवार बिखर रहा है। अर्थ के मोह के कारण हरनन्दन(दूल्हा) भी सरला की खोज में निकलता है। वह इसीलिए वेश्याओं से भी सहायता माँगने केलिए तैयार हो जाता है। वह भी सरला के प्रति होनेवाले प्रेम के कारण से नहीं बल्कि विवाह करने से मिलने वाले दहेज की रकम केलिए यह सब करने को तैयार निकलता है। हरनन्दन के ये वाक्य इस केलिए उदाहरण हैं “और नहीं तो क्या? हम लोगों के जनानखानों में इतनी रहती हैं, क्या उसके लिए ठौर न होगी?”33 हरनन्दन वेश्याओं से भी संबन्ध रखता है। उसी के माध्यम से वह सरला का उद्धार भी करता है। अंत में विवाह भी करता है। हरनन्दन के मन में अर्थ के प्रति लालच है। अर्थ पाने केलिए वह सब कुछ करने केलिए तैयार हो जाता है। इन दोनों के बीच में पडकर सरला शोषण की शिकार बन जाती है। मृणालजी

ने इस नाटक में आज के समाज में होनेवाले अत्याचारों का खुलासा किया है। अर्थ पाने केलिए मनुष्य आपसी रिश्ता भूलकर सब कुछ करने केलिए तैयार हो जाते हैं। इसमें नारी के प्रति होने वाले अत्याचारों का भी वर्णन है। समाज में प्रचलित दहेज प्रथा प्रणाली के कारण दु:ख झेलने वाली सरला के माध्यम से लेखिका ने पाठकों को जगाने का कार्य किया है।

इस नाटक में लालसिंह की कथन भी महत्वपूर्ण है "ठीक है,रूपया ऐसी चीज़ है। रुपया के वास्ते लोग सभी कुछ कर गुज़रते है, भला-बुरा सब भूल देते हैं। लेकिन जिस तरह रुपये केलिए वे लोग तुम्हारी बेइज्जती कर सकते हैं, उसी तरह तुम भी तो अपना रुपया बचाने केलिए बेइज्जती सह सकते हो।"34 इस वाक्य से भी स्पष्ट होता है कि अर्थ पाने केलिए लोग भले-बुरे सब करने केलिए तैयार हो जाते हैं।

'सुपरमैन की वापसी' नाटक में मिस मटक्को नामक अभिनेत्री अपने नष्ट हुई हार की खोज में सहायता मांगने केलिए सुपरमैन के पास आती है। उसका पति हार चुराकर हेयर ड्रेसर के साथ भाग गया है। मिस मटक्को हार और हेयर ड्रासर को वापस लाना चाहती है। इस में नष्ट होते मानवीय मूल्यों का चित्र खींचा गया है। मिस मटक्को के यह वाक्य इसका उदाहरण हैं "व्हाट नानसेंस! प्यार ? उस छिपकली के गिलगिले बच्चे से?

नैवर! सुनिए- मैं उसे कतई वापस नहीं लाना माँगती-मुझे तो मेरी हेयर ड्रेसर मिस मिंकी! मेरी तमाम विग वही सैट करती रही है।"[35]

'चोर निकल के भागा' नामक नाटक में भी घटते मूल्यों का चित्रण है। इसमें यह फैंटसी प्रस्तुत हैं कि युवा लोग धन कमाने केलिए ताजमहल की चोरी करते हैं। इसमें एक कथापात्र है नीता। नीता का भाई बब्बर सारी धन-दौलत हडपता है। उसे अकेला छोडकर विदेश चला जाता है। अर्थ के सामने मानवीय संबन्ध तुच्छ वस्तु बन गया है। नीता कहती है कि "माँ-बाप की जायदाद तो आधों आध हम दोनों के नाम थी, पर अफसोस कि भाई ने हेराफेरी करके दबा ली। अब मैं हूँ, ओ मेरी पार्टटायम नौकरियाँ हैं- औ दोस्तों की ओट है।"[36] आज के ज़माने में अर्थ ही सब कुछ है। अर्थ के बिना मानव जी भी नहीं सकता। अपनी स्वार्थता की पूर्ति केलिए आज वह कुछ भी कर सकता है। समाज में व्याप्त इस प्रकार की भीषणता को मृणालजी ने उजागर करने का प्रयास किया है।

2.4.2. अभावग्रस्तता के कारण उत्पन्न दिशाहीनता:-

'चोर निकल के भागा' नाटक में बेकारी की समस्या को भी दर्शाया गया है। इसमें चार युवा लोग हैं अभावग्रस्तता के कारण दिशाहीन हो जाते है। मृणालजी ने हास्य-व्यंग्य के माध्यम से आज की समसामयिक

समस्या को उजागर किया है। ये पढ़े-लिखे युवा लोग हैं। नौकरी न मिलने के कारण चारों मिलकर हर दिन बहसें करके बैठते हैं। उस समय वहाँ बाबा आता है। बाबा उन लोगों की परेशानी दूर करने केलिए आया व्यक्ति ही है। बाबा अपने वचनों से चारों लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है। बाबा का कथन है- "बस, बस, बस! त्रिकालदर्शी बाबा ने सब जान लिया- तुम चारों का मूल कष्ट है धनाभाव। पैसे की तंगी-लैक ऑफ मनी-ठीक ?"[37]बाबा उन लोगों को अणिमा, गरिमा नामक दो भभूत देता है। उसके द्वारा पैसे कमाने का आदेश देकर चला जाता है। बाबा भभूत के माध्यम से ताजमहल की चोरी करने तक वे सोचता है। बाज़ारीकरण का बढ़ता प्रभाव भी इसमें देखने को मिलता है। ताजमहल की चोरी करके उसे वे विदेश में बेचना चाहते हैं। भूमड़लीकरण के इस दौर में उपभोक्तावादी संस्कृति में अर्थ पिपासा कई तरह के अपराधों को जन्म देती है। छोटे-तबके से लेकर बडों तक इस में लिप्त हैं। अर्थ लिप्सा के कारण जघन्य अपराधों का कोई अंत भी नहीं है। महानगरों में गली के स्थानीय गुंडे से लेकर देश-विदेश में कुख्यात माफिया और अंडरवर्ल्ड डॉन अपराध कर्म से अपरिमित धन कमाते हैं। वह अर्थ के बल पर राजनीतिकों को भी खरीदकर अपना दास बना रहे हैं। पुलिस और न्याय व्यवस्था उनका कुछ भी नहीं बिगाड सकती। इसलिए वे अपराधिक कर्मों के माध्यम से आज धन कमा रहे है। 'चोर निकल के भागा' नाटक में यह स्पष्ट देखने को मिलता है। गेंदालाल भभूत और मंत्र की तिलस्मी शक्ति के सहारे

इसी तरह के अपराधिक मार्ग से धन प्राप्त करने की योजना बनाता है। शरीफा की सलाह है "मेरी नानी कहती थीं कि अगर गोताखोरी करनी ही हो, तो कुएँ-बावडी के बजाए समन्दर में गोता लगाओ-डूबना तो दोनों जगह से हो सकता है, पर समन्दर में कूदो तो स्यात् कोई मोती हाथ लग जाए!"[38] इसीलिए गेंदालाल ताजमहल को चुराकर विदेशी हाथों में बेचने की योजना बनना है। लेखिका ने इस नाटक के ज़रिए यह दिखाया है कि अर्थ केलिए युवा पीढ़ी कोई भी अपराध करने केलिए तैयार हो जाती है।

2.5. सांस्कृतिक संदर्भ:-

संस्कृति जीवन को समृद्ध बनाती है। संस्कृति का संबन्ध किसी जाति के बौद्धिक विकास से है। ये मूलत: रहन-सहन, विचार-व्यवहार, खानपान आदि एक विशेष पद्धति वाली सामूहिक इकाई है। इसकी छत्र छाया में समाज सुविधाजनक रहता है। डॉ.अरविन्दाक्षन ने संस्कृति की परिभाषा इस प्रकार की है -"संस्कृति स्वस्थ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा मानवीय दृष्टि से उत्पन्न गंभीर अवधारणा है जिसको हमने अपने अपने ह्रदय में अपनी संवेदना में तथा आचरण में स्थान दिया है।"[39]

मृणाल पाण्डे जी ने भी अपने नाटकों के ज़रिए भारतीय संस्कृति को उभारा है। आज के समकालीन दौर में बाज़ारवाद का प्रभाव सब कहीं देखने को मिलता है। बाज़ारवाद का प्रभाव भी संस्कृति में पडा है। फलस्वरूप

अच्छे भारतीय मूल्यों का भी आज ह्रास हो रहा है। पुराने ज़माने से लेकर अब तक भारतीय संस्कृति में कैसा बदलाव आया है इसका अंकन उनके नाटकों में चित्रित है। बाज़ारवाद और अपसंस्कृति का प्रभाव उनके 'चोर निकलके भागा' नाटक में देखने को मिलता है। ताजमहल की चोरी को फैंटसी व कल्पना के माध्यम से लेखिका भारतीय संस्कृति पर मंडराती ऐसी समस्या को पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है।

2.5.1. कला और संस्कृति में आनेवाला अपसंस्कृति का प्रभाव :-

कला और संस्कृति के क्षेत्र में भी बाज़ारीकरण का प्रभाव हम खूब हम देख सकते हैं। आज इक्कसवीं सदी है। अब भी भूमंडलीकरण को एक बडी चुनौती के रूप में लेना होगा। बेचना-खरीदना उपभोक्तावादी सभ्यता की एक मात्र सामाजिक क्रिया है। इसलिए इसमें दो ही वर्ग मौजूद हैं विक्रेता और उपभोक्ता, व्यापार एकमात्र आपसी रिश्ता है। कला अब व्यवसाय है, सौंन्दर्य उपभोग की वस्तु है। इसलिए सौंन्दर्य प्रसाधनों की आवश्यकता कई गुना बढ़ी है। 'चोर निकल के भाग' नाटक में 'ताजमहल' की चोरी के दृश्य के माध्यम से वर्तमान उपभोक्तावादी बाज़ारू दृष्टिकोण की भीषणता को लेखिका ने व्यकत किया है। बड़ी दु:ख की बात है कि कलाकार ही कला को नीलाम करने के लिए सन्नद्ध हैं। गेंदालाल और शरीफा ने भी कला और प्रेम केलिए अभावों में भी प्रेम-भाव के सहारे ज़िन्दगी बितायी है। गेंदालाल और

शरीफा निरीह भारतवासी का प्रतीक है जो विज्ञापन के चकाचौंध में और धर्म गुरू (बाबा) के जादू में विश्वास करके उनका अनुसरण करते हैं।

भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों का ह्रास यहाँ हो रहा है। आधुनिक दौर में मानव धन के पीछे भागते हैं। आगे -पीछे की कोई चिंता भी उन्हें नहीं है। बेकार होने के कारण पढ़े-लिखे लोग भी धनार्जन केलिए कुछ भी करने केलिए तैयार हो जाते हैं। इसलिए ताजमहल चुराकर वे विदेश में बेचने की योजना बनाते हैं। वे विज्ञापन देकर विदेशी शक्तियों को आकर्षित कराते हैं। कहते हैं- भारतीय संस्कृति की शान है यहाँ की मूर्ति कलायें। अब ये सब नष्ट हो गए हैं। यहाँ की छोटी-छोटी वस्तु को तो विदेशी खरीदकर सुरक्षित रखते हैं। नीता का कथन है “जब गुजरात की टूटी कडछी और उडीसा का फूटा तवा तक हज़ारों डालरों में बिक जाते हैं, तो अच्छे ताज को तो कहना क्या! मैं ने अपनी आखिरी नौकरी में थोडी कॉपीराइटिंग की थी- मैं कल्पना में देख सकती हूँ, उसकी सुनहरी कॉपी- ‘बिकाऊ है, काल के गाल पर कहरा हुआ वह अनमेल आँसू, अमर प्रेम का अमर प्रतीक दि ताज, ठाज महौल, दि एट्थ वंडर ऑफ दि वेल्ड। युअर्स ओनली फॉर।”[40] आज प्रेम, कला, सौन्दर्य विलासिता जन्य मानसिकता उपभोग संस्कृति की निशान है। भारतीय संस्कृति पर अपसंस्कृति का प्रभाव खूब देखने को मिलता है।

राजनैतिक क्षेत्र के लोग भी ताजमहल को लेकर बहसें करते हैं। लेकिन चोरी से बचाने केलिए कोई भी कार्य यहीं करते हैं। चुनाव में जीत हासिल करने केलिए और कुरसी को कायम रखने केलिए मात्र काम कर रहे हैं। उन्हें भी कला पर होनेवाले अत्याचारों के प्रति चिंता नही है। सांस्कृतिक मूल्य च्युति हर कहीं देखने को मिलती है। मृणालजी ने भारतीय संस्कृति पर होनेवाली अपसंस्कृति की भयानकता को पाठकों के सामने रखा है। संस्कृति में बाज़ारीकरण का भी प्रभाव बढ़ा है। माल बेचने केलिए विज्ञापनों की सहायता ली जाती है। आकर्षक विज्ञापनों के ज़रिए लोगों को माल खरीदने केलिए विवश कर दिया जा रहा है।" विज्ञापन हम कुछ इस तरह से दे सकते हैं कि आप के एकदम अपनों केलिए उनके एकदम अपने दो कालजयी प्रेम कंकाल, एक कीमत......... इतनी........इतनी.............जोडी खरीदने पर दस प्रतिशत छूट।"41 फलस्वरूप मानवीय मूल्यों में भी गिरावट देखने को मिलती है। आधुनिक युवा पीढ़ी दिशाहीन हो रही है। पढ़े-लिखे लोग भी नौकरी न मिलने के कारण अनुशासनहीन बनने केलिए विवश हैं। सामाजिक व्यवस्था भी अस्त-व्यस्त है। मशीनी सभ्यता के कारण मानव भी यंत्र के रूप धारण कर रहे हैं। पुराने-ज़माने की संस्कृति आज नया रूप ले रही है।

बढ़ती उपभोग संस्कृति ने भारतीय संस्कृति पर भी हमला किया है। ताजमहल भारत का शान है। लोग ताजमहल को भी उपभोग की वस्तु मात्र मान लिया है। ताज तो प्रेम और पवित्रता का प्रतिक है। लेखिका ने

'ताजमहल' को एक प्रतीक के रूप में हमारे सामने रखा है। उपभोग संस्कृति किस हद तक पहूँच सकती है इसका उदाहरण उन्होंने इसमें दिखाया है। उन्होंने अनेक काल्पनिक कथापत्रों के माध्यम से उपभोक्तावादी संस्कृति को दर्शाने की कोशिश की है।

2.5.2. अपसंस्कृति लाने में अखबार और मीडिया का योगदान:-

कला और संस्कृति को बाज़ारीकृत करने में संचार माध्यमों में समाचार पत्रों की अपनी अहम भूमिका है। आज समाचार पत्र भी अपने कर्तव्य से भ्रष्ट चुका है। आज वह 'सनसनी खबर' को महत्व देकर अपनी बिक्री को ज़्यादा महत्व देता है। कभी समाचार पत्र राजनीति पर कीचड उडाने या दिशा भ्रष्ट कराने का माध्यम बनता है।

'चोर निकल के भागा' नाटक में ताज की चोरी की खबर विविध समाचार पत्रों में विविध ढंग से व्याख्यायित की जाती है। पत्रकार इस के पीछे के रहस्य खुलने की तलाश नहीं करते हैं। वे केवल ताज का महत्व और ताज़े हालत को प्रस्तुत करते हैं। नाटक में दिखाया गया है कि अखाबार इस खबर को क्यों लिखता हैं "अब प्यार के अनमोल प्रतीक ताज पर भी आंतक का शिकंजा! गुमनाम गुट की धमकी – क्या दुनिया से प्रेम और सुन्दरता मिट जाएगी?क्या भारत अपने मादे का जगमगाता रतन, अपना ताजमहल-अपनी सबसे अनमोल कला-धरोहर? क्या हम देखते रहेंगे और देश की संस्कृति लुट

जायेगी? भारतवासियों जागो! वेक अप इंडियंस !"[42] समाचार को पत्रकार सनसनी ढंग से प्रस्तुत करता है। केवल ताजमहल की सुन्दरता को भी दर्शाया जाता है। ताजमहल की चोरी के पीछे होने वाली बातों का खबर कुछ भी नहीं है। इस प्रकार केवल बहिरंगी तत्व को महत्व देकर जीते-जागते यथार्थ को छिपाने की कोशिश की जाती है।

पत्रकार सच्ची वास्तविकता को जानते बिना खबर देते हैं। इसमें तनिक भी यथार्थ नहीं है। ताजमहल की चोरी की खबर दूसरे पत्र के पत्रकार ने यों प्रस्तुत किया है -"राज का ताज और ताज का राज' जरूरत यह नहीं कि ताज को आज तस्करों के किस गिरोह से खतरा है- इसका पता लगाया जाए। जरूरत इस बात की है कि पहले यह पता किया जाए कि इस गिरोह के पीछे सत्तारूढ दल के कौन-कौन से लोग हैं? हमारे यहाँ के पत्रकार चूँकि होमवर्क करते नहीं, तरह-तरह की अटकलबाजियाँ लगाई जा रही हैं। मैं, यद्यपि इस वक्त राजधानी में नहीं हूँ बल्कि स्विट्ज़रलैड में छुट्टी मना रहा हूँ –इस वक्त भी अपनी भारतीय दोस्तों से ज़्यादा जानकारी रखता हूँ।"[43] वह कुछ फोटो के माध्यम से खबर देता हैं कि इस फोटे में देखनेवाला ही ताजमहल की चोरी की होगी।वास्तव में पत्रकार को यथार्थ घटना मालूम नहीं है फिर भी वह अपने पास रखे हुए फोटो के माध्यम से लोगों को जागृत करने की कोशिश करता है। आज के समाचार पत्रों में विज्ञापनों का आधिक्य देखने को मिलता है। बाजारू

संस्कृति का प्रभाव हर कहीं देखने को मिलता है। मृणालजी के 'शर्माजी की मुक्तिकथा' नामक नाटक में भी पत्रकारिता के क्षेत्र में व्याप्त विडंबना को दर्शाया है। सच्ची खबर स्पष्ट रूप से लिखकर छापने के कारण आनदनारायण को पागल बनाकर सेल में डाल दिया जाता है। समाचार पत्रों में अब सच्ची खबर बहुत कम है। बाज़ारीकरण का कुप्रभाव फैला जा रहा है। मीडिया और अखबार वास्तविकता को छिपाकर सेनसेशन केलिए खबर देते हैं। इस प्रकार हमारी संस्कृति में अपसंस्कृति फैलने लगती है।

मृणालजी के 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' नाटक में भी पत्रकारिता के क्षेत्र में आने वाले अत्याचारों को दर्शाया गया है। नन्ददुलारे राजकर्मचारी के पद पर आसीन संवेदनशील व्यक्ति है। पत्नी के इच्छानुसार वह यह पद ग्रहण करता है। वह भ्रष्टाचार विरोधी भी है। नन्ददुलारे से इटंरव्यू लेने केलिए दो पत्रकार आते हैं। नन्ददुलारे के बारे में सब कुछ जानकर वे आये हैं। जिमी का कथन इस प्रकार है फिर वह नन्ददुलारे के खिलाफ पत्र में लिखता है। सेनसेशनल न्यूज़ लिखना उनका काम है। सच्चाई को छिपाकर पत्रकार गलत खबर लोगों को देते हैं।

2.5.3. पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव:-

संस्कृति किसी भी व्यक्ति समाज अथवा राष्ट्र के परिष्कृत आंतरिक गुणसमुदाय का नाम माना जाता है। संस्कृति के व्यापक अर्थ में मानव समाज के संस्कार, विश्वास मान्यताएँ, धर्म-दर्शन नैतिकता आदि सब गुण समाहित

हैं। प्राचीन भारतीय संस्कृति विश्व केलिए अनुकरणीय रही है। भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताओं में आध्यात्मिकता पुनर्जन्म और कर्मफल, पुरूषार्थ चतुष्टय, सहिष्णुता, त्याग-उदारता, आस्तिकता एवं समन्वय की भावना मुख्य है। भारत में भी सांस्कृतिक विघटन की प्रक्रिया द्रुतगति से हो रही है। आज के वैज्ञानिक दौर में पाश्चात्यीकरण और बौद्धिकता के कारण संस्कृति परिवर्तन की दृष्टि से भारत न तो पूर्णतया परंपरा से विमुक्त हो पा रहा है और न ही नूतनता को पूर्ण समर्पित। एक ओर वह पुरानी परंपराओं को पूज रहा है और दूसरी ओर नये मूल्यों को महत्व दे रहा है।

मृणालजी के नाटकों में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव हम देख सकते हैं। 'चोर निकल के भागा' नाटक में बाज़ारीकरण का प्रभाव दर्शनीय है। पुरानी सडी गली परंपरा के साथ दोबारा जुडना भी बाज़ारीकरण का परिणाम है।लोग आज के इस वैज्ञानिक युग में भी ज्योतिष पर विश्वास करते हैं। ताजमहल की चोरी के अवसर पर गेंदालाल का कथन है "ताज की कुंडली में मार्कण्डेय योग हैगा- सूर्य बुध से और शनिचर मंगल से सपोर्ट पा रहा है, अभी राहू का जो खतरा है, सो आते-आते टल रहा है।"[44]

बूढ़े लोगों की मानसिकता में बदलाव नहीं आता। नयी पीढ़ी के लोग विदेश जाकर पढ़ने और नौकरी करना पसन्द करते हैं। मध्यवर्गीय ज़िन्दगी में भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव हम देख सकते हैं। मृणालजी के नाटक 'जो आदमी मछुआरा नहीं था' में बूढी का कथन है "कहूँ क्या? मुझे

अपने पोते-पोती की फिकर होती है। अरे,शहर में नई थे अच्छे स्कूल, जो उठा के इतनी दूर भेज दिया महतारी ने? आजकल की लुगाइयाँ तो नौ महीने बच्चे को पेट में ही रख लें, यही बहुत है। साल में महीने-भर को घर आए,सो भी बेगाने-बेगाने से। संस्कार क्या पडेंगे उनको?"[45] समाज में स्टाटस को दिखाने केलिए लोग बच्चों को दूर जाकर पढ़ाते हैं। बच्चे भी वहाँ की संस्कृति के अनुसार चलते हैं। कभी-कभी वह गलत रास्तों पर भी चलता है। आज के वैज्ञानिक दौर में प्रेम, प्यार सब कम हो रहा है। आपसी संबन्धों में भी गिरावट देखने को मिलता है। बूढ़े लोग अपनी रूढि को कायम रखते हुए जीना चाहते हैं। पुरानी रूढियों से बदलना नहीं चाहते हैं। इसलिए दोनों पीढ़ियों के बीच अंतर साफ दिखाई पड़ता है। रुक्मिणी कहती है कि "वो छोट जात है न, उसका छुआ दद्दाजी भ्रष्ट मानते हैं। फिर संक्राति को तीनों गंगाजल से ही नहाते हैं। मैं क्या करती? तुम तो कभी घर में रहते नहीं न, मुझे ही सब की सुननी पड़ती है।"[46]

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण स्त्री को भी केवल उपभोग की वस्तु मात्र मानता है। 'काजर की कोठरी' नामक नाटक में सरला नामक युवती के शोषण को दर्शाया गया है। सरला के पिता ने उसके नाम पर सारी धन-दौलत लिख ली। उस वसीयत से बेचारी सरला को अपनी ज़िन्दगी

खोनी पड़ी । भाईयों के कुचक्र में पड कर सरला की ज़िन्दगी बर्बाद हो गयी। भारतीय समाज में स्त्री को बड़ा स्थान दिया जाता है। फिर भी समाज में उनकी स्थिति अब भी दर्दानाक है। आज सब लोग उपभोग संस्कृति के शिकार हो रहे हैं। यहाँ मानवीय मूल्यों का कोई स्थान नहीं है।

मृणालजी के एक छोटा-सा रेडियो नाटक है 'सुपरमैन की वापसी' । इसमें भी भारतीय संस्कृति पर पडे पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव का दिगदर्शन हुआ है। सुपरमैन अपनी गेल फ्रेंड केलिए कुछ कीमती चीज़ खरीदने केलिए भारत आता है। यहाँ आकर पैसा इकट्ठा करने केलिए एक कनसलटनसी खोलता है। मुसीबत में पडने वालों को वह सहायता करके धन कमाता है। विज्ञापन के ज़रिए वह लोगों को आकर्षित करता है। आज हर कहीं ऐसे लोग देखने को मिलते हैं जो हमें शोषण का शिकार बनाकर पैसा कमाते हैं। आधुनिक युग में किसी एक काम खुद करने केलिए समय की कमी है। समय को बचाने केलिए या जल्दी काम करने केलिए पैसा देकर काम चलाता है। सुपरमैन भी एक प्रतीक है। वह पाश्चात्य संस्कृति का प्रतीक है। जल्द ही वह लोगों को आकर्षित करता है। "अरे, आप इतने घबराए-घबराए से क्यों हैं- धीरज रखें-आपकी समस्या का हल अब चुट्कियों में मिल जानेवाला है, क्योंकि 'जब-जब होता बेचैन, मदद को आता सुपरमैन!' हर काम की कीमत फकत दो सौ रुपया और पूरा पेमेंट काम के बाद। तोलिये इससे ज़्यादा क्या चाहिए आपको?"[47] कई लोग सुपरमैन के पास आकर सहायता मांगता है। लोग सुपरमैन को भारत में ही रखने केलिए सोचते है।

'धीरे-धीरे रे मना' नाटक में भी नष्ट होते भारतीय संस्कृति को दर्शाया है। सुरेश भाई रमेश के घर आता है। वहाँ सभी लोग काम में व्यस्त हैं। सुरेश के आने के बाद भी रमेश टी.वी देख रहा है। भाई से बोलने तक उसे समय नहीं है। वह हमेशा अपने परिवार को स्वस्थ रखना चाहता है। किसी अन्य लोगों की चिंता नहीं है। सुरेश सहनशील व्यक्ति है। वह गरीबों की सहायता करने वाला है। सुरेश के इस प्रकार के व्यवहार से रमेश सहमत नहीं है। सुरेश भाई से कहता है- "कहीं भाई-भतीजावाद, कहीं निरंकुशता भ्रष्टाचार, कहीं आरक्षण साम्प्रदायिक भेदभाव-जिसका कोई वजनी गॉडफादर नहीं, वह कहाँ जा मरे इस माहौल में?"[48] इसके बदले में रमेश उससे कहता है कि "ऐसी सब विचारधाराएँ पश्चिमी मीडिया की शरारत हैं। हमारी अपनी आत्म छवि, हमारी भारतीयता सब खत्म हो गई। वरना हम हिन्दुस्तानी तो तबीयततन बड़े सहनशील बड़े धीरजवाले लोग हैं। ये तो जब से सीमापार से घुसपैठ बढ़ी और अल्पसंख्यक।"[49]

2.6. शैल्पिक पक्ष:-

लोककथा के समानातर समसामयिक सामाजिक जीवन को प्रस्तुत करने वाला नाटक है 'आदमी जो मछुआरा नहीं था'। नाटक के अंत में उस लोककथा की ओर इशारा है। एक आदमी था जो मछुआरा नहीं था। एक मछली थी जो वास्तव में मछली नहीं थी, समुद्र की रानी थी। आदमी को कहीं

एक मछली पड़ी मिली, जिसने उसे खाने-बेचने के बजाय समुद्र में वापस डाल दिया। मछली रानी खुश हो गयी। उसने आदमी को तीन वरदान मांगने को कहा,जो आखिरकार अभिशाप सिद्ध हुए। लोक कथा के ढाँचे में रचित यह नाटक नन्ददुलारे नामक ब्राह्मण युवक, उसके माता-पिता, दादा, पत्नी रुक्मिणी, बेटा, बेटी ममता, की कहानी है। नन्ददुलारे राजकर्मचारी नियुक्त होते हैं। घरवाले के इच्छानुसार वे यह पद हासिल करने केलिए विवश होते हैं। इसी तरह विवशता में, तरक्की की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए वे शाही सलाहकार बन जाते हैं। नतीजा यह निकलता है कि नन्ददुलारे भीतर से टूटते चले जाते हैं। बेटा माँ की तरह महत्वाकांक्षी है पढ़ लिखकर विदेश में बस जाती है। बेटी पिता की तरह संवेदनशील है। इसलिए सुविधा और वातावरण में अपने को असहज मानती है। दिन गुज़रने लगे तो बेटा दुर्घटना में मारा जाता है। इससे रुक्मिणी पागल हो जाती है। अखबार द्वारा नन्ददुलारे के खिलाफ जाँच की माँग की जाती है। इस प्रकार नन्ददुलारे के माध्यम से एक संवेदनशील व्यक्ति की कहानी प्रस्तुत की गयी है। समकालीन जीवन स्थितियों का सच्चा अंकन नाटक की विशेषता है। नाटक की कथावस्तु तीन अंकों में प्रस्तुत किया गया है। पहले अंक में दो दृश्य और दूसरे और तीसरे अंकों में तीन-तीन दृश्य हैं। कुलमिलाकर इस नाटक में आठ दृश्य हैं।

नाटक में कुल मिलाकर ग्यारह पात्र हैं। नन्ददुलारे केन्द्रीय पात्र है। उनकी पत्नी रुक्मिणी, बेटी ममता, बेटा, उनके माता-पिता एवं दादाजी,

नन्ददुलारे का निजी सचिव राधिकारमण मिश्र, कुरियर का रिपोर्टर जिम्मी नंदा, फोटोग्राफर बनी, दो बूढ़े अन्य पात्र है। कथावस्तु सफलतापूर्वक है। पात्र के अनुकूल भाषा का प्रयोग इसमें है। पात्रों की आंतरिकता और नयी पुरानी पीढ़ी की मानसिकता दोनों को बड़ी सहजता के साथ पेश किया गया है। साइक्लोराम पर तीन तस्वीरों की जगह बड़े लकड़ी के फ्रेमों में जीवित कलाकारों को स्थिर मुद्रा में फोटो की तरह बैठाने और उनसे कोरस का काम लेने की युक्ति अत्यंत नाटकीय है। दूसरे अंक के दूसरे दृश्य में दादाजी तथा तीसरे अकं के पहले दृश्य में माता-पिता के फ्रेम में पहुचना सिर्फ नौ-दस वर्ष के गुज़रने का द्योतक है और कोरस के रूप में इन्हें सिर्फ नाटक के अंतिम पृष्ठ पर ही इस्तेमाल किया गया है। समय के अंतराल को दिखाने केलिए नन्ददुलारे की तरक्की के साथ-साथ मंच सज्जा और मंचोपकरणों में सांकेतिक परिवर्तन करना अपेक्षा कृत अधिक सुविधाजनक एवं विश्वसनीय होता है। 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' नाटक मुख्य रूप से यथार्थवादी शैली को अपनाया है। संवाद शैली भी अत्यत रोचक है। प्रस्तुत संवाद में नाटक का पूरा उद्देश्य देखने को मिलता है। रुक्मिणी पति से कहती है - "खिडकियाँ खोल दो तो प्रेत भीतर चले आते हैं। फूलों में कीड़े हैं, आसमान में धुन्ध हवा में धूल।"[50] यहाँ संवाद हमारी समकालीन सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक और राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय व्यवस्था की विसंगतियों की ओर इशारा किया है। भाषा,

संवाद, चरित्रांकन और शिल्पगत प्रयोग अत्यंत सराहनीय है।

मृणालजी का 'काजर की कोठरी' देवकीनंदन खत्रीजी के उपन्यास का नाट्यरूपातरण है। उपन्यास में प्रस्तुत सभी घटनाओं को नाटक में रूपातंरण करते वक्त नाटककार को कई प्रकार की कठिनाइयाँ महसूस हुई थीं। लेकिन इस नाटक में सहजता से मृणालजी ने सारी घटनाओं को सँवारने का काम किया है। नाटक की भाषा भी अत्यंत सरल और स्वाभाविक है। तन्मयता से सारे दृश्यों को एक साथ जुडाया है। नाटक में एक अंक और चौदह दृश्य हैं। अठारह से ज्यादा कथा पात्र भी मौजूद हैं। सभी पात्रों को अपना एक खास स्थान भी दिया है। इस नाटक का केन्द्र बिन्दु सरला नामक लड़की है। वह पिता की वसीयत के तहत भाईयों के कुचक्रों में फँसे नारी का प्रतीक है। संभ्रांत परिवार के लोग धन-दौलत प्राप्त करने केलिए क्या-क्या करते हैं ।इसका जीता जागता चित्रण भी इसमें है। हरनंदन अपने वाग्दत्त वधु सरला को धन के मोह के कारण, वेश्याओं की सहायता से उसकी उद्धार करती है। नाटक सीधे पाठकों से प्रश्न करता-सा दिखाई पडता है। संवाद शैली भी अत्यंत रोचक है। आज के मूल्यों की दृष्टि में देखा जाए तो कथानक का हर पात्र सामंती जीवन के काजर की कोठरी में बन्द है। छोटी या बडी काजर की लीक सब पर ही लगी है। नाटक के अंत में लेखिका ने अत्यंत सही दृश्य जोड लिया है इस तमाम कालिख भरे समूह को एक साथ समा पाने को जहाँ पूरा घटनाचक्र से नितान्त अनजान फोटोग्राफर अपना चेहरा काले कपडे से ढँककर

इस कुनबे को आदेश देता है- इस्माइल प्लीज़ –कृपया हँसिए और वे फ्रीज़ होते हैं। परदा गिरने के साथ हमारा समय शुरू होता है। नाटक हमारे सामने कई प्रश्न छोडकर समाप्त होता है। शिल्प की दृष्टि से भी नाटक अत्यंत सफल है।

'चोर निकल के भागा' तीन अंकों और प्रत्येक दो-दो दृश्यों से संयोजित एक नाटक है। इस नाटक ने यथार्थवादी, फारसी और फैंटसी के बीच से अपना रूपाकार ग्रहण किया है। हास्य और व्यंग्य से मिश्रित चुटीली भाषा का प्रयोग इसमें हुआ है। इसमें कला, साहित्य और राजनीति पर बहस करने वाले बेरोज़गार युवा रंगकर्मियों का एक वर्ग है। चमत्कारी भभूत की डिब्बियाँ देने वाले रंगीले छबीले बाबा भी हैं। ताजमहल को चोरी से बचाने में लगा राजनैतिक-प्रशासनिक तंत्र है और मास्टर गेंदालाल, शरीफा बीवी, उनकी खोई हुई बेटी नीता तथा तुकबंदी पूर्ण पारसी शैली के संवाद भी प्रस्तुत है। तिलस्मी ऐय्यारी के रहस्य रोमांच और चमत्कार तथा जेम्स बाँड के अत्याधुनिक उपकरणों हथियारों के दिलचस्प कारनामों के साथ-साथ समकालीन नामों, सदर्भों और प्रसगों का भी व्यंग्यात्मक प्रयोग लेखिका ने किया है। यह समकालीन जीवन यथार्थ को हास्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करनेवाला सशक्त नाटक है। मानव मूल्यों और उसकी तमाम कलात्मक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, उपलब्धियों पर मंडराते बाज़ारीकरण के भयंकर

संकट को भी दर्शाने का प्रयास हुआ है। फैंटसी, कल्पना और यथार्थ भी इसमें है। भूमडलीकरण के कुप्रभाव को दर्शाने केलिए अनेक काल्पनिक कथा पात्र को रखा है। शिल्प की दृष्टि से देखे तो ये अत्यंत सफल है। फारसी और अंग्रज़ी शब्दों का भी इस्तेमाल इसमें हुआ है। संवाद भी अत्यंत रोचक है। हास्य-व्यंग्य से भरपूर भाषा शैली नाटक की सबसे बडी विशेषता है। पात्रानुकूल भाषा शैली भी अपना खास महत्व रखती है। तीसरे अंक नीता का भाई बब्बर अपने टीटो-पीटो नामक दो गुण्डों के साथ वहाँ आ पहूँचा। बब्बर ने उन लोगों को बताया- "आप सब पढे-लिखे सभ्य लोग हैं-उम्मीद है आप हमें ज़ोर जबरदस्ती का मौका नहीं देंगे।"[51]

'शर्माजी की मुक्तिकथा' हमारे मीडिया और आरक्षणवादी व्यवस्था में चल रहे एक मंथन के विक्षिप्त दौर में लिखा एक नाटक है। इसमें सहज सरल जनभाषा और आदि-मध्य-अंत वाले कथानकों का उपयोग किया गया है। नाटक मंचन की दृष्टि से यह सफल नाटक है। नाट्यमंच के तीन भाग जो 10 नम्बर का पागलाखाना है। पृष्ठभाग के दो हिस्से हैं- बाईं ओर का हाई-कमान चेम्बर्स है, जहाँ डाक्टर बैठता है। दाहिनी ओर का भाग अनंत नारायण का कमरा है।

नाटक में छ: कथा पात्र हैं। समकालीन सदर्भ में मीडिया के क्षेत्र में होने वाले अत्याचारों का चित्रण नाटक का प्रतिपाद्य है। नाटक की संवाद शैली भी अत्यंत सरल है। इसमें मुख्य पात्र अनंतनारायण शर्मा है। लेखिका ने नाटक को अत्यंत रोचक बनाने केलिए कथापात्रों का नाम सुविधा केलिए छोटा किया है। पहला अवध नारायण शर्मा यानि अ.न.शर्मा ,दूसरा अनत नारायण शर्मा यानी अ.न.शर्मा । संवादों में सुविधा केलिए एक को अ.नाथ और दूसरे को अ.नारायण नाम दिया गया है। कथानक भी अत्यंत रोचक है। संगीत का भी प्रयोग इसमें किया गया है। कथापात्रों के नामों की समानता का नाटकीय तथा रोचक प्रयोग नाटककार ने नाटक के अंत में किया है, जहाँ भ्रमवंश सवालों के बदल जाने से दोनों का स्वरूप व्यक्त होता है। नाटक का व्यंग्य काफी पैना है और नाटक का शिल्प दिलचस्प है।

मृणालजी ने दो रेडियो नाटकों का भी सृजन किया है। ये हैं 'सुपरमैन की वापसी' और 'धीरे-धीरे रे मना'। शिल्पपरक दृष्टि से ये दोनों अत्यंत सफल नाटक हैं। इन नाटकों की संवादशैली भी बहुत सरल और स्पष्ट है। व्य़ंग़्य भाषा का भी प्रयोग इसमें किया गया है। मृणाल जी के रेडियो नाटक में भी कथापात्रों की संख्या कम है। नाटक में पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। भारतीय संस्कृति में आने वाले बदलाव को इन नाटकों में दर्शाया है। मृणालजी के ये नाटक समकालीन सदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

मानवीय मूल्यों के ह्रास का भी चित्रण नाटक में किया गया है।

2.7. निष्कर्ष

समकालीन महिला नाटककारों में मृणालजी का स्थान उल्लेखनीय है। अपने आसपास के वातावरण को सूक्ष्म रूप से देख-परख कर उन्होंने अपना सृजन कार्य संपन्न किया है। तेजी से बढ़ते इस युग में हमारे सामने के समाज को प्रस्तुत करने में मृणालजी सफल हुई है। बाज़ारीकरण का प्रभाव, पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, समाज में हर क्षेत्र में होने वाला भ्रष्टाचार आदि को उन्होंने अपने नाटकों की विषय वस्तु बनायी है। हमारे समकालीन सामाजिक, राजनैतिक, अर्थिक और सांस्कृतिक जीवन के सभी पहलूओं पर मृणालजी ने प्रकाश डाला है। इसलिए मृणालजी के नाटक बहुत प्रासंगिक भी हैं। मृणालजी स्वयं पत्रकार होने के नाते पत्रकारिता के क्षेत्र में होने वाले भ्रष्टाचार को भी पाठकों के सामने उन्होंने प्रस्तुत किया है।

मृणाल पाण्डे की कहानियों, उपन्यासों और आलोचना में उनकी दृष्टि स्त्री विमर्शवादी दृष्टि है, किंतु उनके नाटक, इसका अपवाद है। इन रचनाओं में उन्होंने स्त्री को 'परिधि' से 'केंन्द्र' में ला खड़ा किया है तो उन्होंने अपने नाटकों में समाज को, उसकी समस्याओं को, उसमें व्याप्त विसंगतियों –विडम्बनाओं को प्रस्तुत किया है। उनके नाटकों में आज के भ्रष्टाचार, अमानवीयता,

राजसत्ता की मक्कारी तथा ईमान्दार आदमी की असहायता और विवशता की सच्ची तस्वीर पेश हुई हैं। उनके नाटकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनमें स्त्री-पुरुष संबंधों के सीमित दायरे के बदले व्यापक सामाजिक सन्दर्भ प्रस्तुत हुए हैं। मंचीयता के साथ-साथ शिल्प की भी दृष्टि से उनके नाटक काबिले तारीफ ही हैं।

सन्दर्भ :-

1.गिरीश रस्तोगी -समकालीन नाटककार :-पृ .109

2.डॉ.एम.के .अजिताकुमारी-स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों में सामाजिक चेतना:-पृ.43

3.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.102

4.वही:-पृ.110

5. मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (धीरे-धीरे रे मना):पृ.338

6.डॉ.नगेन्द्र(सं)-हिन्दी वाङ्मय:बीसवीं शती :-पृ.61

7.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (काजर की कोटरी):-पृ.162

8.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.101

9.वही:-पृ.101

10.वही:- पृ.104

11.वही:-पृ.123

12.वही:-पृ.123

13..मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.237

14.वही:-पृ.234

15 .वही:-पृ.235

16.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (काजर की कोटरी):-पृ.174

17.वही:-पृ.163

18.वही:-पृ.160

19.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.246

20.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.102

21. वही:-पृ.108

22.डॉ.चन्द्रशेखर-हिन्दी नाटक और लक्ष्मीनारायण लाल की रंग यात्रा :-पृ.14

23.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.270

24. मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (शर्माजी की मुक्तिकथा):-पृ.327

25.वही:-पृ.327

26.वही:-पृ.330

27.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.97

28.वही:-पृ.112

29.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.260

30.वही:-पृ.259

31.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.139

32.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (काजर की कोटरी):-पृ.172

33.वही:-पृ.176

34.वही:-पृ.196

35 .वही:-पृ.374

36.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.246

37.वही:पृ.239

38.वही:पृ.250

39.ए.अरविंदाक्षन -साहित्य,संस्कृति और भारतीयता:-पृ.94

40. मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.250

41.वही:पृ.252

42.वही:पृ.256

43.वही:पृ.257

44.वही:पृ.262

45.वही:पृ.104

46.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.117

47.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (सुपरमैन की वापसी):-पृ.537

48.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (धीरे-धीरे रे मना):-पृ.390

49. वही:पृ.390

50.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (आदमी जो मछुआरा नहीं था):- पृ.150

51.मृणाल पाण्डे-सम्पूर्ण नाटक (चोर निकलके भागा):-पृ.275

अध्याय तीन

मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य

अध्याय तीन

मृणाल पाण्डे का उपन्यास साहित्य

3.0. प्रस्तावना:-

उपन्यास, साहित्य की ऐसी एक सार्थक और सशक्त विधा है जो बदलते हुए समय और समाज की वास्तविकताओं को आत्मीयता के साथ अभिव्यकत करने में समर्थ है। समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य में महिला लेखिकाओं की संख्या बहुत अधिक है। अब स्त्री अपने अस्तित्व के प्रति सर्वाधिक जागृत हो गयी है। वर्तमान परिदृश्य स्त्री-पुरुष समानता एवं समानाधिकार का हिमायती होने के कारण स्त्री-पुरुष एकजुड होकर काम कर रहे हैं। समकालीन रचनाकार स्त्री-पुरुष की एकाधिकारशाही का विरोध करते हैं। स्त्री अस्मिता की खोज मृणालजी के उपन्यासों में भी जाहिर है। वर्तमान समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, स्त्रियों के प्रति होने वाले शोषण, बच्चों की स्थिति आदि समस्याओं को उन्होंने हमारे सामने रखा है। अपनी खास लेखन शैली से वे अन्य लेखिकओं से भिन्न हैं। उनके उपन्यासों के कथ्य में भी विविधता देखने को मिलती है। वर्तमान समाज में घटित घटनाओं का चित्रण बारीकी से लेखिका ने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। प्रस्तुत अध्याय में मृणालजी के उपन्यासों की कथ्यगत विशेषताओं को परखने की कोशिश की गयी है।

3.1. हिन्दी की महिला उपन्यासकार और मृणाल पाण्डे:-

आज के आधुनिक भारतीय समाज में अनेक प्रकार की विविधताएँ देखने को मिलते हैं। मनुष्य का जीवन संवेदनात्मक स्तर पर कुछ क्षीण और

यांत्रिक हुआ है। मानव जीवन में होने वाली जटिलताओं का अंकन करने में उपन्यास विधा सक्षम हुई है। समकालीन रचनाकार इस संभावना को उपलब्धियों में बदलने का कार्य कर रहे हैं। "उपन्यास विधा की सबसे बडी विशेषता है कि वह मानव जीवन को अपनी समग्रता में अभिव्यक्त करने और समझने का सशक्त माध्यम है। वह जीवन के उन अनछुए पक्षों को उद्घाटित और व्याख्यायित करता है जिन्हें सामान्यत: और कोई माध्यम नहीं कर पाता। सबसे बडी बात यह है कि वह यह काम बहुत ही निर्ममतापूर्वक और तटस्थ भाव से करता है.....इस संदर्भ में अंतिम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि वह रचना अतत: किन मूल्यों की पक्षधर है।"[1]

आज महिला उपन्यास लेखिकाओं की संख्या अत्यधिक है और इन लेखिकाओं में से अधिकांश उपन्यास लेखन के क्षेत्र में भी अपना परिचय दे चुकी हैं। महिला उपन्यास क्षेत्र में पहले कदम रखने वालों में प्रमुख उषादेवी मित्रा है। बंग साहित्य की सुकुमारता को लेकर हिन्दी साहित्य मंच पर आने वाली उषादेवी मित्रा आदि से अंत तक कोमल हृदय नारी, एक ममतामयी माँ और सिद्धहस्त कथालेखिका हैं। उषा देवी मित्रा जी की औपन्यासिक कृतियाँ हैं 'वचन का मोल', 'पिया', 'जीवन की मुस्कान', 'पथचारी', 'आवाज़', जो अब अप्राप्य हैं, किंतु बाद में यह 'सोहनी' नाम से प्रकाशित हुआ। 'नष्ट नीड' तथा 'संमोहिता' जो सन् 1927-28 ई में बंगाला में छपे थे। बाद में सन् 1963 ई में लेखिका ने इसका हिन्दी रूपांतर प्रकाशित कराया। उषा देवी जी के उपन्यासों में नारी के अंतरतम की कोमलता और प्रेम की यथार्थवादी चित्रण मिलता है।

पुरानी पीढ़ी की महिला उपन्यासकारों में कंचनलता सब्बरवाल का नाम भी उल्लेखनीय है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं-‘मूक प्रश्न’, ‘भोली भूल’, ‘संकल्प’, ‘मूक तपस्वी’, ‘त्रिवेणी’, ‘भटकती आत्मा’, ‘स्वतंत्रता की ओर’, ‘पुनरुद्धार’, ‘अनचाहा’, ‘नया मोड’, ‘स्नेह के दावेदार’ तथा ‘फूलों की सुगंध: काँटों की चुभन’। उनके प्राय: सभी उपन्यास सोद्देश्य हैं और उनमें जनसेवा के आदर्श की स्थापना की गई है। उपन्यासों में बुद्धि और हृदय का सुंदर विनियोग देखने को मिलता है।

हिन्दी उपन्यास लेखिकाओं में रजनी पनिकर भी महत्वपूर्ण है उनके उपन्यासों का नाम इस प्रकार हैं-‘ठोकर’, ‘पानी की दीवार’, ‘मोम के मोती’, ‘प्यासे बादल’, ‘जाड़े की धूप’, ‘काली लड़की’, ‘सोनाली दी’, ‘एक लड़की: दो रूप’, ‘दूरियाँ’, ‘अपने-अपने दायरे’ तथा ‘महानगर की मीता’। उपन्यास के ज़रिए नारी की क्षमता और आत्मविश्वास की ऊर्जा प्रकट करने का कार्य किया है।

सन् 1956 ई से निरंतर लेखनरत शशिप्रभा शास्त्री हिन्दी के महिला उपन्यासकारों में विशिष्ट स्थान रखती हैं। उनकी प्रमुख उपन्यास रचनाएँ हैं-‘वीरान रास्ते और झरना’, ‘नावें’, ‘सीढ़ियाँ’, ‘परछाइयों के पीछे’, ‘परसों के बाद’, क्योंकि’, ’कर्क रेखा’, ‘उम्र एक गलियारे की’, ‘ये छोटे महायुद्ध’। शशिप्रभा शास्त्रीजी के उपन्यासों में घर-परिवार और मानव-मन की बारीकियों के सुंदर वर्णन किया गया है।

कृष्णा सोबती कविता से गद्य के क्षेत्र में पदार्पण करनेवाली प्रख्यात हिन्दी कथाकार है। अपने विशिष्ट पंजाबी तेवर के कारण उनके उपन्यासों में

एक विलक्षण खुलापन और सहजता देखने को मिलती है। उनके द्वारा सृजित उपन्यास हैं- 'डार से बिछुडी', 'मित्रो मरजानी', 'यारों के यार तिन पहाड़', 'समय सरगम', 'सुरजमुखी अँधेरे के', 'दिलो दानिश' और 'ज़िन्दगी नामा'।

लोकप्रियता की दृष्टि से शिवानी हिन्दी की महिला उपन्यासकारों में शीर्षस्थानीय हैं। इनके उपन्यास व्यक्ति विशेष को प्रधानता देते हुए उदात्तता की सीमा रेखाओं को स्पर्श करते हैं। शिवानीजी के उपन्यासों में उत्कृष्ट सांस्कृतिक चित्रण भी है तथा मानव जीवन की चारित्रिक विशेषताओं की सूक्ष्म पहचान मिलती है। उनके उपन्यासों एवं लघु उपन्यासों की संख्या काफी बड़ी है- 'मायापुरी', 'चौदह फेरे', 'कृष्णकली', भैरवी', 'श्मशान चंपा', 'विषकन्या', 'किशुनली', 'माणिक', 'गैंडा', 'रथ्या', 'सुरंगमा', 'चल खुसरो घर अपने', 'कांलिदी', 'अतिथि' आदि।

हिन्दी की आधुनिक कथा लेखिकाओं में मन्नुभण्डारी का नाम भी प्रमुख है। गहरी संवेदनशीलता, अनुभव की सच्चाई और प्रस्तुति का अपना मौलिक अंदाज़ आदि उनकी उपन्यासों की विशेषतायें हैं। मन्नु भण्डारी की औपन्यासिक कृतियाँ हैं-'एक इच मुस्कान'(राजेन्द्र यादव सह लेखक)', 'आपका बंटी', 'महाभोज', 'स्वामी'(शरतचंद्र की 'स्वामी' कहानी का पुनलेखन)।

उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में महानगरीय जीवन के संत्रास का चित्रण मिलता है। आज के युगीन यथार्थ का जीता-जागता चित्रण प्रस्तुत करने में उषा प्रियंवदा सक्षम हुई है। आदमी की उदासी, ऊब, अकेलेपन और घुटन संवेदनशील कथा लेखिका उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में बड़ी भावप्रवण शैली में व्यक्त हुई है। उनके उपन्यासों के नाम हैं-'पचपन खंभे लाल दीवारें',

'रुकोगी नहीं राधिका',' अंतर्वंशी' तथा 'शेष यात्रा'।

हिन्दी कथा साहित्य में मुस्लिम म्ध्यवर्गीय चेतना की कथा लेखिका के रुप में मेहरून्निसा परवेज़ का प्रमुख स्थान है। उन्होंने बड़ी सरलता और ईमानदारी से जीवन की विविध समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं-'आँखों की दहलीज', 'कोरजा', 'अपना घर', 'अकेला पलाश' तथा 'पत्थर वाली गली'। मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यासों में मुस्लिम समाज में व्याप्त अनाचार, दिनोंदिन टूटते जीवन-मूल्य और आर्थिक विपन्नता आदि का सजग चित्रण है। अपने सभी उपन्यासों में उन्होंने नारी की व्यथा-कथा को अनेक दृष्टियों से देखा और प्रस्तुत किया है।

आठवें दशक की प्रारंभिक लेखिकाओं में निरुपमा सेवती का नाम की गणना अग्रिम लेखिका के रूप में होती है। महानगरीय जीवन की दौड अपने अस्तित्व की तलश में संलग्न पात्र तथा शोषणजनित विवशताओं से उबरने की प्रयास निरुपमा सेवती के उपन्यास के विशिष्ट बिन्दु है। गहरी संवेदनशीलता और मानव-मन की विविध भाव उनमें मिलते हैं। उनके प्रमुख उपन्यास हैं-'पतझड की आवाज़ें', 'बँटता हुआ आदमी', 'मेरा नरक अपना है', तथा 'दहकन के पार'।

ममता कालिया का लेखन विशेष रूप से भारतीय नारी के परिवेश से जुडा हुआ है। 'बेघर', 'नरक दर नरक', 'प्रेम कहानी', 'लड़कियाँ', 'एक पत्नी की नोट्स', 'दौड', 'अंधेरा का लाला', 'दु:खम् सुक्खम' आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। दीप्ति खंडेलवाल के उपन्यासों में नर-नारी के विषम संबन्धों की कथा कही गयी है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं- 'प्रिया', 'वह तीसरा' 'कोहरे' तथा

'प्रतिध्वनियाँ। अपनी विशिष्ट भाषा शैली के कारण हिन्दी की महिला उपन्यासकारों में मृदुला गर्ग का नाम भी प्रमुख है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं – 'उसके हिस्से की धूप', 'वंशज', 'कठगुलाब', 'मिल जुल मन', 'चित्तकोबरा', 'मैं और मैं' तथा 'अनित्य'। 'अनित्य' मृदुला गर्ग का एक ऐसा उपन्यास है जो स्वाधीनता की लडाई को बिलकुल अलग दृष्टि से देखते है। 'चित्तकोबरा' में स्त्री देह-मन की प्यास गहरे आवेग में ढलती है। एक ही सृजन काल में दो भिन्न-भिन्न रचना भूमियों पर काम कर लेना, एक उपन्यासकार के रूप में मृदुला गर्ग की शक्ति ही है। पारिवारिक रिश्तों के उत्थान-पतन की कहानी मालती जोशी की कलम से प्रस्तुत है। कथ्य और शिल्प की सादगी उनके उपन्यासों की विशेषता है। उन्होंने अपने उपन्यास सिर्फ दो माने हैं – 'सहचारिणी' एवं 'राग-विरग'। 'समर्पण का सुख', संग्रह में मालती जोशी के चार लघु उपन्यास समाहित हैं- 'गोपनीय', 'ऋणानुबंध', 'चाँद अमावस्या का' तथा 'समर्पण का सुख'।क्रांति त्रिवेदी के उपन्यास भी महत्वपूर्ण है। 'मन की हार', 'अंतिमा', 'समर्पण','स्वयंवरा', 'ओस की बूँद', 'कथा अंनता', 'दीप्त प्रश्न', 'अशेष', 'मोहभंग', 'कृष्णापक्ष', फूलों का सपना', 'चिर कल्याणी'। मंजुल भगत भी महिला कथाकरों में ख्याति प्राप्त है। 'अनारो' उनके प्रमुख उपन्यास हैं। इसमें उन्होंने निम्न मध्यवर्गीय नारी की पीडा को व्यक्त किया है। 'टूटा हुआ इंद्र धनुष', 'तिरछी बौछार','बेगाने घर में','गंजी' आदि उनकी प्रमुख रचनायें हैं।

मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासें भी प्रमुख उल्लेखनीय है। उनकी

प्रमुख रचनायें हैं – 'कठगुलाब', 'चाक', 'इदन्नमम' आदि। उन्होंने उपन्यासों के ज़रिए महिला मुक्ति या स्वतंत्रता का विचार पेश किया है। मैत्रेयी पुष्पा के 'झूलानट', 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास भी आए हैं।

स्त्री चेतना को उजागर कर देना वाले उपन्यासकारों में चित्रा मुद्गल का भी स्थान प्रमुख है। 'एक ज़मीन अपनी' में नये विषय को उठाया गया है। विज्ञापन जगत में स्त्रियों पर होने वाले अत्याचर और उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने वाली औरत को इसमें दर्शाया गया है। 'आवाँ' और 'गिलिगडु' उनके अन्य उपन्यास हैं। स्त्री मुक्ति का स्वर 'आवाँ' उपन्यास में गूँज उठा है। उपन्यास के ज़रिए नारी मन को जगाने का कार्य लेखिका करती रहती है। 'गिलिगडु' वृद्ध जीवन पर आधारित उपन्यास है।

महिला उपन्यासकारों में चन्द्रकांता का नाम भी बहु चर्चित है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं- 'ऐलान गली ज़िन्दा है', 'अपने अपने कोणार्क, 'कथा सतीसर', 'पेशनूल की वापसी' तथा 'यहाँ वितस्ता बहती है'। उपन्यास मुख्य रूप के स्त्री-अस्मिता के उपन्यास नहीं है। उनके उपन्यासों के केन्द्र में काश्मीर जीवन और सांस्कृतिक परिवेश का चित्रण हुआ है। इन उपन्यासों में भी जीवंत स्त्री-चरित्र को हम देख सकते हैं। स्त्री उपन्यासकारों में कुसुम अंसल ने भी अपनी एक विशिष्ट जगह बनाई है। उनके 'एक और पंचवटी' और 'रेखाकृति' उपन्यास चर्चा में रहे हैं। मौजूदे परिवेश में स्त्री-जीवन की विड़बनाओं को अपने ढंग से प्रस्तुत करनी की क्षमता रखती है। कुसुम अंसल ने निश्चय ही आज की स्त्री के भीतरी खालीपन को एक संयत अभिव्यक्ति दी

है।

दिनोशनंदिनी डालमिया की भी औपन्यासिक रचनायें इस दौर में आई हैं- ‘कंदील का धुआँ’, ‘वही भी झूठ है’ तथा ‘मरजीवा’। ये सभी आत्मकथात्मक कृतियाँ हैं। स्त्री जीवन के विविध पहलुओं को उन्होंने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। प्रभा खेतान, अलका सरावगी और गीतांजलीश्री के उपन्यास भी बहुत चर्चा में आये हैं। ‘कलिकथा वाया बाईपास’ अलका जी के प्रमुख उपन्यास है। यह उपन्यास नारी चेतना से संबन्धित उपन्यासों की श्रृखला की सशक्त दस्तावेज़ है। उपन्यास की संपूर्ण कथा किशोर बाबू नामक एक मध्यवर्गीय मारवाडी व्यक्ति के इर्द-गिर्द घूमती है। प्रभाखेतन के उपन्यास ‘छिन्नमस्ता’ भी मारवाडी समाज पर आधारित उपन्यास है।

गीतांजलीश्री की पहचान एक बोल्ड कथा-लेखिका के रूप में है। उनके दो उपन्यास ‘माई’ और ‘हमारा शहर उस बरस’ बहुत चर्चित हुए हैं। ‘हमारा शहर उस बरस’ सांप्रदायिकता के मसले को लेकर लिखा गया महत्वाकांक्षी उपन्यास है, जो धार्मिक हिंसा और सांप्रदायिकता की जडों तक जाता है। नमिता सिंह जी भी कहानीकार के रूप में जाना जाता है ‘अपनी सलीबें’ उनका प्रमुख उपन्यास है। यह उपन्यास एक कामकाजी और बौद्धिक रूप से सजग, सचेत युवती नीलिमा के आंतरिक ध्वंस की कथा है। समकालीन उपन्यास के क्षेत्र में महिला उपन्यासकारों की संख्या बहुत अधिक है। अन्य प्रमुख महिला उपन्यासकारों के उल्लेखनीय उपन्यास हैं- मीनाक्षी पुरी की ‘तरतरी में तूफान’ शशि प्रभा शास्त्री का ‘हर दिन इतिहास’ उषा चौधरी का

'मेरे पटोले' क्षमा शर्मा का 'परछाई अन्नपूर्ण' वीणा सिन्हा का 'पथ प्रज्ञा' अरुणा कपूर का 'धूप आती है स्वराज्य रुचि का 'सम्बन्धों के दायरे', संतोष गोयल का 'धराशायी', राज बुद्धिराजा का 'कन्यादान' तथा 'रेत का टीला'। अधिकांश स्त्री उपन्याककारों के उपन्यासों में स्त्री जीवन का यथार्थ का पहचान हम देख सकते हैं।

इन महिला उपन्यासकारों में मृणालजी का स्थान भी महत्वपूर्ण है। मृणालजी ने भी वर्तमान समाज की सच्चा चित्र प्रस्तुत किया है। मृणालजी के प्रमुख उपन्यास हैं 'पटरंगपुर पुराण', 'विरुद्ध' और 'रास्तों पर भटकते हुए'।

वर्तमान कथा-परिदृश्य में मृणाल पाण्डे ने सक्रिय भागीदारी निभाते हुए अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज की है। उनके महत्वपूर्ण रचनात्मक प्रयत्न के केन्द्र में समसामायिक जीवन संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न रूप और आकार लेने वाला तत्व स्त्री-चेतन है। उनकी औपन्यासिक रचनाओं का प्रमुख और प्रभावशली पात्र स्त्री है। परंपरागत रूढ़ियों से मुक्त होती स्त्री का ही अंकन उन्होंने अपने उपन्यासों में किया है। स्त्री अपने वजूद को महसूस करती है और अपने परिवेश का यथार्थ अच्छी तरह जानकर उसका विश्लेषण करने का प्रयास करती है। इस दृष्टि से मृणाल पाण्डे जी ने समकालीन परिवेश में स्त्री समाज की त्रासदी और विडम्बना, उसकी शोषित स्थिति, उसकी सामाजिक आर्थिक पराधीनता सदियों से चले आ रहे स्त्री संबन्धों, रूढिग्रस्त मान्यताओं और धारणाओं से जुडे प्रश्नों को खुले व साहसपूर्ण ढ़ंग से अपने उपन्यासों के माध्यम से हमारे सामने रखा है। इनका

लेखन नारी-जीवन की विसंगतियों और उनके संदर्भ में कई प्रश्नों को खुले व साहसपूर्ण ढंग से अपने उपन्यासों के माध्यम से हमारे सामने रखा है। इनका लेखन नारी-जीवन की विसंगतियों और उनके संदर्भ में कई प्रश्नों को उठाने का कार्य किया है। डॉ.शीलाप्रभा वर्मा कहती है "नारी-जीवन की विसंगतियों के सवाल अभिव्यक्ति के साथ ही कौटुम्बिक एवं ग्रामीण परिवेश का जो हृदयग्राही चित्रांकन श्रीमती मृणाल पाण्डे की लेखनी ने किया है वह अछूता है। अभिव्यक्ति में गहराई लिए कोमल भावनाओं को सहज ही पकड पाने की ऐसी शक्ति अन्यत्र विरल है।"[2]

मृणालजी का लेखन सिर्फ नारी तक सीमित नहीं है। पत्रकार होने के नाते सामाजिक यथार्थ का आंकन भी उनके उपन्यासों में दिखाई पडता है। आजकल के सामाजिक , राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सभी पहलुओं को अपनी रचनाओं के ज़रिए हमारे सामने पेश किया है। मृणालजी के प्रमुख उपन्यास है:-'विरुद्ध', 'पटरंगपुर पुराण' और 'रास्तों भटकते हुए'। प्रस्तुत अध्याय में मृणालजी के उपन्यासों के माध्यम से इन सभी पहलुओं को अभिव्यक्त करने की कोशिश की है।

3.2.1. मृणाल पाण्डे के उपन्यास: सामाजिक पक्ष:-

मनुष्य और समाज एक दूसरे से सम्पृक्त है, तभी तो समाज में मनुष्य का जीवन पूर्ण होता है, वह समाज से ही कुछ लेता है और कुछ देता है। समाज हमेशा गतिशील होता है। भारतीय समाज में भी कई सामाजिक बदलाव हमें देखने को मिलते हैं। मृणाल पाण्डेयजी अपनी औपन्यासिक

रचनाओं में सामाजिक यथार्थ का अंकन करने में सफल हुई हैं। वर्तमान समाज पुरानी रूढ़ियों को तोडकर मुक्त होना चाहता है। कई प्रकार की विसंगतियाँ हम समाज में देख सकते हैं। व्यक्ति समाज का ही अगं है। इसलिए व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का संबन्ध दृढ़ होना चाहिए। मृणालजी ने अपने उपन्यासों के ज़रिए समाज के विविध पक्षों को उभारा है। समाज में व्याप्त रूढ़िगत विचारों और आज के सामाजिक गतिविधियों का अंकन करने की कोशिश उन्होंने की है।

3.2.1.1. पति-पत्नी के बीच का संबन्ध:-

परिवार में पति-पत्नी संबन्ध महत्वपूर्ण है। ये संबन्ध परिवार को आदर्श एवं विकसित पथ पर लाने केलिए आवश्यक होते हैं। आज के भौतिक युग में इन संबन्धों में तनाव आ गया है। ग्रामीण जीवन में यह परिवर्तन नाम मात्र है जबकि शहरी जीवन में तलाक तक इस परिवर्तन की सीमा पहूँच गयी है। आधुनिक दौर में नारी अपनी अस्मिता को कायम रखना चाहती है इसलिए वह हमेशा अस्मिता की खोज करती रहती है। पुराने ज़माने की रूढियों को तोडकर वह आगे बढ़ना चाहती है। पितृसत्तात्मक समाज द्वारा स्त्री केलिए कल्पित रूढियों को वे तोडने केलिए तैयार रहती हैं। नर-नारी संबन्ध सदैव विवादाग्रस्त रहा है और समकालीन युग में आकर तो यह तनाव और भी बढ़ गया है। पारिवारिक संबन्धों के इस दौर में पति-पत्नी के पारस्परिक तनाव को समाज महसूस करता है। इन दो स्वतंत्र इकाईयों के आपसी तनाव पर कई प्रश्न उठ रहे हैं और उनके द्वरा दिये जाने वाले जवाबों से नये प्रश्नों का निर्माण भी हो रहा है। आज की नारी सोचती हैं "नारी की स्वतंत्र-सत्ता पुरुष

के बिना भी बनी रह सहती है। बन्धनों ही को ज़िन्दगी मान लेना भूल है और इस एक भूल को स्थायी रखना और भी बड़ी भूल होगी।"[3]

मृणालजी ने 'विरुद्ध' नामक उपन्यास में पति-पत्नी के बीच के संबन्ध को दर्शाया है। उपन्यास की नायिका रजनी पढी-लिखी युवती है। उसका विवाह उदय नामक युवक के साथ हुआ है। उदय ऊँचे पद पर नौकरी करने वाला नौजवान है। रजनी हमेशा अपने अस्तित्व की खोज में भटकती है। पति उसका पूरा ख्याल रखता है फिर भी वह खुश नहीं होती। वह माँ के समान आदर्श पत्नी या बहिन के समान प्राक्टिकल बनना नहीं चाहती है। उसके मन के अन्दर हमेशा एक द्वन्द्व चलता रहता है। रजनी कांवेण्ड शिक्षिता है। उसे सभी सुख-सुविधायें उपलब्ध हैं। फिर भी पति के साथ अपने को व्यवस्थित नहीं कर पाती है। पति के सामान्य प्रश्न भी उसके समक्ष कई प्रश्न चिह्न खड़ा करते हैं। वह कभी सोचती है कि "..........आखिर यह सारा आक्रोश-भरा आवेग है किसके विरूद्ध? उदय के? अपने? या खुद उन दोनों से परे किसी अलक्षित ताकत के प्रति, जो कि इन मुठभेडों के प्रति उसकी सारी वितृष्णा के बावजूद हर रोज़ दोनों को प्रतिद्वंद्वियों की तरह परस्पर चुनौती देने को आमने-सामने ला खड़ा करती है।"[4] 'विरूद्ध' में रजनी और उदय के वैवाहिक जीवन विघटित है। लेकिन इस विघटन का कारण अधिक ठोस व मार्मिक नहीं है। पति के विचारों के सामने रजनी घुटने नहीं टेकती। रजनी परंपरागत नायिका स्वरूप से अपने को अलग कर लेना चाहती है। वह इस द्वन्द्व के द्वारा न तो समाज में बदलाव ला पाती है और न अपनी स्थितियों में कोई परिवर्तन। वह सिर्फ विरूद्ध जा पडती है।

'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में भी पति-पत्नी के बीच होने वाले तनाव का दर्शन हुआ है। इसमें नायिका मंजरी एक गरीब पोस्टमास्टर की पितृहीन लडकी है। स्वर्गीय पिता के इच्छानुसार दिल्ली में पढ़ रही थी। उच्चवर्गीय डॉक्टर से शादी का प्रस्ताव आया था। शादी के साल-भर बाद पति उसे छोडकर वापस लौट जाता है। आज के समाज में ऐसा कार्य हमेशा चलता रहता है। संबंधों का विच्छेद एक साधरण सी बात होने लगी है। पिता ने शादी की तैयारियाँ पुत्र के इच्छानुसार नहीं की थीं। पिता अपनी इच्छानुसार लड़की को चुनकर पुत्र को शादी केलिए विवश किया था। पुत्र विदेशी लड़की से प्रेम करता था। इसलिए वह अपनी नवविवाहिता पत्नी को छोडकर चला गया। बाद में पिता कुछ पैसों का प्रबन्ध करके उस बन्धन से छुडकारा पाना चाहता था। आखिरकार वह उसमें विजय प्राप्त कर सका। मंजरी भी आधुनिक सोच वाली नारी है। वह भी उस घर में खिलौने के रूप में जीना नहीं चाहती। इसलिए तलाक केलिए मंजूरी देती है। पति-पत्नी संबन्धों के बीच आज गहरी मूल्य च्युति देख सकते हैं। मंजरी के माध्यम से लेखिका ने आज के सामाजिक यथार्थ का आंकन किया है। मानवीय मूल्यों में आये विघटन समाज को भी एक नयी चुनौती दे रहा है। विवाह स्त्री पुरूष दोनों के जीवन का महत्वपूर्ण निर्णय है। यहाँ मंजरी तलाक लेकर मुक्त हो गयी तो भी वह एक प्रकार के शोषण का शिकार बन गयी है। मंजरी के माध्यम से लेखिका अनमेल विवाह से होने वाले दुष्परिणाम का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

3.2.1.2. माँ के बीच बेटा-बेटियों का संबन्ध:-

आज के दौर में संबन्धों के बीच दरारें आ गयी हैं। मानवीय मूल्यों का ह्रास हर कहीं देखने को मिलता है। पुराने-ज़माने में माँ-बाप के प्रति बच्चों का प्यार अत्यंत गहरा था। बदलते परिवेश के अनुसार उस संबन्धों में खोखलापन देखने को मिलता है। आधुनिक दौर में शिक्षा प्राप्त बच्चे नौकरी करने केलिए बाहर जाते हैं। वहाँ की संस्कृतियों से मिलकर रहना वे चाहते हैं। 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास के ज़रिए एक स्वाभिमानी माँ का अंकन मृणालजी ने किया है। माँ अकेली गाँव में रहती है। बेटी की शादी हो गई है। फिर भी वे पति से अलग रहती है। माँ ने बडे प्रयत्न करके बच्चों को पढ़ाया है।

बेटी श्वसुर द्वारा दिये गये मकान पर रहती है। कभी-कभी माँ को देखने केलिए गाँव आती है। माँ और बेटी के बीच का संबन्ध गहरा है। बेटी को देखकर माँ भी खुश होती है। वहाँ के नौकर का कहना है कि "खाना भी लली, जब तुम आती हो, तब ही ये दो टाइम ताज़े बनवाती हैं। वर्ना कहती हैं, शाम को सुभे का गरम करके खा लूँगी तू जा।"[5] बच्चे साथ नहीं है तो माँ को खाने में मज़ा नहीं है। इससे माँ बेटी के बीच के संबन्ध का हमें पता चलता है। मंजरी अपने को स्वतंत्र रखना चाहती है। वह पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करने वाली स्वाभिमानी युवती है। वहाँ के वातावरण से ऊब कर उसने नौकरी छोडी थी। वह किसी के अधीन में काम करना नहीं चाहती है।

बेटी के इस प्रकार के व्यवहार से माँ हमेशा चिंतित रहती है। बेटी की भलाई केलिए उपदेश भी देती रहती है। "मैं तेरे ही भले केलिए कह रही

हूँ,माँ ने कडछी चलाते हुए कहा था, 'इतना मान अच्छा नहीं होता। अरे, दिल्ली में तेरे लिए नौकरियों की कमी नहीं। तेरे पास सब तो है-काबिलियत पर्सनैलिटी, खानदान। जब कह रहे हैं, कि आके अपनी अर्जी दे जा, तो जाती क्यों नहीं? बिना तेरे माँगे घर आकर कौन देगा तुझे नौकरी?"[6] माँ हमेशा पुराने ज़माने की सोच रखने वाली नहीं है। वह अपनी बेटी को अपने पैरों पर खड़ा रहने का आदेश देती है। मंजरी के विद्रोही व्यक्तित्व से माँ भी डरती है। गाँव में रहने के कारण माँ की सोच और बेटी की सोच में अंतर देखने को मिलता है।

बेटी भी माँ से प्यार करती है फिर भी अपनी व्यक्तित्व में बदलाव लाना वह नहीं चाहती है। वह हमेशा मुक्त रहना चाहती है। माँ से वह कहती है कि "वो सब भी अगर अपनी ज़िन्दगी अपनी शर्तों पर जी सकते हैं, तो बस मेरे ही लिए तेरे पास इतनी हिदायतें क्यों हैं? अपने बेटे-बहू के आगे तो तुम्हारी जुबान नहीं हिलाती?"[7] माँ और बेटी दोनों को आपस में प्यार होते हुए भी मंजरी माँ से अपना मत खुलकर प्रकट करती है। बेटी के इस प्रकार के विद्रोही व्यक्तित्व के कारण माँ अपने आपको कोस कर दु:ख का निवारण करने की कोशिश करती है। माँ कहती रहती है "मेरी ही कोख में खोट होगी कुछ जो अपने कोखजायों को भी मेरी बातें नहीं सुहाती अब।"[8]

तेजी से बढ़ती ज़िन्दगी में पीछे की ओर देखना कोई नहीं चाहता है। मंजरी के भाई को भी माँ ने अनेक कठिनाइयों के बीच पाल-पोस कर बड़ा किया था। नौकरी मिलने के बाद शादी करके वे भी अलग होकर जीते हैं। माँ रोगिणी बन कर अस्पताल में पडती है। वह बहन को साहसी बनाने का धैर्य

देते हुए कहता है कि “ड्रिप वगैरा तो उन्होंने तुरंत लगा भी दिया होगा। शुगर चैक कराने भी तो वह वहीं जाती रही है। सो उसका डायबिटिक रिकोर्ड उनके पास होगा ही। हमें तो वो कभी कुछ लिखती नहीं थी, वर्ना यहाँ एक से एक डायबेटॉलाजिस्ट हैं। दिखा देते।“[9]

आधुनिक समाज की हालत ऐसा हो गया है। माँ को देखने केलिए या उसके बारे में जानने केलिए वक्त नहीं है। व्यक्ति अपने आप में सीमित हो गया है। ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने केलिए किये जाने वाले दौड धूप में लोग आपसी संबन्धों को भी भूल जाते हैं। समाज की बडी विसंगति भी यही है। माँ-बेटे के बीच की आत्मीयता भी नष्ट हो रही है। सिर्फ अपने कर्तव्य निभाने केलिए या समाज को दिखाने केलिए लोग सब करते हैं। माँ रोगग्रस्त होकर पडते वक्त बेटे की सोच इस प्रकार का हैं। वह अपने भूतकाल की यादें सजोते हुए बहन से कहती है कि “कम-से-कम उसे दर्द का अनुभव तो नहीं हो रहा होगा। तू जानती है, वह हर चीज़ कितनी ताबडतोड खुद करने वाली, कितनी आत्मसम्मान थी। ऐसी हालत में आकर होश आता तो वह खुद से कितनी जल्द कितना ऊब जाती।“[10]

माँ को बच्चों के प्रति प्यार एक समान होता है। इसमें मंजरी और उसके भाई को विधवा माँ ने हर प्रकार की सुख –सुविधायें दी थीं। अच्छी शिक्षा के माध्यम से माँ ने दोनों को अपने पैरों पर खडा करने का महत्वपूर्ण कार्य किया था। माँ हमेशा गाँव में रहना चाहती थी। अंत तक वह अपने आपको संभालने में समर्थ निकलती है। बच्चों को कोई भी कठिनाई होती है तो

माँ हमेशा चिंतित रहती है। वह अपने बच्चों को हमेशा खुश रखना चाहती है। मृणालजी इस उपन्यास में एक आदर्श माँ को दर्शाया है। माँ हमेशा समाज से जुडकर जीना चाहती है। पुरानी मान्यताओं को तोडना वह नहीं चाहती है। फिर भी बच्चों की ज़िन्दगी सुरक्षित करने में माँ कामियाब निकलती है।

'विरूद्ध' उपन्यास में बेटी को देखने केलिए प्रतिक्षारत माँ का अंकन है। उपन्यास की नायिका रजनी शादीशुदा है। वह हमेशा अपने स्वतंत्र अस्तित्व की खोज में भटकनेवाली नारी है। इसलिए पति उदय के साथ का संबन्ध अच्छा नहीं था। वह पत्नी को हमेशा खुश रखने का प्रयत्न करनेवाला नेक आदमी है। रजनी अपने बचपन की यादें संजोती रहती है और माँ से मिलने केलिए जाती है। वहाँ माँ भी बेटी की प्रतीक्षा करने वाली थी। माँ का प्यार भरा कथन है - "सोचा था अभी कुछ दिन तो रहेगी ही। साल में एक बार तो भेजते हैं, फिर आते ही से बुला लिया।"[11] इससे आज के सामाजिक यथार्थ को हमारे सामने पेश किया है। आज के युवा लोग हमेशा दूर जाकर बसते हैं। सुख-सुविधा के साथ जीवन बिताने केलिए बाहर जाना जरूरी ही है। माँ हमेशा अपने बच्चों को पास रखना चाहती है। आज के युग में यह असंभव बन गया है। ज़िन्दगी को व्यवस्थित रखने केलिए दूसरी जगह जाना पडता है। इस उपन्यास में माँ-पापा का यह कहना अत्यंत महत्वपूर्ण है। सामाजिक वास्तविकता की झलक प्रस्तुत वाक्यों में उपलब्ध है- "उनकी पूरी-की-पूरी पीढ़ी ही आत्म केन्द्रीत और स्वार्थी है। आखिर अपने बच्चों के अलावा और है ही उनका?"[12] मृणालजी ने माँ के प्रति बेटे-बेटी के संबन्ध का यथार्थ चित्र हमारे सामने उकेरा है।

3.2.1.3. पिता के बीच बेटा-बेटियों का संबन्ध:-

माँ-बाप परिवार की महत्वपूर्ण इकाई है। माँ हमेशा बच्चों से कोमलता पूर्ण व्यवहार करती है तो पिता उससे भिन्न होकर अनुशासन पूर्ण व्यवहार करता है। पिता भी हमेशा बच्चों की भलाई केलिए ऐसा व्यवहार करता है। वर्तमान समाज में पिता के प्रति प्यार होते हुए भी बच्चे अपनी मर्जी से काम करना चाहते हैं। पुराने ज़माने के बदले पिता भी उन्हें अनुमति देते हैं। 'विरूद्ध' उपन्यास की नायिका रजनी और उसके पिता इसप्रकार के सोचवाले हैं। पिता रजनी से कहता है:- "तुम अपने मन की करो बेटा, हम अपनी करेंगे। खबर देना तो हमारा फर्ज है। उसे हम पर छोड दो।"[13] रजनी पति से कहे बिना माँ-बाप को देखने केलिए आयी थी। इससे माँ-बाप चितिंत है। रजनी अपनी अस्तित्व की खोज करती हुई भटकनेवाली युवती है। माँ-बाप उसे हमेशा खुश रहने का आग्रह करते हैं। बेटी जब घर से निकलकर पति के घर जाती है उस वक्त भी पिता का मन भर उठता है। वहाँ पहूँचकर जल्दी खबर देने का आदेश देकर भी जाने देते है। "अच्छे बेटे, उदय से कहना, पहूँचकर तार तुरंत भेज देगा वरना माँ को फिकर होगी।"[14] इसमें स्नेहमयी पिता को दर्शाया गया है। रजनी जब बुआ से मिलने जाती है वहाँ फूफा भी बेटे को नौकरी न मिलने के कारण दु:खित है। वह भी बेटे के भविष्य के बारे में चितित है। बेटा तो किसी की परवाह किये बिना जीना चाहता है। फूफा रजनी से पति के द्वारा अपने बेटे केलिए किसी नौकरी की तलाश करने के बारे में कहता है।

'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में उच्चवर्गीय पिता का चित्रण है। पिता नामी डॉक्टर है। वह बेटे का विवाह अपने इच्छानुसार ही

कराता है। बेटा का एक विदेशी लड़की से संबन्ध था। शादी होकर भी वह असफल हुई। बेटे ने भी पिता के द्वारा जबरन करवायी शादी को पूरी तरह नकार दिया। अंत में पिता भी पुत्र के इच्छानुसार बदल जाता है। बहू को धन देकर तलाक लेना चाहते हैं। अपने बेटे के प्रति पिता के स्वार्थपूर्ण स्नेह का आंकन इस उपन्यास में मिलता है। इसमें पिता बेटे की खुशी केलिए बहू को धन और एक फ्लाट खरीदकर अपने आपको स्वस्थ रखने की कोशिश करता है। यह भी आज की बड़ी सामाजिक विसंगति ही है। पहले बाप अपनी इच्छा के अनुसार सब कुछ करते हैं, गलती हो जाने से उससे किसी न किसी प्रकार छुपाने या भाग लेने केलिए विवश हो जाता है। वह सिर्फ अपने पक्ष की भलाई मात्र देखता है। दूसरों को कोई नुकसान होता या नहीं, इसकी परवाह नहीं है। आज लोग सब कुछ धन देकर पाना चाहते हैं। इस प्रकार करने से मूल्यों में भी ह्रास आ जाता है। संबन्धों का मूल्य सिर्फ धन के साथ रहते हैं। यह स्थिति आज का सामाजिक यथार्थ भी है। सामाजिक प्राणी होने के नाते मानव को समाज में स्वस्थ रहने केलिए मूल्यों की जरूरत है। आज वह ज़िन्दगी के घुड-दौड में सब कुछ हासिल करना चाहता है। किसी भी प्रकार अपने मन चाही वस्तु को खरीदने या उसी प्रकार उससे फायदा नहीं मिलता तो उसे छोड देने में भी लोग हिचकते नहीं हैं। इस प्रकार की दर्दनाक स्थिति समाज में देख सकते हैं। शादी भी ऐसा एक कार्य बन गयी है। इस उपन्यास की नायिका मंजरी से डॉक्टर के पुत्र की शादी हो जाती है। डॉक्टर अपने पुत्र की इच्छा के विरूद्ध ही यह कार्य करता है। दोनों के बीच का संबन्ध अच्छे न होने के कारण वे किसी भी प्रकार से बहू को निकालकर पुत्र को अपनाना

चाहता है। पिता की स्वार्थता इसमें चरमसीमा पर देख सकते हैं। वह अंग-प्रत्यारोपण करने वाला नामी डॉक्टर है। जिस प्रकार एक समान न होने वाले टीषू काँट कर देते है उसी प्रकार वह बहू को तलाक करके अलग रहने केलिए विवश करता है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार खून के रिश्तों में मज़बूती ज़्यादा होती है। खून का संबन्ध बहुत गहरा होता है। पुराने ज़माने से ही इसका अटूट संबन्ध है। इस तथ्य को मृणालजी ने अपने उपन्यास 'पटरंगपुर पुराण' में पुराण कथा के ज़रिए प्रस्तुत किया है। पुराण काल से ही पिता पुत्र का संबन्ध बहुत गहरा था। भीम सेन ने अपने मरे हुए पुत्र घटोत्कच का एक मंन्दिर बनवाया है "भीमसेन ने बनाया ठहरा खुद अपने हाथ से अपने मरे लड़के की याद में घटकू देवता का वह मंदिर। शिबौ! हिडिम्बा राछसी से हुआ ठहरा उसका वह छोकरा! राछस ठहरा तो क्या? अपना खून तो हुआ ही?"[15] भीमसेन का पुत्र घटोत्कच युद्ध में मारा गया। भीम को हिडिम्बा नामक राछसी से होने वाला पुत्र है। पुराण के एक अंश को प्रस्तुत करके उस समय की सामाजिक परिस्थिति को लेखिका हमारे सामने प्रस्तुत किया है। पुराने ज़माने में हर एक रिश्तों के बीच आत्मीयता बहुत थी। वर्तमान समय तक आते-आते संबन्धों में दरारें आ गयी है। सामाजिक परिस्थितियों का बदलाव सारे मानव राशि पर भी पड़ा है।

3.2.1.4. भाई-बहन के बीच का संबन्ध:-

समकालीन दौर में रिश्तें कुछ टूटा हुआ-सा दिखाई पड़ता है। भारतीय संस्कृति में भी आज हम बदलाव देख सकते हैं। शिक्षा और

औद्योगीकरण के फलस्वरूप आधुनिकता आ गयी है। हर कहीं आधुनिकता का बोल-बोला भी है। मानव ज़िन्दगी भी गतिशील बन गयी है। ज़िन्दगी को स्वस्थ रखने की दौड धूप में आपसी रिश्तों को अनदेखा करने का कार्य समाज में हम देख सकते हैं। खून के रिश्तों में भी यह बदलाव दर्शनीय है। संयुक्त परिवार से विघटित होकर आज छोटे-छोटे परिवारों में मानव बाँध गया है। परिस्थिति के बदलाव के कारण व्यवहार में भी परिवर्तन हम देख सकते हैं। बचपन से लेकर देखने वाली प्रवृत्ति है अपने आप में सीमित होना। पुराने ज़माने में लोग बाँट कर जीना जानते थे। सुख-दु:ख को आपस में बाँट कर ज़िन्दगी बिताते थे। इसके बदले आज समाज में अक्सर देखा जा सकता है कि आपस में बोलना कम हो गया है। अपना दु:ख या सुख दूसरों के साथ बाँटना वे नहीं चाहते हैं। क्योंकि इस प्रकार करने से अपने आप को नीचे मानते हैं। भाईचारे की सद्भावना मिट गयी है। आज के समाज में इसका ज़्यादा प्रमाण हम देख सकते हैं। धन-दौलत हड़पने केलिए वे हिचकते नहीं हैं। अपने सुख को ज़्यादा महत्व देते हैं। दूसरे लोगों की परवाह वे कभी नहीं करना चाहते हैं। मृणालजी ने भी 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास के ज़रिए आपसी संबन्धों में आयी दरारों को व्यक्त करने का प्रयास किया है। मंजरी और उनके भाई को विधवा माँ ने पाल-पोसकर बड़ा किया था। दोनों को अच्छी तरह शिक्षा भी दी। नौकरी करने केलिए दोनों अलग-अलग जगह में बस गये। मंजरी की शादी भी हुई। उसी प्रकार भाई भी अपनी पत्नी के साथ माँ से अलग होकर जीते थे। हम जिस वातावरण में जी रहे हैं उसका प्रभाव हम पर जरूर पडता है। यहाँ भी ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने की दौड़ में पीछे मुड़ना कोई नहीं जानता

है। मंजरी हमेशा अपने भाई से दफ्तर में मिलती थी। वह कभी उसके घर जाना नहीं चाहती है। अपने भीतर निहित स्वाभिमान के कारण वह इस प्रकार करती है। इसलिए दोनों के बीच अलगाव हम देख सकते हैं। मृणालजी ने प्रस्तुत प्रसंग के माध्यम से संबन्धों के बीच आने वाली दरारों को स्पष्ट किया है "भाई और मेरे बीच पुरानी टूट की दरार पूरा नहीं पाई कभी। सिर्फ इतना हुआ है,कि दोनों ओर उस पर अतिपरिचय का एक हिम वारिधि फैल गया है। सहोदरों की सूँस इन्द्रियों ने हम दोनों को बता रखा है कि स्मृतियों की बर्फ भले ही एक पुल का आभास देती रहे, पर भीतर-भीतर अभी भी वह खतरनाक रूप से पोली होती है। दरके पुल से फिसलकर बर्फ के नीचे फैले स्याह ठण्डे जल में धँसना और असहाय होकर डूबना हम दोनों में से कोई नहीं चाहता। वैसे भी मेरी राय में नकली प्रेम के भोंडे प्रदर्शन की बजाय सच्ची घृणा का ठण्डापन कठोरता से स्वीकार कर लेना अधिक गरिमामय है।"[16]

इस उपन्यास की नायिका मंजरी स्वाभिमानी नारी होने के कारण वह कभी संबन्धों के बीच आडम्बर प्रियता दिखाना नहीं चाहती है। संबन्धों का महत्व वह अच्छी तरह समझती है। इसलिए प्रेम प्रदर्शन करने केलिए वह तैयार नहीं है। समाज में आज दूसरों को दिखाने केलिए मानव सब कुछ कर सकते हैं। मन के अन्दर घृणा को छिपाते हुए बाहर अच्छे होने का प्रयत्न कर सकते हैं। इस प्रकार दिखाने वाले समाज में मंजरी की यह सोच अत्यंत महत्वपूर्ण लगती है। वह अन्दर घृणा छिपाकर बाहर प्रेम करना नहीं चाहती है। प्रदर्शन प्रियता केलिए प्रेम दिखाने के बदले सच्ची घृणा का ठण्डापन कठोरता से स्वीकार करना वह गरिमामय समझती है। उनकी यह

सोच पाठकों को भी इस प्रकार सोचने केलिए मज़बूर करती है। आज के समाज के सच्चे यथार्थ का आंकन इसमें किया गया है।

मंजरी को माँ की मृत्यु से अत्यंत दु:ख सहना पड़ा था। भाई भी उस समय उसका साथ देता है। भाई हमेशा औपचारिकता वश एक-एक काम करता है। मरणासन्न अवस्था में पडी माँ के पास उसकी पत्नी कभी भी नहीं आती है। सब कुछ होते हुए भी माँ का अंत दर्दनाक स्थिति में हुआ। मंजरी और भाई के बीच भी एक प्रकार की चुप्पी भरा पड़ा है। आपस में समझने की कोशिश भी नहीं कर सकते। अपने आप में सीमित रहना चाहते हैं।

3.2.1.5. लड़के-लड़कियों से भेदभाव की भावना:-

भारतीय हिन्दु समाज का रूप अनेक विशिष्टतायें लिए हुए हैं। यहाँ पुत्र को पुत्री की अपेक्षा अधिक मान दिया जाता है। पुत्री का जन्म अपशकुन माना जाता है और पुत्र के जन्म पर उत्सव मनाया जाता है। यह भारतीय समाज की एक विकृति ही है। प्राचीन काल से ही ये परंपरायें चली आ रही हैं। नवजागरण या आधुनिक युग में कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ है किंतु स्वरूप वहीं का वहीं आज भी विद्यामान है। नवयुग के प्रवर्तकों ने अपने निर्देश से यह बताया है कि बेटा और बेटी दोनों के जन्म में किसी प्रकार का अंतर नहीं है। पुत्री भी पुत्र के समान ही है। मृणालजी ने अपने उपन्यासों में प्राय: स्त्री वर्ग को अधिक सजग और अधिकारपूर्ण दिखाया है। भारतीय जीवन में अधिकांश परिवारों में लड़की का जन्म अशुभ एवं लड़के का जन्म शुभ माना जाता है। अत: उन्होंने अपने उपन्यासों में अपने वर्ग को अधिकार वा सम्मान दिलाने का प्रयत्न किया है। फिर भी भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण हमारे सामने

पेश किया है। मृणालजी ने अपने उपन्यासों में बेटे-बेटियों के बीच होने वाले भेदभाव को दर्शाया है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में हमेशा लड़कों को ऊँचा स्थान देता है। व्यक्ति परिवार में पलता है वहाँ से वह ऊर्जा अर्जित करता है। माँ-बाप भी बच्चों के प्रति इस प्रकार का अन्दर रखने के कारण बाहर जाकर भी वे अपनी शक्ति दिखाते हैं। समाज में बदलाव लाने केलिए पहले पारिवारिक स्थितियों में परिवर्तन आना चाहिए।

पुराने ज़माने से स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखते थे। 'विरूद्ध' उपन्यास के ज़रिए मृणालजी ने लडकियों के प्रति परिवारवालों की सोच को स्पष्ट किया है। 'विरूद्ध' उपन्यास की नायिका रजनी, बुआ से मिलने आती है। बुआ बेटियों को पढ़ाना नहीं चाहती है। उसका विचार यह है कि "यही पास में लड़कियों का स्कूल है, वहीं जाती है यों हमें तो लड़कियों को ज़्यादा पढ़ना पसंद नहीं, पर आजकल सब पढ़ी-लिखी लड़की ही माँगती हैं सो भेज दीं।"[17] वर्तमान समय में लड़कियों की स्थिति में थोडा सा परिवर्तन देखने को मिलता है। इसलिए आज उसे पढ़ने केलिए भेजा जाता है। ज़्यादातर घरों में ऐसी एक स्थिति है। लड़की को हमेशा दबाकर रखा जाता है। आज समाज शिक्षा के महत्व को पहचाने लगा है। महत्व आज लोग शिक्षित लड़कियों से ही शादी करना पंसद करते हैं। कुछ रूढ़िग्रस्त लोग लड़के-लड़कियों का एक साथ पढ़ाना ठीक नहीं समझते। प्रस्तुत उपन्यास की बुआ यों कहती हैं- "लड़के-लड़कियों का साथ-साथ कालिज में पढ़ना हमें कतई पसन्द नहीं। आग-घी का साथ क्या?"[18] बुआ पुरानी रूढियों को पालन करने वाली साधारण औरत है।

वह पुरानी परंपरा को तोडना नहीं चाहती है।

बुआ हमेशा बेटे को पढाना चाहती है। बेटे के माध्यम से वह पारिवारिक उन्नति चाहती है बेटा एमेस्सी में है।गए साल फिर पर्चा बिगड गया था। बुआ बेटे की पढ़ायी और भविष्य को लेकर चितिंत है। बेटे को नौकरी न मिलने के कारण वह दूसरों को कोसती है:-"भाग्य ही खोटा है बेचारे का वर्ना कैसे-कैसे तो निकल जाते हैं। मदद के नाम कोई तिनका तोड़कर दो नहीं करता। कह सब देते हैं कि कोलिफिकेसन नहीं है। अरे करना चाहें तो लोग यूँ करा दें।"[19] बुआ बेटे की एमएस्सी में हारने से होनेवाले दु:ख को दूसरों पर थोप देती है।

पुराने-ज़माने में बेटा और बेटियों में होने वाला भेदभाव बहुत अधिक था। मृणालजी ने 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास के माध्यम से उस समय की भारतीय सामाजिक स्थिति का जीता-जागता चित्र प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास ग्यारह पीढ़ियों की कथा कहने वाली है। इसमें लछमी की सास उससे कहती हैं "लछिमी की सास सुना, हर घडी कहने वाली हुई कि एक तो लडाई-भिडाई का ज़माना, तिस पर सिर पर ये तीन-तीन। जने कैसे निबटेंगी? करके! और भी कहने वाली हुई कि जब लड़की होती है, तो धरती सात अंगुल रसातल को धँस जाती है, करके।"[20] उस समय के सामाजिक अंधविश्वासों की ओर इशारा किया गया है। परिवारवाले सिर्फ बेटों का जन्म चाहते है। परिवार के सभी सदस्य बेटे का जन्म शुभ मानते हैं। चन्दा से अपने पति कहते हैं कि 'लड़का हुआ तो सोने का हार देती तुझे' इससे उस ज़माने की सोच को हम समझ सकते हैं। पटरंगपुर पुराण उपन्यास गाँव एवं शहर दोनों

की कथा कही गयी है। गाँववाले लड़कों को अधिक पसन्द करते हैं। पुत्र के जन्म से ही अपने जन्म को श्रेष्ठ मानते हैं। अधिकतर स्त्रियाँ भी बेटों को चाहती हैं। बेटे के जन्म से ही वे मोक्ष प्राप्ति की इच्छा करती हैं।

लड़के और लड़कियों के जन्म के बाद समाज में कई प्रकार के उत्सव मनाये जाते हैं। समाज कई रीति-रिवाज़ों से बना हुआ है। पुराने-ज़माने से ही सभी धर्म के लोग एक-एक प्रकार के रीति-रज़मों से ज़िन्दगी बिताते हैं। बच्चों के जन्म से होने वाले ऐसे एक रीति-रिवाज़ को लेखिका ने हमारे सामने व्यक्त किया है "जातक कर्म तो लड़कों के ही होने वाले हुए उन दिनों, लड़की हुए में तो बस पूजा कैसी करके नमो-नमो। बडे लोग कहने वाले हुए, कि लड़की हुए में ज़्यादा उत्सव करो तो लड़कियाँ ही लड़कियाँ होती हैं बस में,करके। सच्ची हो आमा की सास ने उनकी दोनों लड़कियों का कुछ छुट्टी-नामकंद करने नहीं दिया,तभी तो बाद को लड़के पर लड़के जने आमा ने!"[21] इसमें समाज में व्याप्त अन्धविश्वासों की ओर इशारा है, दूसरी ओर बेटे और बेटियों के बीच दिखाने वाले भेदभाव भी स्पष्ट हैं। लड़के के जन्म पर उत्सव मनानेवाले लोग लड़की के जन्मदिन मनाना नहीं चाहते हैं। समाज में व्याप्त मिथ्या धारणा को व्यक्त किया गया है।

लड़कियों को ज़्यादा पढ़ाना नहीं चाहते हैं। जल्द ही जल्द परिवार वाले अपने बोझ को कम करना चाहते हैं। समाज में पुरूषों से ज़्यादा स्त्री ही बेटे को अधिक चाहती है। लडकियाँ हुई तो जल्द ही उसकी शादी करवाना चाहते हैं। 'पटरंगपुर पुराण' की आमा भी एक ऐसी स्त्री है। बेटी आगे पढ़ना

चाहती है फिर भी वह उसे पन्द्रह वर्ष में शादी करके भेजती है। बाप उसे पढ़ाना चाहते थे। “सुनैना बाप की प्यारी ठहरी।‘खूब पढ़ाऊँगा इसे’ कहने वाले हुए,पर आमा ने जिद्द करके पन्द्रहवें बरस ही ब्याह कर दिया ठहरा उसका। पढ़ने में गजब की तेज हुई सुनैना! बहुत रोयी थी- सुना, कि अभी और पढ़ूँगी, करके, पदमा ने भी खूब हल्ला मचाया पर आमा अड़ ही गयी थी।“[22]

समाज में ऐसा ही भेदभाव हमें हमेशा देखने को मिलता है। पुराने-ज़माने से ही इस प्रकार की सोच समाज में व्याप्त हो गयी है। पुराणों में भी दिखाया गया है कि बेटे ही अच्छे हैं। रामायण में देखें तो राजा दशरथ पुत्र जन्म केलिए बडी-बडी यागक्रियायें करते थे। राम जब वनवास केलिए निकले तो पिता के मन में भी अधिक दु:ख हुआ ‘पुत्र शोकं महाशोकं’ जैसे बन गया। आने वाली परंपराओं की सोच भी इस प्रकार का होने लगी। बच्चे के जन्म से लेकर ही इस प्रकार का भेद-भाव हम देख सकते हैं। यह प्रथा समाज की एक प्रकार की विकृति ही है। शिक्षा के माध्यम से ही परिवर्तन ला सकते हैं। यह एक मात्र उपाय मानना भी समीचीन न होगा। सामाजिक व्यवस्था के बदलाव के बिना या व्यक्ति की मानसिक बदलाव के बिना भेदभाव मिटाना असंभव ही हैं।

3.2.1.6. बच्चों पर होनेवाले अत्याचार:-

समाज में बच्चों पर होने वाला भेदभाव ही एक प्रकार उस पर किये जाने वाले अत्याचार ही है। वर्तमान समाज में बच्चों पर कई प्रकार के अत्याचार हम देख या सुन सकते हैं। गरीब बच्चों की स्थिति भी बहुत दर्दनाक

बन गयी है। आज बच्चों का शोषण एक नित्य कार्य बन गया है। समाचार पत्रों के माध्यम से ऐसी ताज़ी खबर हम अक्सर सुनते हैं। मृणालजी ने भी अपने उपन्यासों के ज़रिए बच्चों पर किये जाने वाले अमानवीय अत्याचार का अंकन किया है। समाज के ऊँचे वर्ग के लोगों की स्वार्थ पूर्ति का शिकार बनने वाले बंटी का चित्र लेखिका ने 'रास्तों पर भटकते हुए' के द्वारा हमारे सामने ला खड़ा किया है।

इस उपन्यास की नायिका मंजरी पति से अलग होकर दिल्ली के एक बस्ती में रहने वाली है। उसी जगह में बंटी और उसकी माँ भी रहते हैं। गरीबी की वजह से वह बच्चे को देखभाल नहीं कर पाती है। अजीविका चलाने केलिए वेश्यावृत्ति करने लगती है। बंटी का परिचय मंजरी से होता है। घर से प्रेम न मिलने के कारण वह अकेली जीती मंजरी के घर आना जाना शुरू करता है। पहले मंजरी को बंटी पसंन्द नहीं था। बाद में दोनों के बीच दोस्ती होती है। बंटी की माँ पैसे के मोह से उसे बेचती है। बंटी को खरीद्रे वाला अत्याचारी डॉक्टर उससे अवश्यक अंग निकालकर उसकी हत्या कर देता है। अक्सर डॉक्टर बंटी को अपने अस्पताल ले जाता था। बंटी ने इसके बारे में पहले ही बताया था। मंजरी और बंटी की माँ ने उसकी बातों को गंभीरता से नहीं लिया था। बंटी की मृत्यु के बाद जब मंजरी सच्चाई जानने की कोशिश करती है तब उसे पता चलता है कि वह अत्याचारी डॉक्टर उसके अपने श्वसुर है।

आज की दर्दनाक सामाजिक स्थिति की ओर लेखिका हमारा ध्यान आकर्षित करती है। पहाडी इलाकों में रहने के कारण या निर्धनता में जीने के कारण उस पर किये जाने वाले अत्याचारों से किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया

नहीं होती है। बच्चों को डॉक्टरों से भी एक प्रकार का शोषण झेलना पडता है। डॉक्टर समाज का सेवक है फिर भी वर्तमान दौर में सेवा का भाव सिर्फ धनार्जन केलिए मात्र बन गया है। मरीज डॉक्टर पर विश्वास रखते हैं और उसे देवता मानते हैं। आज की सामाजिक स्थिति में भी कई प्रकार की विकृतियाँ हम देख सकते हैं। आज डॉक्टरों से अंग-प्रत्यारोपण का काम खूब चलता है। गरीब बच्चा इसका ज़्यादा शिकार बन जाता है। इस उपन्यास में बंटी इस प्रकार के अत्याचारों का शिकार बनता है। लेखिका ने प्रस्तुत प्रसंग के माध्यम से बच्चों से किये जाने वाले अत्याचारों का नमूना प्रस्तुत किया है। ‘मेरे श्वसुर बच्चों में बच्चे बनकर तुरंत कैसे घुल-मिल सकते थे,यह सब बात मुझे हमेशा विस्मित करती थी। बच्चे उन पर पूरा भरोसा करते थे। वे जब उनकी ओर ताकतें तो उनकी कटोरे-सी आँखों में पूर्ण समर्पण छलकता होता। मैंने देखा तो नहीं पर मुझे पूरा यकीन था कि जब गुर्दा या मज्जा निकालने केलिए वे झोपडियों से लाए गए इन बच्चों को बेहोशी की दवा की सूई लगाते होंगे,तो इतनी नमी, इतने प्यार से,कि उन्हें पता तक नहीं चलता होगा। और ऑपरेशन के बाद भी उन्हें वे खूब सारी आइसक्रीम पन्नी में लिपटी चॉकलेटे गुब्बारे वगैरा लेकर देते रहे होंगे!”[23] मंजरी इस प्रकार की सोच में रहती है। वह बंटी की अकालमृत्यु का कारण जानने केलिए कई प्रकार से प्रयास करती है। अंत में उसे इस सत्य का पता चलता है कि बंटी की भी मृत्यु इस प्रकार के अंग प्रत्यारोपण के कारण हुई है।

बंटी की अकालमृत्यु की खबर सुनते ही मंजरी को बहुत दु:ख होता है। वह अन्याय के विरुद्ध लड़ने की कोशिश करती है फिर भी आगे न बढ़

सकी। मृणालजी ने बंटी के माध्यम से समाज में होनेवाले बडी विपत्ति की ओर इशारा किया है। गरीब होने के नाते बच्चे लोग हमेशा इस प्रकार के शोषण का शिकार बन जाता है। ग्रामीण बच्चों के साथ होने वाले अत्याचार भी हम देख सकते हैं। भूमंडलीकरण या उपभोगवादी समाज में सब कुछ भोग की वस्तु मात्र बन गया है। यहाँ मानवीयता का ह्रास भी देख सकते हैं। उच्च वर्ग के लोग अपनी स्वार्थाता की पूर्ति केलिए सब कुछ करने केलिए तैयार है। वह अपना-अपना सुख और शांति ही चाहता है। गरीब लोग अज्ञान के कारण इस प्रकार के शोषण का शिकार बन जाता है। वह अपनी गरीबी को हटाने केलिए इस प्रकार के अमानवीय कृत्यों में भागीदार बन जाता है।

बंटी की माँ पार्वती शराबी पति की मृत्यु के बाद दिल्ली के एक बस्ती में आकर रहती है। आज के हमारे समाज में ऐसी कई स्त्रियाँ देखने को मिलती हैं जो पति की मृत्यु के बाद बच्चे को पालने केलिए किसी भी धंधा चुन लेती हैं। इस प्रकार करने से उसकी श्रद्धा एक ओर धंधे की ओर मात्र बन जाती है। अक्सर आज हम बच्चों की अकाल मृत्यु की खबर सुनते हैं। गरीब होने के कारण खबर खुला नहीं रहती है। इस उपन्यास के बंटी नामक बालक पूरे शोषण के शिकार बच्चों की प्रतिनिधि है। बंटी द्वारा झेला गया यह अमानवीय अत्याचार इसका नमूना मात्र नहीं है सच्चा यथार्थ भी है। छोटे बच्चे को वश में करके ऊँचे पद के लोग अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। अंग-प्रत्यारोपण आज अक्सर होता ही रहता है। बड़े-बड़े लोगों की जान बचाने केलिए इस प्रकार के मासूम बच्चों का उपयोग करनेवाले लोगों को समाज में देख सकते हैं। अन्य देशों से आकर बस्ती में रहने वाले बच्चों का निरीक्षण करके धीरे-धीरे वे

अपनी ओर खींचकर शोषण का शिकार बनाते हैं। निर्धनता के कारण या कोई चारा न होने के कारण बच्चे जल्दी ही आकृष्ट होते हैं। कभी-कभी परिवार वाले भी बच्चे को बेचने केलिए तैयार होते हैं।

3.2.2. भारतीय सामाजिक जीवन की विविध झाँकियाँ:-

उपन्यास समाज और उसके जीवन की अभिव्यक्ति करनेवाला सशक्त माध्यम है। मृणालजी ने 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास में समूचे भारत के ऐतिसासिक परिप्रेक्ष्य को सामने रखकर उस युग की सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करने की कोशिश की है। भारत विविधता का देश है। भारत में कई बार विदेशी शक्तियों का आक्रमण भी हुआ था। पुराने ज़माने में राजाओं द्वारा भारत का प्रशासन चलता था। उस समय से लेकर भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा से होने वाले बदलावों को लेखिका ने सूक्ष्म ढंग से दर्शाया है। सामाजिक बदलाव को समझने केलिए लेखिका ने ग्यारह पीढियों की कथा पेश किया है। उपन्यास के पात्र उस समय के समाज के प्रतिनिधि ही हैं। साहित्य हमेशा सच्चाई को साथ लेता है। इसलिए इसमें ग्रामीण लोगों के ज़रिए समूचे भारतीय गाँव का ही यथार्थ हम देख सकते हैं। पन्द्रह पर्वों के ज़रिए लेखिका ने कथा पेश की है। 'पटरंगपुर' एक अंचल का नाम है। पटरंगपुर गाँव के साथ कथा शुरू होती है। पटरंगपुर गाँव वास्तव में भारतीय गाँव ही है। त्रेतायुग के राम रावण युद्ध की कथा के माध्यम से ही उपन्यास की शुरुआत होती है। उस समय के समाज का अंकन भी उन्होंने किया है। उस समय युद्ध होते-होते हर कहीं खून का बहाव था। भलाई की जीत हुई थी।

उस समय समाज में ब्राह्मणों का वर्चस्व चल रहा था। उस समय ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति के बारे में आमा के माध्यम से लेखिका कहती है - “मनुष्य भी तब और-और किस्म के हुए। सुना, पहाड के बामणों के अगल-बगल तब पंख होते थे। फटाफटी पंख हल्का के बनपछी जैसे उड के घूमते रहने वाले हुए वे लोग, जब जैसी मन में आयी। ऐसा पुन्न-परताप हुआ उनका, कि ठिक्क बरम महूरत में नहा के ,ए बीच नदीं में खडे हो के,’ऊँ भानवे नम:, अहिर्बुध्न्याय नम: करके सूर्ज भगवान को अर्घ चढ़ाने वाले हुए,तो साछात सूर्ज देवता खुद नदी के जल में चमचमान सोने के गोले के जैसे प्रकट हो पढ़ने वाले हुए।“[24] समाज में ब्राह्मणों को ऊँचा स्थान मिला था। अच्छी तरह की फसल भी मिल जाती थी। प्रकृति से मिलकर रहने के कारण प्रकृति से भी ज़्यादा संपदा मिलती थी। ‘नदियों के बालू से तक सोना निकलनेवाला ठहरा तब ज़मीन ऐसी ठहरी, सुना, कि बाएँ हाथ से आँखें बन्द करके भी नाज छींट दो तो ऐसी फसल हो जाने वाली हुई,कि कहाँ जो धरो, वैसे जो सिमटो।“[25] तरह तरह के अनाज भी इस प्रकार उगते थे। मात्र नहीं स्थान-स्थान में मंदिरों की स्थापना भी हुई थी।“सुई-पट्टी में ठहरा सूर्ज देवता का मंदिर, चम्फावत में घटोत्कच का, घटकू देवता का ; फिर शिव भी ठहरे-शक्ति के भी ठहरे ठौर-ठौर अस्थान।“[26] रिश्तों में भी गहरा संबन्ध था। आपस में झगडा करते हुए भी संबन्धों में गहरा आस्था और विश्वास रखता था।

राजाओं के साथ ब्राह्मणों की भी प्रमुखता मिलती थी। राजा लोगों ने शिकार केलिए जाते वक्त अपनी पसंन्द का स्थान देखा तो वहाँ अपना अधिपत्य स्थापित कर लेता था। राजाओं के और अन्य लोगों के अधिपत्य होते

वक्त आम आदमियों की हालत ही बुरी हो जाती थी। उसको समय पर आवश्यक चीज़ें नहीं मिलती थी। अकाल जैसा हुआ था। आमा ने राशन वाले से मट्टी तेल पूछा तो उसने पहले नहीं दिया। बाद में उन्होंने कल्कटर से शिकायत करने की बात कहीं तो उसे मात्र देने केलिए वे तैयार हुए। आमा ने खूब लडकर सब को दिलाने का कार्य किया। उस समय के समाज में गाँववालों के बीच का रिश्ता अटूटा था।

आँचल में कई प्रकार के अन्धविश्वासों का बोल-बाला भी खूब चलता था। "सुना, सीढ़ी पर खडी होकर सिर धोती थी, इतने लंबे तो बाल ही थे उसके। वैसे अच्छे जो क्या होते हैं कमर के नीचे लंबे बाल? दु:खी जीवन होता है ऐसी औरत का। सीतामाई के भी,सुना,कमर से लंबे बाल थे! ठहरा ही लछमी का जीवन भी दु:खमय ठहरा ही"[27] समाज में स्त्रियों की स्थिति भी दु:खमय थी। लड़कियों की माँ को ज़्यादातर कष्ट भोगना पडता था। तरह-तरह के विश्वासों से गाँव भरा था। लछिमी की देह पर देवी चढ़ने के बारे में आमा बताती है। कई कष्ट सहते वक्त एक दिन किसी भी प्रकार का प्रतिरोध अवश्य होता है। मृणालजी ने गाँववालों के विश्वासों का भी आंकन लछिमी के माध्यम से व्यक्त किया है "साच्छात् लछमी को भेजा मैंने तुम पटरंगपुरियों के बीच, और तुमने क्या नाम, उसे नौकरानी बना कर उसकी बेकदारी करी! जाओ अब से तुम्हारे लड़के और उनके लड़के और उन लड़कों के लड़के सब पराई नौकरी-चाकरी करके घर परवार पालेंगे!"[28] समाज में इसके बाद कई प्रकार का बदलाव देख सकते हैं। लोग इन विश्वासों के साथ जोडकर ज़िन्दगी आगे बिताते हैं। ब्राह्मण के वर्चस्व के समय में संस्कृत भाषा का पढ़न सिर्फ

ब्राह्मण लोग ही करते थे। उस समय का विश्वास भी यह था कि कम जातों ने यदि संस्कृत पढ़ा तो ये अपवित्तर बन जायेगा। समाज की भावना भी इस प्रकार थी। दूसरे जाति के लोग इसलिए शिक्षा से वंचित रखते थे। लोग तो अपनी-अपनी जातियों के साथ संबन्ध जोडते थे। ऊँच-नीच का भाव भी वहाँ मौजूद था।

पढने का अधिकार सिर्फ ब्राह्मणों को ही प्रप्त थ। विद्यार्जन केलिए भारत में ही रहना पडता था। उसे भी बाहर जाना मना था। सामाजिक स्थिति इस प्रकार की थी जो पढ़ने केलिए विदेश जाता तो उसे जाति से अपवित्तर मानते थे। ये ज़माना इस प्रकार का था कि "विद्यार्जन करना तो ब्राह्मणों का हक्क ही ठैरा, पर पढना ही हो तो काशी जाओ या मदुरै-मदरास जा कर वेदपुराण पढो, पर खबरदार सात समुन्दर पार म्लेच्छों के राज में जा कर जात झन गँवाना। देश में पढते हो तो जितना कहो हम दे दें,पर विदेश गये तो समझ लो,जात के बाहर हो जा ओगे। आगे तुम जानो तुम्हारा काम......।"[29] इस प्रकार की सामाजिक अव्यवस्था वहाँ चलती थी। फिर भी कुछ लोग अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करने वालों को प्रोत्साहन भी देते थे। लिलुवा नामक लड़के को विदेश में जाकर अंग्रेज़ी पढने की चाह हुई तो कुछ लोग उसके पक्ष में रहे तो कुछ विरूद्ध। लिलुवा के माध्यम से थोडा-सा परिवर्तन भी आने लगा। लिलुवा को प्रोत्साहन देने वालों का विचार था कि "तेरी इच्छा बिलकुल ठीक है'अब बिलैती विद्या बिलैत जाकर पढ़े बिना नहीं हो सकता, अत: तू जा खर्चा हम देते हैं कोई आपत्ति करेगा तो हम निबट लेंगे करके।"[30] समाज में पहले कई प्रकार की हल चल होने लगा। अंत में वह पढ़ने केलिए

विलायत गये।

स्त्रियों के साथ भी कई प्रकार के अव्यवस्था कायम थी। ज़्दात्तर बहुओं को घर जाना मना था। आमा अपने मायके में जाने का मोह नहीं छोड सकती थी। एक बार वह ससुरालवालों से कहे बिना अपने घर गयी। वापस आते वक्त उन्होंने देखा कि ससुरालवालों को इस बात का पता चला है और उसे जीते जी उसका घटाश्राद्ध कराया गया। दुबारा उसे स्वीकार करने केलिए कई प्रकार की व्यवस्थायें होती थीं। "सो पाँच बच्चों की महतारी आमा को फच्चाक के घडा फोडकर पितर बनाया गया। खीर खाजे के भात से उनके नाम का तिल-जौं के साथ पिंडदान हुआ, तर्पण तिलांजलि हुई। तब जो पुर्ननामकरण करके तुलसी विवाह हुआ और फिर जो वह पुन: विष्णुकुटी वालों की बहु बनीं।"[31]

नरेन्द्र नामक लड़के के माध्यम से युवा वर्ग की दिशाहीनता को भी लेखिका व्यक्त करती है। नरेन्द्र पिता सुरेन्द्र से रूष्ट होकर आमा के पास आ गया था। वहाँ आकर उसके क्रिया- कलापों को इस प्रकार उपन्यास में व्यक्त किया गया है कि "नरेन्द्र करता है दिनभर गप्प-शप हर तीन घंटे में चाय का गरम गिलास उसे चाहिए, शाम को चाहिए बिलैती शराब। सीजन में सैलानियों की भीड में देखे तो उसमें नरेन्द्र, शरदोत्सव में रामलीला कमेटी की प्रबन्धकों का पता करुं तो उसमें नरेन्द्र!"[32] लक्ष्य के बिना चलने वाले युवा वर्ग का प्रतिनिधि है नरेन्द्र।

अंग्रेज़ी लोगों के आगमन के साथ भी गाँव में परिवर्तन आता है। पहले वे अंग्रेजों को म्लेच्छ कहकर उसे अलग रखते थे। धीरे-धीरे व्यवहार में भी बदलाव आने लगे। अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त लोग इससे खुश थे। वे भी अंग्रेज़ी पढ़ने का आदेश दूसरों को देते था। ऐसा एक भाव हो गया 'जिसने इंगलिस भाषा नहीं पढ़ी, उसका जन्म अकारथ है करके' कारबेट सैप अंग्रेज़ों के प्रतिनिधि है। वे गाँव आकर सबसे प्रेम की भावना रखता था। उन्होंने शादी नहीं की। शिकार जाना उनका मनपसन्द काम था। कहा जाता है कि उन्होंने अपनी संपत्ति मंदिरों को और नौकर चाकरों को बाँट लिया था। इलाके के लोग धीरे-धीरे अंग्रेज़ों की सेवा करने में तत्पर हो गये। लोग जल्द ही उसके वश में आ गये थे। "बामणों के घर की औरतें उसके खाये के बरतन भी माँज के घर देने वाली हुई, कि गोरे साधु के बरतन धोने से हमारी जात क्या चली जायेगी करके?"[33]

प्रेमपूर्ण व्यवहार करके अंग्रेज़ों ने गाँव वालों को हाथ में लेते हैं। धीरे-धीरे वहाँ उसके सुविधानुसार सडके बनवाते हैं। हिन्दुस्तानियों को वे काला काला संबोधित कर बातें करते थे। उनके द्वारा बनाये गये सडकों में सिर्फ वे ही चल सकते थे। उन्होंने सैन-बोट लगवाकर यों लिखा "उन्ही ने बताया शहर को,कि अँग्ररेजी में सैन बोट पर जो लिखा है उसका मतलब है कि कुत्ते और हिन्दुस्तानी यहाँ नहीं आ सकते करके।"[34] इससे अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तानियों के प्रति होने वाले मानसिकता का यथार्थ चित्र मिलता है। पुराने-ज़माने में अंग्रेज़ लोग भारत में अपने अधिपत्य स्थापित करने केलिए प्रेम पूर्व व्यवहार करके धीरे-धीरे लोगों का शोषण करते थे। समाज में होने

वाली अव्यवस्था के कारण ही गाँव वाले जल्द ही उसके वश में आ गये थे। राजाओं के बीच होने वाले आपसी झगडा और आपस में वैर्य की भावना के कारण समाज में शिथिलता आ गयी थी। लेखिका उस समय के सामाजिक सच्चाई का ब्योरा हमारे सामने प्रस्तुत करने की कोशिश की है। कई लोग अंग्रेज़ों का अनुकरण भी करने लगे थे। “टूरिश्ट ठहरे बाहरिया, पर उनकी देखा-देखी पटरंगपुर के लौंडे-मौंडे भी नित्त नयी काला जो सीख रहे हैं, सो सीख ही रहे हैं”[35] अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करके कल्क्टर बनने वाले गोपदत्त अपने विवाह भी अंग्रज़ों के ढंग से ही किया था। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने केलिए बच्चों को बोलिडग में रहना पडता था। वहाँ से शिक्षा प्राप्त करके आने वाले लोग सिर्फ अंग्रेजी ही बोलते थे। अंग्रेज़ी शिक्षा को ज़्यादा ही प्रमुखता देते थे। अंग्रेज़ों को पसन्द करनेवाले उच्च वर्ग के लोग अपने आप को उसी तरह बदलने की कोशिश में रहते थे।

साधारण गाँव वाले अपने विश्वास की ओर आगे बढ़ते थे। छींक को लेकर भी गाँव वालों का विश्वास था कि “छींक भी ये गजब की चीज़ होती है हो! कि पीछे छींक कलक लगावै सम्मुख छींक युद्ध करवावै, छींक दाहिनी द्रव्य नसावै, बायें छींक दोष पगटवै।“[36] उस समय युद्ध में कई लोग मारे गये और लाखों बेघर हो गये। ये सारी घटनाओं को वे इसी विश्वास के आधार पर देखते थे। कई किस्से गाँववालों के बीच चलते थे। पटरंगपुर के एक कुटुम्ब ठहरा पाण्डे लोगों का। संयुक्त परिवार था। इसलिए सब लोग मिलकर ही काम करते थे खाना-पीना सब बाँटके खाते थे। अतिथियों का भी खूब सत्कार करता था। इसमें थूमिका के माध्यम से अतिथि से किये जाने वाले व्यवहार का

चित्र भी है। गाँव छोडकर आने वाले ब्राह्मण पाण्डे कुटुम्ब में शरण लेता है। वहाँ उसे अच्छी तरह ख्याल रखता था। मुकदमा जीते ही वे गाँव वापस गये और वहाँ भी कई अमूल्य चीज़ों को लेकर उन लोगों को दिया। अतिथि प्रेम की यह कथा के माध्यम से उस समय के लोगों का व्यवहार हमारा समझ सकते हैं। भारतीय लोगों की खास विशेषता भी यही है कि वे हमेशा आनेवालों को खुशी से रखते हैं।

पहली बार गाँव में बाहर से सरकस आ गया। कलाकारों की कला प्रदर्शन देख कर गाँव वाले के मानसिकता भी अलग-अलग था। आमा कहती थी कि “लोगों का पूरा विश्वास हुआ कि उसे कोई बरम-पिशाच-हरम-पिशाच सिद्ध ठहरा करके। होगा हो,जरूर होगा। जीभ काट के देवी को चढ़ाने ही वाले हुए जोगी-जती लोग! क्या पता उसने मसान में हाथ काट के बैताल सिद्ध कर रखा हो? आँखें ,सुना लाटी माता की तरह लाल मशाल जैसी जलती थीं उसकी। कैसे-कैसे रंग हुए विधाता की लीला के और क्या?”[37] सरकस कलाकारों का कला प्रदर्शन देखकर गाँववाले भी चकित होते थे। उनका यह विश्वास था कि छींक के कारण भी ये सब विचित्र घटनाएँ घटती हैं। गाँववाले अपने परंपरागत विश्वासों को तोडना नहीं चाहते थे। दूसरी विचित्र बात ये पहली सिनेमा का प्रदर्शन को मानते हैं। गाँव में भी धीरे आने वाले परिवर्तन ये सब ही हैं। युवा वर्ग के लोग जल्द ही उस बदलाव को स्वीकारने लगे सिनेमा देखने का शौक भी उसमें अधिक था।

सिनेमा का प्रदर्शन के पहले ये खबर गाँव वालों को सुनायी जाती थी। इसका एक छोटा सा दृश्य लेखिका प्रस्तुत करती है :- “आज शाम को,

साढ़े पाँच बजे, अल्फरेड सनीमा,गाडी सडक के पा....स, माय हीरो नाम की फिलिम दिखाई जायेगी। जीस में देखिए परीचेहरा माधुरी, जाँबाज़ और हज्जारों दूसरे कला-कारों के कमाल। दाम बालकोनी एक रुपिया,नीचे मंजिल बारै आना, दरी वालों केलिए फकत दो आना........"[38] गाँव वाले पहली बार सिनेमा और कैमरा जैसे वस्तुओं को देख रहे थे। कैमरे से खींचे तीर्थ स्थान का फोटो वे अपने पूजा घर में बिठाकर आशीष माँगते थे। धर्म परिवर्तन का कार्य भी उस समय समाज में चलता था। बहु विवाह की प्रथा भी उस वक्त देखने को मिलती थी। पटरंगपुर के मर्द दूसरी-तीसरी या चौथी तक शादी कर लेते थे। बच्चों की भी संख्या अधिक थी। कई प्रकार की बीमारियों से उनकी मृत्यु भी होती थी। उस समय छे की बीमारी छूत की मानती थी। इस रोग लगने से बहु को ससुराल वाले त्यागते थे। लोगों के मन में इस बीमारी को लेकर गलतफहमी भर गयी थी। मरीज भी इलाज न मिलने के कारण जल्द ही मर जाते थे। हेमा इस रोग का भुक्त भोगी है। औरतों को ज़्यादा हँसना भी मना था। पटरंगपुर की औरतों से कहा जाता था कि "उन दिन क्या, आज भी औरतों से पटरंगपुर में कहते हैं कि ज़्यादा मत हँसो, जितना हँसोगी उतना ही रोना पडेगा, करके! अहा रूप की तरह ही हँसना भी काल ठहर स्त्री केलिए!"[39] समाज में स्त्रियों केलिए कई प्रकार की आचार संहितायें उपलब्ध थे।

गाँव में होली का उत्सव भी सब लोग मिलकर मनाते थे। लोगों के बीच समता का भाव भी था। अंग्रेज़ों द्वारा ही अत्याचार का बोल-बाला था। गाँव के लोगों को लेकर जाने वाले पुलिस वाले भी उसे खूब पीटते थे।

एक ओर गाँववालों को इस प्रकार के कष्ट झेलना पड़ा। दूसरी ओर उनके द्वारा देश भी दो वर्गों में बाँटने का कार्य किया। इससे भी लोगों को कठिनाइयाँ महसूस करने पडी। गाँव से लोग पलायन करने लगे। शहरों में भी बदलाव खूब आया। अंग्रेज़ों के आगमन से ही समाज में उसके संस्कृति को यहाँ के लोग अपनाते थे।

मृणाल पाण्डे जी ने 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास के जरिए ग्यारह पीढियों का उल्लेख किया है। एक-एक व्यक्ति समूचे गाँव की प्रतिनिधि ही है। उसी के माध्यम से तत्कालीन समाज में होने वाले बदलाव और बदलाव के कारण को भी हमारे सामने पेश किया है। उपन्यास में कथापात्रों की संख्या अधिक है उसी के द्वारा ही तत्कालिन सामाजिक जीवन हमारे सामने ज्वलंत हो उठता है। लेखिका ने भारतीय गाँव की ज़िन्दगी में आने वाले परिवर्तन को दिखाना मात्र नहीं, पुराने ज़माने की ज़िन्दगी को हमारे सामने पेश करके आज की सामाजिक व्यवस्था की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने का कार्य किया है।

3.2.3. समाज में नारी जीवन के विविध पहलू:-

मृणालजी के उपन्यासों के केन्द्र में सदा स्त्री ही रही है। समाज के हर तबके की स्त्रियों की स्थितियों को उन्होंने अच्छी तरह उकेरा है। समाज में नारियों के प्रति होने वाले शोषण को भी उन्होंने स्पष्ट रूप से दिखाया है। पितृसत्तात्मक समाज का मानना है कि पुत्र ही पिता के उद्देश्यों का वहन करता है। सबसे पहले समाज में स्त्रियों से शिक्षा का अधिकार छीन लिया

गया। स्त्री जितना सहती रही उतनी ही उसका शोषण बढ़ता रहा। पितृसत्तात्मक समाज के हर क्षेत्र में स्त्रियों का शोषण हो रहा है।

'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास के ज़रिए लेखिका गाँव की औरतों की ज़िन्दगी का ब्योरा प्रस्तुत करती है। स्त्रियों द्वारा ही स्त्रियों को कई प्रकार की कष्टतायें झेलनी पडती हैं। लछिमी के सास के माध्यम से इसका एक नमूना प्रस्तुत किया है। लछिमी से हरिया का जन्म होते वक्त उसकी तबीयत ठीक नहीं था। इसलिए दादी का ही दूध उसने पिया था । वह दादी से अधिक प्यार करता थी। दादी के कहने पर हरिया माँ को भी दु:ख देता था।"कभी सुना, माँ काम कर रही होती, तो पीछे से उसे धक्का दे आता! पीठ की बहनों से झगडा-ही-झगडा। दादी सिखाती है करके लछिमी जानने नहीं वाली जो क्या हुई? पर मुख बंद रखने वाली हुई समझदारी से।"[40]

उस समय समाज में स्त्रियों का बोलना मना था। जो कुछ अत्याचार होता था उसे सहकर चुपचाप रहने वाली को समझदार समझते थे। लड़कियों को वे लोग पसन्द भी नहीं करते थे। ज़्यादातर परिवार वाले बेटे के जन्म को शुभ मानते थे। खाना खाने तक भी एक-एक व्यवस्था होती थी। यदि स्त्रियों से कोई गलती हुई तो उस पर क्रोध की वर्ष होती थी। चुपचाप सहने वाली नारियों की तरह, उस व्यवस्था के विरूद्ध प्रतिरोध व्यक्त करने वाली कुछ स्त्रियों को भी हम देख सकते हैं। आमा इस प्रकार की नारी का प्रतिनिधि है। सास कंजूस औरत थी। एक बार उन्होंने कहा कि "अशुद्ध हाथ से खाना-पीना छूती है, यही सीप सिखाया है तेरी महतारी ने करके? बाहर रखो बायाँ

हाथ अटाली से।"[41] आमा इसके विरुद्ध में कहने लगी कि 'जिस अंग के मारे ये हाथ अशुद्ध होता है, उसे पाटे पर ही धरा है सबने'।

शादी के बाद लड़कियों को मायका जाने केलिए ससुरालवालों की अनुमति आवश्यक थी। कहे बिना जाने से उसे घटश्राद्ध करने की प्रथा कायम थी। गाँववाले लडकों को ही ज़्यादा पढ़ाते थे। लड़कियों को छोटी-सी उम्र में ही शादी करा दी जाती थी। लड़कियों को ज़्यादातर बोझ समझते थे। परिवार में हमेशा पुरूष ही ऊँचे स्थान पर बैठता था। ग्रामीण औरतों को कई प्रकार की कष्टतायें सहनी पड़ती हैं। एक ओर उसे घर-गृहस्थी संभालना, बच्चों को पालना, और सास-ससुर को भी खुशी से रखना पडता था। शिक्षा न मिलने और छोटी आयु में विवाह होने से स्त्री पराश्रित होकर रह जाती है। पुरूषों को बहु विवाह करने केलिए अधिकार था। फिर समाज में विधवाओं की स्थिति भी दर्दनाक है। शादी करने से पहले वह मायके से बाहर हो जाती है और पति के मरने से वह ससुराल वालों के द्वारा छोड भी दिया जाता है। समाज में हमेशा स्त्रियों पर ही ज़्यादा दबाव देखने को मिलता है। स्त्री और पुरुष दोनों समाज के अंग ही हैं। समाज को पूर्णता देनेवाली इकाई भी है। जहाँ एक भाग का बर्बरता पूर्वक दमन किया जा रहा हो वहाँ दूसरा भाग समग्रता: स्वस्थ नहीं रह सकता है। इन्हीं कारणों से समाज में वेश्यावृत्ति, व्यभिचार को बढ़ावा मिलता है। 'पटरंगपुर पुराण' में ग्रामीण औरतों का चित्रण है तो उनके 'विरूद्ध' और 'रास्तों पर भटकते हुए' शीर्षक उपन्यासों में आधुनिक नारी का चरित्र-चित्रण है।

पुराने ज़माने में कई प्रकार की रूढ़ियाँ प्रचलित थीं। परपरागत

मूल्यों का पालन करने केलिए स्त्रियाँ बाध्य होती थीं। पुरानी पीढ़ी के लोग आदर्श मानने केलिए रूढियों का पालन करते थे। सब कुछ सहकर वे पहले घर की चाहरदीवारी पर सीमित रहती थीं। आज के समाज में नारी चारदीवारी की कैदी न होकर बाहर की कामकाजी महिला हो गई है। नारी जीवन के समस्त मूल्य अब बदल गये हैं। नारी जागृत हो उठी है, अपने शोषण के विरूद्ध उसकी वाणी में विद्रोह के स्वर गूंजने लगे हैं। वह अपने व्यक्तित्व के प्रति सजह है और इसकी सुरक्षा केलिए आज सभी परंपरागत मूल्यों से लड़ रही है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि जीवन के सभी क्षेत्रों के प्रति नारी का दृष्टिकोण बदल गया है। नारी आज अपनी अस्मिता की खोज करती रहती है। मृणालजी के 'विरूद्ध' उपन्यास की रजनी अपनी अस्मिता को पहचानने केलिए लड़ती नारी है। वह वास्तव में आधुनिक नारी का प्रतीक ही है। रजनी उच्च शिक्षा प्राप्त कामकाजी महिला है। विवाह के बाद उसके मन में कई प्रकार के द्वन्द्व उत्पन्न हो जाते है। वह स्वतंत्र होकर जीना चाहती है। मन की इच्छानुसार कई जगहों पर जाती है। फिर भी मन का संघर्ष उसे सताता है। कभी-कभी वह अपने बचपन की याद करती है। उसकी फुआ परंपरा को पालन करने वाली नारी है। वह लड़कियों को ज़्यादा पढ़ाना नहीं चाहती है। ये सब रजनी पसंद नहीं करती है। मुक्ति की ललक के कारण रजनी विरूद्ध हो जाती है। उसका कहीं भी मन नहीं लगता है। पति उसका पूरा ख्याल रखने वाला आदमी है। सब प्रकार की सुख-सुविधाएँ उसे प्राप्त हैं फिर भी वह समाज की पुरानी मान्यताओं के अनुसार जीना नहीं चाहती है।

मृणालजी ने 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में आधुनिक नारी का दूसरा रूप प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की नायिका मंजरी पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करनेवाली नारी है। उसके पिता के मरने के बाद माँ ने उसे पाला-पोसा है। गाँव में जीते वक्त भी माँ ने उसे उच्च शिक्षा देने का कार्य किया है। माँ हमेशा ग्रामीण वातावरण में ही जीना चाहती थी। मंजरी स्वाभिमानी नारी है। वह समाज में होने वाले अत्याचारों का कारण जानने की इच्छा रखनेवाली नारी है। उसको कई प्रकार का शोषण सहना पड़ा फिर भी वह इससे ऊर्जा प्राप्त करके ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने वाली है।

पितृसत्तात्मक समाज का षड़यंत्र की सार्वभौमता को सिद्ध करते हुए जॉन स्टुअर्ट मिल कहते हैं कि-"पुरुष अपनी स्त्रियों को एक बाध्य गुलाम की तरह नहीं बल्कि एक इच्छुक गुलाम की तरह रखना चाहते हैं। सिर्फ गुलाम नहीं, बल्कि पसंदीदा गुलाम, इसलिए उनके मस्तिष्कों को बंदी बनाए रखने के लिए उन्होंने सारे संभव रास्ते अपनाए है।"[42] इसमें मंजरी भी इसका शिकार बनी हुई नारी है। उसके सास डॉक्टर ने अपने पुत्र की इच्छा के विरूद्ध शादी मंजरी के साथ कराया था। एक साल तक वह ससुराल में रही थी। पति उसे छोडकर विदेशी लड़की से शादी करता है। सास ने अंत में मंजरी को कुछ रुपये और फ्लाट खरीदकर देता है और अपने आपको स्वस्थ रखता है। इसमें सास इस पितृसत्तात्मक समाज के पुरुषों का प्रतिनिधि है। अपनी स्वार्थ पूर्ति केलिए वह मंजरी का इस्तेमाल करता है। मंजरी भी तलाक लेकर स्वतंत्रता से जीने का मार्ग अपनाती है। वह दिल्ली के एक बस्ती में जाकर रहते वक्त ,वहाँ के पार्वती और बंटी जैसे लोग उसकी ज़िन्दगी में आ जाते हैं।

पार्वती अपनी गरीबी से मुक्त होने और बच्चे को पालने केलिए वेश्यावृत्ति करती है। समाज में पार्वती जैसी कई औरतें हैं। पुरुषों के द्वारा वे लोग हमेशा शोषण की शिकार बनाये जाती है।

बंटी नामक बच्चे की अकालमृत्यु का कारण खोजने केलिए मंजरी तैयार हो जाती है। इन लोगों के साथ उनका अधिक संबन्ध नहीं था फिर भी वह मृत्यु के कारण जानने केलिए उत्सुक है। पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करने के कारण वे अपने दोस्तों के माध्यम से वास्तविकता जानने की कोशिश करती हैं। उसे सभी जगह से निरुत्साहित करने वाले लोग अधिक थे। समाज के ऊँचे वर्ग के लोग भी मृत्यु में शामिल था। अंत में वह लक्ष्य तक जरूर पहूँच जाती है। फिर भी समाज की यह दर्दनाक स्थिति उसके मन को करारी चोट देती है। आगे का कदम रखने केलिए कोई उसे प्रोत्साहित नहीं करते हैं। मंजरी समाज में होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाने की क्षमता रखने वाली आधुनिक नारी ही है।

गुजरात की सांसद ऊर्मिला बेन का कहना भी सही है कि:-" पुरुष जिन महिलाओं को बहन, बेटी और बहू के रूप में बैठाकर कमान अपने हाथों में रखने के मसूबे बना रहा है, कुछ समय बाद यही महिलायें खुद कमान संभाल लेंगी और फिर वे उन महिलाओं केलिए काम करेंगी, जिन्होंने उन्हें इसलिए चुना है,क्योंकि वे महिला हैं और उनकी समस्याओं को समझती है।"[43] मंजरी भी ऐसी एक नारी है वह पार्वती और उनके बच्चे केलिए काम करती है। मृणालजी ने अपने उपन्यासों के द्वारा ग्रामीण औरतों की ज़िन्दगी को लेकर आज की आधुनिक नारी का भी यथार्थ चित्र हमारे सामने प्रस्तुत

किया है। उनके उपन्यासों का सामाजिक पक्ष भी बहुत प्रबल है। मृणालजी द्वारा तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति को पाठकों के सामने ज्वलंत रूप में प्रस्तुत करने का कार्य अत्यत सराहनीय लगता है।

आज की स्त्री मानती है कि विवाह संस्था अपनी आंतरिक संरचना की दृष्टि से स्त्री उत्पीड़क है, वह स्त्री को स्वतंत्र अस्मिता नहीं देती है। वह विवाह को प्रेम का रूप नहीं स्त्री दमन का उपकरण मानती है। वहाँ उसे पति के इच्छ्ानुसार काम करना पडता है। स्त्री को अपनी अस्मिता को बनाने या बचाने के उपक्रम में आजीवन अकेलेपन भोगना पडता है। ऐसा इसलिए होता है कि पुरुष की मानसिकता में कोई बदलाव अभी भी नहीं आया है। रजंनी के माध्यम से लेखिका ने आज के नारी का इस प्रकार की भावना व्यक्त किया है।

3.3. राजनीतिक पहलू:-

भारतवर्ष में आज प्रभुता का सबसे प्रभावशाली रूप राजनीति से जुडा हुआ है। राजनीतिज्ञों एवं नेताओं की प्रतिष्ठा एवं सुविधा ने लोगों को इस तरह प्रभावित किया है कि अधिकतर लोग राजनीति की ओर आकर्षित होते हैं। वर्तमान युग की राजनीति जोड़-तोड़ पर आधारित है। विश्व में प्रजातंत्रात्मक प्रणाली वाला सबसे बडा देश भारत ही है। राजनीति के साथ जनसामान्य का जीवन इस प्रकार जुड गया है कि उससे अलग होकर लोग अपने जीवन का कोई निर्णय नहीं ले सकते हैं। आज यही प्रजातांत्रिक मूल्य प्रजा केलिए अभिशाप बन गया है। राजनीतिक मूल्यों में आये परिवर्तन ने सामान्य व्यक्ति के जीवन की विसंगतियों को बढ़ा दिया है।

इस युग में धर्म, विज्ञान, शिक्षा तथा संस्कृति का विकास

राजनीतिक गतिविधियों के अनुरूप ही होने लगा है। इसलिए उपन्यासों में राजनीति का उल्लेख अवश्य मिलता है। साहित्यकार केलिए सामाजिक, आर्थिक परिवेश के साथ राजनीतिक परिवेश का ज्ञान भी अवश्य होना चाहिए। साहित्य और राजनीति के बीच का संबन्ध भी अत्यंत गहरा है। राजनीति आज जीवन के हर पहलू पर अपना अधिकार जमाए बैठी है। आज़ादी मिलने के बाद संपूर्ण भारतीय जनमानस में एक नयी चेतना, एक नये उत्साह की लहर दिखाई पडता है।

नये राष्ट्र में कई प्रकार की समस्यायें भी देख सकते हैं। देश की बागडोर संभालने वाले नेता अपने दायित्वों से हटने लगे, राजसत्ता और जनसत्ता के बीच संबन्ध–सूत्र शिथिल होने लगे, राजसत्ता अब बहुत अधिक आत्मकेन्द्रीत हो गई थी तथा अब भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, स्वार्थपरता, कालाबाज़ारी, बीईमानी आदि राजनीति के प्रमुख तत्व बन गए है। ये तत्व भारतीय जनमानस के सपनों और आकाक्षाओं को पूरी तरह तबाह कर देते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे परिवेश में अनेक परिवर्तन हुए हैं। अन्धी और घिनौनी राजनीति का प्रभाव तत्कालीन साहित्यकारों पर पड़ता है। मृणालजी के उपन्यासों में भी इस प्रकार का राजनीतिक भाव देखने को मिलता है।

3.3.1. राजनीतिज्ञों द्वारा होने वाला शोषण:-

किसी भी देश की राजनीतिक व्यवस्था पूरे देश पर प्रभाव डाल सकती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय नेताओं के समक्ष ऐसा संविधान तैयार करने की आवश्यकता थी जिसमें सभी वर्गों की समस्यायें आ जायें।

भारतीय परंपरा भी समाप्त न हो और पश्चिमी संस्कृति और विचारधारा को भी छोड जाये। सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर ही भारतीय संविधान का निर्माण हुआ और उसकी लोकतांत्रिक रूप का धारण हुआ। भारतीय संविधान में स्त्री-पुरुष दोनों को सभी ज़ोरों में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक समान धरातल पर समान अधिकार मिले हैं।

भारत देश आज़ाद हुआ, परतंत्रता की बेडियाँ टूट गईं लेकिन आंतरिक रूप से भारत के लोग गुलाम ही बने रहे हैं। फर्क इतना हुआ है कि अंग्रेज़ी स्थान पर सत्ता भारतीयों के हाथ में आ गयी। इसी सत्ता रूपी कुर्सी केलिए ज़मींदार, गुण्डे, अमीर लोग एक प्रकार के बादशाह बनने लगे। आज भी देश में दो वर्ग हैं एक अमीर का दूसरा गरीबों का। इसमें गरीब गरीब रहे और उनके प्रतिनिधि अमीर अमीर । स्वतंत्रता के बाद इसमें कोई परिवर्तन नहीं आया है।

मृणालजी ने अपने उपन्यास 'रास्तों पर भटकते हुए' में आज की राजनीतिज्ञों का पोल खोलने का कार्य किया है। नेतागण देश के विकास करने केलिए चुनाव जीतकर ऊँचे ओहदे पर बैठ सकते हैं। उच्च पद मिलने से वे सब भूल जाते हैं। वे हमेशा अपनी भलाई केलिए पास रहनेवालों को मात्र सहायता देते हैं। मृणालजी ने इसमें मुख्यमंत्री और डॉक्टर की आपसी रिश्ते का एक प्रसंग अपने सामने प्रस्तुत करके नेता लोगों के कार्य-कलाप का आंकन किया है। "मुख्यमंत्री को जब होश आया था तो वे पन्द्रह मिनट तक डॉक्टर साहब का हाथ थाम कर निशब्द रोते रहे! उसके बाद वे लोकसभा चुनाव

जीतकर केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में शामिल हुए पर दर्द रिश्ता बना रहा! उनके गृहराज्य में सौ एकड ज़मीन में धरम-भाई यानि मेरे पति ने कालांतर में एक खेल पार्क बनवाया, जहाँ मंत्रीजी के काले धन की सुरसुरी पाताल फोडकर बाहर आने को अकबका रही थी"।[44] अमीरों के साथ राजनीतिज्ञों का व्यवहार इसमें प्रस्तुत किया गया है। देश की प्रगति केलिए प्रयोग करने वाले धन का उपयोग ये लोग इस प्रकार विनियोग करते हैं। इस प्रकार करने से अमीर लोग और भी अमीर बनते हैं और गरीब लोग और गरीब। वर्तमान समाज में होनेवाले इस कार्य को लेखिका ने बारीकी से प्रस्तुत किया है।

आज के डेमोक्रसी में चलने वाली जातियता के बारे में भी उन्होंने स्पष्ट किया है। आज के राजनीतिक माहौल भी कुछ ऐसा ही होता है "बहुत जरूरी है कि मुकदमे की ज्युडिसियल सुनवायी से पेशतर असली कातिल की तैयशुदा तैर से जाँच हो। राजनीति और अफसरशाही दोनों में तो साले चुनाव से ट्रांसवर-पोस्टिंग तक में जातिवाद साला सर चढकर बोल रहा है। बाँमन बाँमने को सपोर्ट और रिपोर्ट करेंगे, औ दलित दलितै को! वर्ना छौ-छौ महीने फयल पर चूतड रख के बैठे रखेगे भले भंगदार हो जाये। ऐसे में मंत्री प्रशासन चलाये तो कैसे? ओ ऊ अपोजिशनवाला सरओ सरोज यादव असम्बेली में कह दिया,कि अगर मिनिस्टर और अफसरों के बीच संवादै नहीं हो पा रहा, तो मिनिस्टर को मिनिस्टरी में बने रहने का हक नहीं! अरे कौन नहीं जानता था कि सरऊ जब खुद सत्ता में था तो चपरासी से लेकर सेकेट्री तक सबकी जात-गोत पहले अपनी बिरादरी से मिलान के आपइंटमें करता रहा। ये हद है! डमोक्रेसी है सो सब सहना पड़ता है!"[45]

वर्तमान राजनीतिक माहौल इस प्रकार का है। आम जनता को सब कुछ सहना पडता है। एक ओर प्रशासन व्यवस्था में आनेवाली ग़डबडियों को भी उसे सहना पडता है। इससे मुक्त नहीं रह सकता है। इस उपन्यास की नायिका मंजरी बंटी और उसकी माँ पार्वती की मृत्यु की असलियत जानने केलिए भटकने वाली औरत है। इनकी मृत्यु के पीछे राजनीतिज्ञों का हाथ भी अवश्य होता है। मंजरी खोज करती हुई एक राजनैतिक नेता के पास आती है। वह मंजरी से कहता हैं "इस वक्त राजनैतिक माहौल ऐसा ही बेटी, की इन सब छोटे-मोटे आक्षेपों का हम जो है सो प्रतिवाद नहीं करेगे। उन्होंने गला साफ किया फिर कुछ सेकेंड चुप रहे, पर आप जो पूछेगे हम उसका इस्पष्टता से जवाब अबस्त देंगे, भले ही उसका खामियाजा हमें कुच्छे क्यों न भुगतना पडे।"[46] सत्य जानते हुए भी कुछ कहने केलिए वह तैयार नहीं होता है। समाज में घटित अन्याय के विरूद्ध वाद-विवाद करने की मानसिकता उसमें नहीं है। अपने कुर्सी को स्वस्थ रखने रखने केलिए कुछ भी वे लोग कर सकते हैं। वे कभी भी जनता की भलाई नहीं देखते,सुख-सुविधापूर्ण ज़िन्दगी जीना चाहते है।

राजनीतिक नेताओं के बीच भी हमेशा आपसी स्पर्धा देखने को मिलता है। एक ओर देखे तो यह स्पर्धा जनता को फंसाने का तंत्र जैसा लगती है। कभी-कभी यह दोनों मिलकर शासन चलाते हैं और कभी-कभी स्वार्थता वश एक दूसरे पर कीचड फेकते है। नेता लोगों के बीच कई तंत्र होते हैं। ये अपने ऊपर आरोपित कलंक को जल्द ही दूर कर सकते हैं। एक सांसद का वक्तव्य इस प्रकार है "हम सच कहते हैं आपसे रामजी की कसम ले के, कि ई

पोस्ट पर बने रहने के ऊपर पार्टीजनों का इतना प्रेसर न होता, तो हम ई सब छोड़ के अपने गाँव वापस जाके जनता-जनार्दन की सेवा करते।"[47]

गरीब लोगों को न्याय मिलने केलिए सबूतों की भी आवश्यकता पड़ती है। हमेशा उन्हें ऊपरवालों से अत्याचार सहने पड़ते हैं। बंटी और उसकी माँ पार्वती की मृत्यु के पीछे राजनीतिज्ञों का ही हाथ है॥ फिर भी सबूत न मिलने के कारण न्याय नहीं मिलता है। राजनीतिक दलों को अपने लोग ही मुख्य हैं साधारण जनता की परवाह वे कभी नहीं करते हैं। सबूतों की कमी के कारण उन पर लगाये कलंक को पैसे की ओड में दूर कर सकते हैं। "पर सबूत ही नहीं है, तो अपराध कैसा? अरे मौत तो सबकी एक न एक दिन होता ही है। कोई बीमारी से मरेगा, कोई अपघात से! पार्टी हाईकमान के प्रवक्ता ने कहा।"[48] राजनैतिक नेताओं की असलियत इस उपन्यास में व्यक्त हुई है।

3.3.2. डाक्टरों या राजनीतिज्ञों द्वारा की जानेवाली अमानवीयता:-

आज हर क्षेत्र में राजनीति का बहुत असर है। अमीर लोगों की दोस्ती अमीर लोगों से ही होती है। समाज सेवक मानने वाले डॉक्टर लोग भी राजनीतिज्ञों के साथ मिलकर शोषण करना शुरू करते हैं। आज की सामाजिक व्यवस्था इस प्रकार हो गयी है। डॉक्टर हमेशा अपने बातों से मरीजों को फँसाता है चुनाव में वोट मिलने केलिए नेता लोग भी गरीबों से मीठी बात बोलती है और कई प्रकार के सहायता करने का वादा भी प्रस्तुत करते हैं। मृणालजी ने अपने उपन्यास 'रास्तों पर भटकते हुए' में डॉक्टर लोगों की मानसिकता को व्यक्त किया है। मंजरी का ससुर डॉक्टर है। वह करनी और

कथनी में बहुत अंतर दिखानेवाला आदमी भी है। डाक्टर का कहना है कि "डॉक्टर की दृष्टि में बच्चों का शरीर ईश्वर की सुन्दरतम और सबसे अछूती कृति है। बच्चों की सर्जरी करना ऐसा होता है, जैसे मक्खन में छुरी चलाना। यह कितनी शर्म की बात है कि बडे होने पर ईश्वर की इसी रचना को बिना नियंत्रण खाने-पीने के द्वारा हम गन्दा बीमार बना देते हैं।"[49] एक ओर गरीब लोग इस प्रकार के भाषण में मुग्ध हो जाते हैं।

डॉक्टर अंगप्रत्यारोपण का काम खूब करने वाला आदमी है। वह गरीब बच्चों को इसके लिए चुनता है। डॉक्टर का यथार्थ काम है "एक गरीब बच्चे से उसका अतिरिक्त गुर्दा या त्वचा का टुकडा ले लेना या उसकी हड्डी से कुछ सी.सी मज्जा खीच लेना, और उसके परिवार को बदले में भरपूर मुआवजा दिलावा देना कितने जो पुण्य का काम है! हमारे देश में पैसे वाले अमीर लोग अपने शरीर को ज़्यादा खाकर तबाह कर लेते हैं, तो बिना पैसे वाले लोग भूख और कुपोषण से सुखा कर! तो जिसके पास जो अतिरिक्त है, उसे एक से दूसरे को देना-लेना, यह तो जीवजगत में समता कायम करना हुआ! क्या कहते हैं उसे आज के राजनेता? हाँ हाँ सामाजिक न्याय!" ।[50]

डॉक्टर के मतानुसार वे सामाजिक पुण्य का काम कर रहे हैं। गरीब बच्चों की माँ को कुछ पैसे देकर पहले अपने वश में लेता है फिर बच्चों पर शोषण करता है। यह कार्य उच्च वर्ग के लोगों केलिए करते हैं। डॉक्टर के पास आने वाले अधिकतर लोग राजनीतिज्ञ ही हैं। इस प्रकार वे जल्दी ही धनवान बन जाते है। वर्तमान समाज में डॉक्टर लोग भी शोषण करने लगे है।

3.3.3. पत्रकारिता के क्षेत्र में होने वाला भ्रष्टाचार:-

वर्तमान समय में हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार व्याप्त हो गया है। पत्रकार भी एक प्रकार समाज सेवक का काम करने वाले ही हैं। आज यह स्थिति नहीं है। ऊपर वालों के इच्छानुसार वे समाचार छापते हैं। देश के शासक दल के इच्छानुसार ही समाचार छापते हैं। मृणालजी ने स्वंय एक पत्रकार होने के कारण उस क्षेत्र में होने वाले अत्याचार का चित्रण बखूबी से किया है। 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में पत्रकारिता के क्षेत्र में व्याप्त अत्याचारों का आंकन मिलता है। इस उपन्यास की नायिका पत्रकार है। अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व के कारण वह नौकरी छोड देती है। उसके इलाके में एक गरीब बच्चे और उसकी माँ की मृत्यु होती है। मृत्यु के बारे में खबर किसी भी समाचार पत्र में नहीं मिलती है। मीडिया में समाचार सिर्फ राजनीतिज्ञों के निर्देश के अनुसार ही छपते थे।

मंजरी मृत्यु के कारण जानने केलिए उत्सुक नारी है। बंटी की मृत्यु का खबर समाचार पत्रों में वह देख नहीं पाती। इससे भी उसकी शंका बढ़ती जाती है। वह अपने पत्रकार मित्र द्वारा सत्य की खोज करने केलिए निकलती है। पत्रकार की ज़िन्दगी मंजरी ने भी भोगा है। पत्रकार को हमेशा अपने ऊपर वालों के चाहत के अनुसार ही काम करना पड़ता है। इससे अपने मौलिक व्यक्तित्व का हनन होता है।

पत्रकारों की स्थिति प्रस्तुत वक्तव्य से स्पष्ट होता है कि "हम पत्रकारों की जात बहुत बातून है। दफ्तर में बोलने की जगह चिल्लाना, पत्रकार क्लब से लेकर लिफ्ट-चढ़ते उतरते तक स्फीतिमय अफवाहों-बातों को लेकर दिन-

रात नाटकीय हल्ला-गुल्ला, यह हमारे दैनिक जीवन का साँस लेने जैसे सहज अंग होता है।"[51] बंटी की मृत्यु की सच्ची खबर मंजरी जान सकती है। पत्रकारिता के क्षेत्र को भी राजनीतिज्ञों ने खरीदा था। इसलिए सही खबर पत्रों के माध्यम से नहीं छपता है।

3.3.4. पुलिस कर्मचारियों का व्यवहार:-

मृणालजी ने अपने उपन्यासों में पुलिस कर्मचारियों के द्वारा होनेवाले अत्याचारों का ब्योरा प्रस्तुत किया है। समाज में पुलिस कर्मचारियों को भी ऊँचा स्थान प्राप्त है। जनता उसे आदर करती है। फिर भी उसके व्यवहार में भी बदलाव हम देख सकते हैं। 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में एक पुलिस कर्मचारी का कथन इस प्रकार हैं कि:-" आजकल की पढ़ी-लिखी माँएँ बच्चों की देख भाल ठीक से करती नहीं, बच्चे इधर-उधर भटक जाते हैं तो सब 'पोलिस' को बेल्म करते हैं। उसके स्वर से साफ झलकता था कि वह उनमें था जो माँओं केलिए अशिक्षा और घर की चहारदीवारी में एक बन्दिनी का स्टेटस अनिवार्य मानते हैं।"[52] पुलिस पहले मंजरी को समझ नहीं सकती है, वह भी एक पत्रकार है।

बंटी और उसकी माँ की मृत्यु के बारे में शिकायत करने केलिए मंजरी पुलिस थाने गयी थी। धन हाथ में लेकर ही धानेदार अंत में रिपोर्ट दर्ज करता है। 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास में गरीब लोगों के साथ पुलिस कर्मचारियों के व्यवहार का चित्रदेखने को मिलता है। अत्याचारी के नाम से लोगों को पकडकर पीडित करते थे। पुलिस कर्मचारियों के अत्याचार भुगतने पडे ग्रामीण लोगों की ज़िन्दगी को भी मृणालजी ने उकेरा है। प्रस्तुत प्रसंग

इसका नमूना प्रस्तुत करता है "हर एक दो महीने में दो-चार दिन किसी-न-किसी बात पर जेल ले जाया जाने ही वाला हुआ पदम। कहाँ से इस बखत आगे आते, जेठ-जिठाने ने हाथ ही जैसा खेंच लिया ठहरा। पदम को,उसके संगी-साथियों को लाठी में कपडा बाँध कर मारने वाले हुए थानेदार सिपाही। तमाम भीतर से गुम्म चोटें ही लगी रहने वाली हुई। तालघर रजुआ के दादाजी की गरदन जन्म-भर इसी मार के करन तो टेढ़ी ही रही।"[53] पुलिस कर्मचारियों के क्रूर व्यवहार का शिकार हमेशा निम्न तबके की लोग ही होते हैं। उच्च पद पर बैठनेवालों को खुश रखने केलिए गरीब लोगों पर कृत्य का आरोप करके उसे शोषण का शिकार बनाते हैं। असली जुर्म करनेवालों को वे सजा नहीं देते हैं हमेशा निरपराधी को भी सज़ा भुगतनी पडी है। इस प्रकार की खबर हम अक्सर सुनने को मिलती है। राजनीतिज्ञों का हाथ भी इसके पीछे जरूर होता है।

3.3.5. भारतीय राजनीति के समूचे परिदृश्य:-

मृणालजी ने अपने उपन्यास 'पटरंगपुर पुराण' में भारत का समूचे राजनीतिक परिदृश्य को हमारे सामने प्रस्तुत करने की कोशिश की है। त्रेतायुग से लेकर अब तक देश में आने वाले परिवर्तन का ब्योरा लेखिका प्रस्तुत करती है। राजाओं के शासन काल में ब्राह्मणों को ऊँचा स्थान मिलता था। 'यथा राजा तथा प्रजा' की राजनीतिक व्यवस्था में धीरे-धीरे बदलाव देखने को मिलता है।

पुराने ज़माने के राजनीति आज से बिलकुल अलग थी। भारत में पहले ब्राह्मण मेधावी समाज हम देख सकते हैं। ब्राह्मणों का कौशल और पंच फैसले

की उनकी क्षमता पर टिक रहता था, लेकिन जब वे परंपरा या किसी शास्त्र की अधिकारपूर्वक पुनर्व्याख्या करते तो उसे भी पूरी मान्यता मिलती थी। हिन्दु समाज को टिकाये रखने में ब्राह्मणों की भी अहम भूमिका रही थी।

मुसलमान के आगमन के दौरान भी देश में सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था में बदलाव आया। बाह्मण मेधावी समाज का पतन हुआ था। शासन की सुविधा केलिए उनके द्वारा कई योजनायें बनायी गयी थीं। जनता की स्थिति भी बिलकुल बदल गयी थी। कई प्रकार की कठिनाइयाँ उसे झेलनी पडीं। मुसलमान शासन भारतीय समाज में बहुत गहराई तक अपनी पैठ नहीं बना पाया। उसके बाद अंग्रेज़ों ने भारत में अपना अधिपत्य स्थापित किया। अंग्रेज़ों के आगमन से भारत में कई प्रकार का बदलाव आने लगे। अपने शासन में सुविधा बढाने केलिए उन्होंने अंग्रेज़ी शिक्षा को बढ़वा दिया था। अपने आपको बदल डालने का कार्य भी होता था। कई तरह के शासन तंत्र अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित किया गया। कई सालों के बाद भारत स्वतंत्र हुआ था। शासन व्यवस्था भी बदल गयी है। पहले अंग्रेज़ों द्वारा शासित राज्य अब नेता लोग शासन कार्य संभालते हैं। पुराने ज़माने से होकर अब तक की समूचे राजनैतिक परिदृश्य लेखिका हमारे सामने ग्यारह पीढियों की ज़िन्दगी के आलोक में प्रस्तुत करने का कार्य किया है।

3.4. सांस्कृतिक पहलू:-

भारत अत्यंत प्राचीन देश है। भारत की संस्कृति भी बहुत प्राचीन है। संस्कृति मनुष्य की निजी उपलब्धि है। इसलिए मानव को संस्कृति-निर्माता

प्राणी कहा जाता है। संस्कृति की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है कि “संस्कृति का संबन्ध मानव की अंतर्मुखी दशा से है। जिस कर्म व भाव से हमारे संस्कार सुन्दर बनें, जिससे ‘कृति’ का सौन्दर्य तथा दिव्यता अधिक स्पष्ट से प्रकट हो सके, वही है संस्कृति। जो चेतना हमें ऊध्वर्रोहित करती है वही है संस्कृति का वैशिष्ट्य।“[54]

हर व्यक्ति की मानसिक संरचना भिन्न-भिन्न होती है। मानसिक संरचना में जो भी कलुष और पशुत्व है, उसे दूर करने के निमित्त किए गए हमारे प्रयत्न ही हमें संस्कारवान् बनाते हैं, इन संस्कारों से भी सांस्कृतिक चेतना पैदा होती है। यह चेतना भी हमारी संस्कृति ही है।

3.4.1. भारतीय संस्कृति के विविध परिदृश्य:-

मृणालजी ने अपने उपन्यासों में भारतीय संस्कृति का चित्रण भी किया है। ‘पटरंगपुर पुराण’ उपन्यास के ज़रिए लेखिका भारतीय गाँव की संस्कृति का परिदृश्य प्रस्तुत करती है। भारतीय संस्कृति मूल्यों पर अधिष्ठत है। पुराण काल से लेकर अब तक भारतीय संस्कृति में बदलाव हम देख सकते है। ब्राह्मणवाद के समय में देश में जातिवाद की संस्कृति चल रही थी। तब लोग तंत्र, मंत्र आदि विद्या का प्रयोग करते थे। पौराणिक काल के ये ज्ञान वर्धक चीज़ें माने जाते थे।

भारत जैसे विशाल देश में अलग-अलग संस्कृतियों का एक भण्डार ही विद्यमान है। विदेशों का आक्रमण भारत ने कई बार झेला है। इस प्रकार बाहर से आये हुए लोगों से भी कई तरह की देन हमें मिली है। अंग्रेज़ों

के आगमन से अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रचार होता था। भारतीयों ने ये सब ग्रहण किये हैं। अतिथि लोगों को स्वीकार करना भारतीय संस्कृति का एक महान गुण ही है। 'पटरंरपुर पुराण' में गाँव की बदलती संस्कृति को दिखाया है। अंचल की संस्कृति बिलकुल भिन्नहै।

गाँव के लोग अपने पुराने विश्वासों के अनुसार जीने वाले लोग है। उस समय आपसी रिश्तों में भी दृढता देख सकते थे। एक दूसरे से झगडा करते थे तो भी रिश्तों में कोई टूटन नहीं था। पुरानी रूढियों को वे बिलकुल बदलना नहीं चाहते है। मूल्यों पर अधिष्ठित ज़िन्दगी अच्छी है। इन लोगों के बीच कई प्रकार के अंधविश्वासों का भी बोल-बाला था। गाँववालों के बीच धीरे-धीरे ही बदलाव ला सकता है। पूर्ण रूप से बदलने केलिए वे तैयार नहीं होते हैं। पटरंरपुर की स्थिति भी ऐसी है। होली जैसे त्योहार वे सभी मनाते है। गरीब अमीर भेदभाव की भावना भी कम थी। सरकारी नीतियों और विकास संबन्धी कार्यक्रमों के कारण पहाडी जीवन बहुत नहीं तो कुछ परिष्कृत एवं समृद्ध हो गया था।

'पटरंगपुर गाँव' को लेखिका वास्तव में भारतीय गाँव का ही प्रतीक मानती है। उस समय के पहाडी जीवन, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक वा सांस्कृतिक बदलाव और वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालने का प्रयास लेखिका ने किया है। ग्यारह पीढियों की कथा के माध्यम से वर्तमान समय तक की सामाजिक बदलाव को इस उपन्यास के द्वारा हम समझ सकते हैं।

3.4.2. पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव:-

भारतीय संस्कृति में आज पाश्चात्य संस्कृति का बढ़ता प्रभाव देख सकते हैं। भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता भी यही है कि ये अन्य संस्कृतियों को भी असानी से ग्रहण कर सकती है। अंग्रेज़ों के आगमन से लेकर भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रचार प्रसार हम देख सकते हैं। वर्तमान संदर्भ में देखें तो पाश्चात्य संस्कृति के बुरे पक्ष ही ज़्यादा उभर कर आये हैं। भारतीय संभ्यता और संस्कृति के गुण गाने वाले भी पाश्चात्य संस्कृति से जल्दी प्रभावित हो जाते है।'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास में भी इसका एक उदाहरण मिलता है।

अंग्रेज़ों के आगमन से ज़्यादातर लोगों ने अंगेज़ी भाषा से प्रभावित होकर अंग्रेज़ी भाषा सीखी है और बच्चे को भी अंग्रेज़ी माध्यम से ही पूरी पढ़ाई करायी है। इसलिए युवा पीढ़ी देशी भाषा से अपरिचित होते है। अब भी भारतीय व्यक्ति पाश्चात्य सभ्यता और अंग्रेज़ी का मुखौटा लगाये आडम्बर में व्यस्त रहते है। इस प्रकार का कार्य-कलाप देश की उन्नति का घातक भी बन जाता है।'विरूद्ध' उपन्यास में भी इस प्रकार का प्रसंग मिलता है। पाश्चात्य ढंग से पार्टी में चलनेवाले लोगों को भी हम देख सकते हैं। बाज़ारीकरण की समस्या भी वर्तमान समाज में देख सकते हैं। अपनी स्वार्थता की पूर्ति केलिए और धन जुटाने केलिए आज लोग सब कुछ कर सकते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण मानवीय मूल्यों का ह्रास भी समाज में मौजूद हुआ है।

विदेश से पढाई करके देश में आनेवाले डॉक्टर का अमानवीय कृत्य का अंकन 'रास्ते पर भटकते हुए' उपन्यास में हुआ है। छोटे से बच्चे को फँसाकर उसके अंग लेकर दूसरे लोगों पर आरोपित करके जीवन प्रधान करते हैं। बच्चों पर हो रहे अमानवीय व्यवहार का चित्रण करके सामाजिक मूल्यों की ह्रास की ओर उपन्यास में इशारा किया गया है। भारतीय नारी भी आज सजग हो गयी है। वह शिक्षा प्राप्त करके अपने आपको अपने पैरों पर खडा कर सकती है। पाश्चात्य स्स्कृति का प्रभाव भारतीय नारियों पर भी पड़ा है। आज वह अपनी अस्मिता की खोज में भटकने लगी है। पुराने-ज़माने में स्त्रियों को शिक्षा से दूर रखा जाता था। आज इस परिस्थिति में भी बदलाव आया है। आज वह हर क्षेत्र में पुरुष के समान कन्धे से कन्धे मिलाकर आगे बढ सकती है। 'विरुद्ध' उपन्यास की नायिका रजनी उच्च शिक्षा प्राप्त कर्मचारी महिला है। वह हमेशा अपने अस्तित्व की खोज में रहनेवाली नारी है। रजनी इस यह स्वतंत्र चितंन को कोई समझ नहीं सकता । इसलिए उपन्यास के अंत में वे विरुद्ध होकर चलती हैं। एक ओर पाश्चात्य संस्कृति से कुछ हासिल कर सकते हैं दूसरी ओर बढते पाश्चात्य संस्कृति के कारण मानवीयता भी नष्ट हो जाती है ।बढ़ती पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव हमेशा सच्चे संस्कृति का विघटनकारी घटक बन जाता है।

3.5. आर्थिक पहलुयें:-

वर्तमान सामाजिक परिदृश्य धन पर अधिष्ठित हो गया है। पुराने-ज़माने से ही अर्थ केलिए हमेशा झगड़ा चलता रहा था। आज का समाज भी

इससे बिलकुल अलग नहीं है। अर्थ के पीछे भागते-भागते मानवीय मूल्यों में च्यूति आ गयी है। भारतीय गाँव की आर्थिक परिस्थिति हम 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास में देख सकते हैं। गाँव के लोग गरीबी के कारण बहुत अधिक कष्ट झेलते है। पहले उसे शिक्षा से वंचित रखते थे। सामाजिक बदलाव के कारण शिक्षा का प्रसार हुआ है। ग्रामीण लोगों के बीच आपसी संबन्ध सुद्रृढ होने के कारण आपस में सहायता प्राप्त कर सकते थे। इस उपन्यास में आमा की बेटी की बेटियाँ दूर गाँव में रहते वक्त भी उसे पैसे भेजते थे। ऊँचे खान-दानों में अर्थ की कमी नहीं थी। निम्न वर्ग के लोग ही हमेशा निर्धनता के कारण शोषण का शिकार बन जाते हैं। गरीबी की समस्या 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास में भी हम देख सकते हैं। इसमें पार्वती इसके प्रतिनिधि है। शराबी पति की मृत्यु के बाद उसे एक दलाल द्वारा दिल्ली की बस्ती में ले जाता है। वहाँ गरीबी के कारण वह सब प्रकार की शोषण चुप-चाप सहती है। गरीबी से वह मुक्त नहीं हो पाती है।

अंत में उसे धन केलिए अपने बच्चे तक बेचना पडता है। गरीबी की वजह से वह वेश्यावृत्ति अपनाती है। कई प्रकार की शोषण सहते-सहते अंत में उसकी भी अकालमृत्यु होती है। अमीर और गरीब लोगों के बीच का अंतर इसमें स्पष्ट रूप से झलकता है। इसमें डॉक्टर अमीर वर्ग का प्रतिनिधि ही है। वह धन लेकर सब कुछ हासिल करना चाहते हैं। डॉक्टर अपने पुत्र की इच्छा के विरुद्ध शादी तय करता है और शादी भी हो जाती है। पुत्र पत्नी को छोडकर विदेश जाता है। डॉक्टर पिता धन और फ्लाट देकर बहु को ही स्वस्थ रखना चाहता है। अंत में इसके इच्छानुसार तलाक कर देता है। डॉक्टर गरीब

बच्चों को भी इस प्रकार धन देकर खरीदने वाला है। बस्ती में रहनेवाले छोटे बच्चों को चूस लेता हैं। कुछ पैसे गरीब लोगों को देकर वह उन बच्चों के गुर्दा से त्वचा तक के अंग निकाल लेता है। उसके पास इस व्यवहार करने के पीछे कई कारण भी होते हैं। उच्च वर्ग के लोगों को बीमारी से बचाने केलिए ये लोग इस प्रकार का अमानवीय व्यवहार करते रहते हैं।

वर्तमान समाज में इस प्रकार गरीबी की शिकार बनने वाले कई लोग हमारे सामने आ जाते हैं। धन की लोलुपता ने मानव को अंन्धा कर दिया है। वह सिर्फ अपने आपको खुश रखना चाहता है। मानवीय संवेदनायें धन के सामने चूर हो गयी हैं। सामाजिक व्यवस्था भी इस प्रकार बन गयी है कि अमीर लोग हमेशा अमीर होते रहते हैं और गरीब लोग गरीब। आर्थिक व्यवस्था भी ऊँचे लोगों के साथ है। धन का अभाव गरीब को हमेशा शोषण का शिकार बनने केलिए विवश करते है। 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास की पार्वती जैसी अनेक माँऐं इस प्रकार के शोषण की शिकार बनती हैं। लेखिका प्रस्तुत उपन्यास के द्वारा वर्तमान समाज के यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। 'विरुद्ध' उपन्यास की बुआ भी गरीबी की शिकार है। आर्थिक कमी के कारण बुआ लडकियों को पढाना नहीं चाहती है। इस उपन्यास की नायिका आर्थिक दृष्टि से संपन्न युवती है। फिर भी वह हमेशा अपने आपको अकेला रखना चाहती है। वह अपने स्वतंत्र अस्मिता की खोज करने वाली नारी है। 'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास की नायिका मंजरी इससे विरुद्ध स्वभाव वाली है। उसे कई प्रकार के शोषण सहना पडता है। फिर भी वह हारना नहीं चाहती है। वह बंटी और उसकी माँ पार्वती के साथ देने वाली स्वभिमानी

नारी है। मृणालजी ने अपने उपन्यासों में अर्थ से होने वाले सारे बदलाव को बखूबी से दर्शाया है।

निष्कर्ष:-

मृणालजी ने ऐतिसासिक परिवेश को साथ देकर अपने उपन्यासों में वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश का अंकन किया है। उपन्यासों की कथावस्तु अत्यंत गहरा चिंतन कर देने वाली ही है। संख्या के रूप में उपन्यास कम होते हुए भी विषय की गहनता उसे अन्य महिला उपन्यासकारों से अलग रखती है। अपने उपन्यासों में केन्द्र पात्र के रूप में नारी है तो भी तत्कालीन समाज में घटित सभी घटनाओं का विश्लेषण इन उपन्यासों में दर्शानीय हैं। संक्षेप में कहा जाये तो मृणालजी ने अपने उपन्यासों के द्वारा पाठकों को सच्चे रूप में आज के समाज में सजग रहने का आदेश दिया है। वर्तमान समाज का भी जीता जागता चित्र उन्होंने बखूबी से चित्रित किया है इसलिए उपन्यासकार के रूप में मृणालजी का स्थान भी उल्लेखनीय ही है।

संदर्भ

[1] गोविन्द चन्द्र पाण्डे:-भारतीय समाज : तात्विक और ऐतिहासिक विवेचन:-पृ.11

2 नीहार गीते:- स्वतंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों में यथार्थ के विभिन्न रूप:-पृ.113

3 मधुर उप्रेती:- हिन्दी कहानी:-आठवाँ दशक :-पृ.106

4 मृणाल पाण्डे:- विरुद्ध:-पृ.9

5 मृणाल पाण्डे:- रास्तों पर भटकते हुए:-पृ.44

6 वहीं :- पृ.50

7 वहीं:-पृ.51

8 वहीं:-पृ.51

9 वहीं:-पृ.49

10.वहीं:-पृ.52

11.मृणाल पाण्डे:-विरुद्ध:-पृ.127

12 वही:-पृ.127

13 वहीं:-पृ.128

14.वहीं-पृ.39

15.मृणाल पाण्डे:- पटरंगपुर पुराण:- पृ.9

16 मृणाल पाण्डे:-रास्तों पर भटकते हुए:- पृ.17

17 म्रुणाल पाण्डॆ:- विरुद्ध्:-पृ.36

18 वहीं:-पृ.36

19 .म्रुणाल पाण्डे:-विरुद्ध:-पृ.39

20 मृणाल पाण्डे:-पटरंगपुर पुराण:- पृ.

21.वहीं:-पृ.45

22 वहीं:-पृ.81

23 मृणाल पाण्डे:- रास्तों पर भटकते हुए:-पृ.77

24 मृणाल पाण्डे:- पटरंगपुर पुराण:- :-पृ.9

25 वहीं:- पृ.9

26 वहीं:-प.9

27 वहीं:-पृ.17

28 वहीं-पृ.24

29 वही:-पृ.47

30 वहीं:-पृ.47

31 वहीं:पृ.50

32 वहीं:-पृ.56

33 वहीं:-पृ.58

34 वहीं:-पृ.58

35 वहीं:- पृ.59

36 वहीं:- पृ.75

37.वहीं:-पृ.95

38.वहीं:-पृ.95

39.वहीं:- पृ.103

40.वहीं:- पृ.16

41. वहीं:- पृ.43

42.जॉन स्टुअर्ट :- द स्ब्जेक्शन ऑफ विमेन :-पृ.25

43.मृणाल पाण्डे/क्षमा शर्मा(सं):- बन्द गलियों के विरुद्ध:-पृ.27

44.मृणाल पाण्डे:- रास्तों पर भटकते हुए:-पृ. 29

45.वहीं:-पृ.144

46.वहीं:-पृ.145

47.वहीं:-पृ..146

48.वहीं:-पृ.151

49.वहीं:-पृ.77

50.वहीं:-पृ.77-78

51.वहीं:-पृ.105

52.वहीं:-पृ.87

53.मृणाल पाण्डे:- पटरंगपुर पुराण:-पृ.108

54.नरेन्द्र मोहन:- भारतीय संस्कृति:-पृ.5

अध्याय चार

मृणाल पाण्डे का कहानी साहित्य

अध्याय चार

मृणाल पाण्डे का कहानी साहित्य

4.0.प्रस्तावना:-

नाटककार और उपन्यासकार के रूप में विख्यात मृणाल पाण्डे सशक्त समकालीन महिला कहानीकार भी हैं। उनकी कहानियों में नारी समस्याओं तथा नारी जीवन की जटिलताओं को देखने का नया दृष्टिकोण मिलता है। उनका मानना है कि नारी यदि शिक्षित हो और आत्मनिर्भर हो तभी वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो सकती है। तभी उसके अंतर आत्म-विश्वास और रूढ़िगत परंपरा का विरोध करने तथा जीवन को बदल देने की क्षमता पैदा हो सकती है। वे उन परंपरागत मूल्यों को बनाये रखना नहीं चाहती जो नारी के जीवन को दयनीय बना देते हैं। मृणालजी अपने युग परिवेश के बीच जी रही नारी के बेहत्तर जीवन की अपेक्षा उसे विशुद्ध भारतीय नारी के आदर्श रूप में दोहराना नहीं चाहती हैं। वे ऐसे पात्रों का निर्माण करती हैं जिनका व्यक्तित्व प्रेम, ममता, गृहस्थी से अधिक गहरी, विस्तृत परिभाषा माँगता है, जहाँ उसके स्वंय का 'होना' अहम है। लेखिका के अनुसार आत्मबोध की समस्या पुरुष की अपेक्षा नारी के समक्ष अधिक महत्वपूर्ण है, वह पुरुषसत्तात्मक समाज में अपने अधिकारों केलिए सघर्ष कर रही है।

4.1. आधुनिक हिन्दी महिला कहानीकारों का सामान्य परिचय:-

आधुनिक हिन्दी कहानी के सफर में महिला लेखन का योगदान

अत्यंत महत्वपूर्ण है। बंग महिला(राजेन्द्र बाला घोष) की 'दुलाईवाली' कहानी को हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी होने का श्रेय मिलता है। इस काल के अन्य लेखिकाओं में जानकी देवी, गौरादेवी, ठकुरानी शिवमोहिनी, सुशीला देवी, धनवती-देवी, श्रीमती मिश्र महिला आदि आती हैं। इन लेखिकाओं ने सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक' पौराणिक समस्याओं को उजागर करने वाली कहानियाँ लिखी हैं। उषादेवी मित्रा, कमला चौधरी और रजनी पणिकर ने कहानियों में सामाजिक समस्याओं के साथ मनोवैज्ञानिक पक्ष को भी लिया है। नारी की वेदना और पीडा को यथार्थवादी रूप में चित्रित करने में लेखिकाएँ सक्षम हुई हैं। 'सन्ध्या', 'पूर्वा', 'रात की रानी' और 'मेघमल्हार' उषादेवी मित्रा के प्रमुख कहानी संग्रह हैं। कमला चौधरी की कहानियों में मानवीय संवेदना और वेदना को गंभीरता से प्रस्तुत किया गया है। उनकी कहानियों में नारी अपने पराजय को स्वीकार नहीं करती है बल्कि जीवन के प्रति अटूट आस्था प्रकट करती है। 'उन्माद', 'प्रसादी कमण्डल', 'पिकनिक', 'यात्रा', आदि उनकी कहानी संग्रह हैं। रजनी पणिकर ने अपनी कहानियों में विविध सामाजिक समस्याओं को उजागर किया है। 'सिगरेट के टुकडे' शीर्षक से उनका एक कहानी संकलन निकला है।

श्रीमती सत्यवती मल्लिक ने अपनी कहानियों में समाज के शोषित वर्गों की संवेदना को अभिव्यक्त किया है। काश्मीर का प्राकृतिक चित्रण उनकी

कहानियों की प्रमुख विशेषता है। उनके चार कहानी संग्रह हैं- 'दो फूल', वैशाख की रात', 'दिन-रात', और 'नारी हृदय की साध'। कंचनलता सब्बरवाल की कहानियाँ भी प्रमुख हैं। 'भूख' और 'प्यासी धरती सूखे ताल' उनकी कहानी संकलन हैं। इनके अतिरिक्त इन्दुमति, हीरादेवी, चतुर्वेदी, लीला अवस्थी, रीता, शकुंतला देवी, शांति जोशी, इन्दिरा नूपुर, आदि लेखिकाओं ने भी कहानी साहित्य को अपना योगदान दिया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, लेखिकाओं का एक नया वर्ग उभर आया। उन्होंने समाज में फैली अराजकता, अस्थिरता, भ्रष्टाचार को अपने-अपने ढंग से व्यक्त किया है।" आज महिला कहानिकारों की दो पीढियाँ एक साथ कहानी सृजन में लगी हुई हैं। पहली पीढ़ी में वे लेखिकाएँ आती हैं जो नयी कहानी के दौर के आसपास लिखती आ रही है और दूसरी पीढ़ी की लेखिकाएँ तो आठवें दशक में लिखना आरंभ किया है। पहली पीढ़ी की लेखिकाओं में शशिप्रभा शास्त्री, शिवानी, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, ममता कालिया आदि उल्लेखनीय हैं। दूसरी पीढ़ी में दीप्ति खण्डेलवाल, मृणाल पाण्डेय, मृदुला गर्ग , चित्रा मुद्गल, राजी सेठ, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, प्रतिमा वर्मा, सुधा अरोडा, निरुपमा सेवती, सूर्यबाला, मेहरुन्निसा परवेज़, अचला नगर आदि लेखिकाओं के नाम गिनाए जा सकते हैं।"1

शशिप्रभा शास्त्री ने मुख्य रूप से बदले हुए जीवन-संदर्भ में स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण किया है। नारी मनोविज्ञान एंव नारी जीवन की समस्याओं का अध्ययन उन्होंने गहन रूप से किया है। शिक्षित मध्यवर्गीय परिवारों के दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों का चित्रण उनकी कहानियों की बड़ी विशेषता है। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं- 'धुली हुई शाम', 'एक टुकडा शान्तिरथ', 'पतझड' 'अनुत्तरित', 'दो कहानियों के बीच', 'उस दिन भी' और 'जोड बाकी'। शिवानी की कहानियों में जीवन के खुरदरे यथार्थ का चित्रण मिलता है। उन्होंने उच्च मध्यवर्ग को कहानी के केन्द्र में रखा है। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं- 'लाल हवेली', 'पुष्पहार', 'मेरी प्रिय कहानियाँ' 'शिवानी की श्रेष्ठ कहानियाँ', 'उपहार', 'रति-विलाप', 'स्वयंसिद्धा', 'करिएछिमा',' गैडा', 'चिरस्वयंवरा', 'विषकन्या', 'कैंजा', 'रथ्या', 'अपराधिनी', 'पूतोंवाली' आदि।

मन्नू भण्डारी की कहानियों में नारी-जीवन के विविध पक्षों का यथार्थ चित्रण हुआ है। अपने परिवेश के विविध अनुभवों, मानवीय पीडा को अकृत्रिम भाषा में उन्होंने स्पष्ट किया है। आपके कहानी संकलन हैं- 'मैं हार गई', 'यही सच है', 'एक प्लेट सैलाब', 'तीन निगाहों में एक तस्वीर', 'त्रिशंकु' 'मेरी प्रिय कहानियां' और 'आँखों देखा झूठ'। उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में देशी और विदेशी परिवेश में स्त्री-पुरुष संबन्धों का चित्रण प्रस्तुत

किया है। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं- 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल', 'फिर बसंत आया', एक कोई दूसरा', 'कितना बड़ा झूठ', और 'मेरी प्रिय कहानियाँ'।

ममता कालिया की कहानियों में भी नारी मनोविज्ञान, सामाजिक विसंगतियों का बोध और उनसे उबरने की बेचैनी जाहिर हुई है। उनके प्रमुख कहानी संकलन हैं- 'छुटकारा', 'सीट नं 6', 'एक अदद औरत', 'उसका यौवन', 'प्रतिदिन', 'जांच अभी ज़ारी हैं', 'चर्चित कहानियाँ' आदि। मृदुला गर्ग जी की कहानियों में आधुनिक जीवन के बदले माहौल में परंपरागत मूल्यों का विघटन, रिश्तों का खोखलापन एवं प्रेम और विवाह से संबन्धित समस्याओं का उल्लेख मिलता है। 'कितनी कैंदें', 'टुकडा-टुकडा आदमी', 'डेफोडिल जल रहे हैं', 'ग्लेशियर से', 'उर्फ सैम' आदि उनके कहानी संकलन हैं। अलका सरावगी जी ने कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में नये प्रयोग किया है। उनके प्रकाशित कहानी संग्रह हैं- 'कहानी की तलाश में' और 'दूसरी कहानी'।

समकालीन लेखिकाओं का रचना फलक पारिवारिक जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक परिप्रेक्ष्य को भी आधार बनाकर उन्होंने खूब लिखा है। इन कथा-लेखिकाओं में मृणाल पाण्डे जी का नाम भी उल्लेखनीय है। उनकी कहानियाँ नारी जीवन को केन्द्र में रखकर लिखी गयी हैं। उन्होंने मुख्यत: अल्मोडा क्षेत्र के पहाडी जन-जीवन का चित्रण किया है।

नारी स्वतंत्रता के प्रश्न को अनेक बिन्दुओं के माध्यम से उन्होंने उठाया है। पहाडी जीवन की आर्थिक तंगी, जडता, सघर्ष और उसके फलस्वरूप उत्पन्न समस्याओं का चित्रण भी किया है। नारी अस्मिता केलिए कलम से लड़ने वालों में मृणालजी का नाम अग्रणी है। उनके प्रमुख कहानी संकलनहैं:- 'दरम्यान(1977)','शब्दबेधी(1980)', 'एक नीच ट्रैजडी(1981)', 'एक स्त्री का विदागीत(1985)', 'चार दिन की जवानी तेरी(1995)', 'यानी कि एक बात थी(1990)', 'बचुली चौकिदारिन की कढ़ी (1990)' आदि।

मृणाल पाण्डे जी अपनी कहानियों में मौजूदा हालत के चित्रण करने में सक्षम हुई हैं। लेखिका होने के नाते अपनी कहानियों का केन्द्र बिन्दु नारी ही है फिर भी सभी सामाजिक पहलुओं पर भी उन्होंने समान रूप से प्रकाश डाला है। मृणालजी की कहानियों में विषय की विविधता हम देख सकते हैं। समाज की विसंगतियाँ और भारतीय संस्कृति में आये बदलाव को भी उन्होंने अपनी कहानियों में स्दर्शाया है। उनकी कहानियाँ पाठकों के सामने कई मुद्दों को प्रस्तुत करके पाठकों को सोचने केलिए विवश करती हैं। समकालीन समय के साथ निकट सरोकार रखने के कारण उनकी कहानियाँ अत्यंत सफल हुई हैं। स्त्री-विमर्श का तेवर उनकी कहानियों की खास पहचान है। प्रस्तुत अध्याय में मृणालजी की कहानियों के विश्लेषण का प्रयास है।

4.2. मृणाल पाण्डे की कहानियों में पारिवारिक जीवन की झांकियाँ:-

मृणाल पाण्डे ने अपनी कहानियों में पारिवारिक जीवन की विभिन्न झांकियों को प्रस्तुत किया है। इसकी चर्चा आगे की जाएगी।

4.2.1. पारिवारिक मूल्य:-

परिवार समाज की प्रारंभिक इकाई है। व्यक्ति जन्म से मृत्युपर्यंत अपने परिवार का सदस्य रहता है। परिवार के बिना समाज की कल्पना सर्वथा असंभव है। परिवार मानव समाज का सर्वव्यापी और विराट यथार्थ है। शब्दिक रूप से परिवार अंग्रेज़ी शब्द family का हिन्दी प्रतिशब्द है जो लैटिन शब्द famules से बना है। इसका अर्थ है 'सेवक'। इससे स्पष्ट होता है कि परिवार का तात्पर्य किसी भी ऐसे समूह से है जिसके सदस्य सेवा भाव से एक दूसरे के साथ रहते हैं।

परिवारिक या सामाजिक जीवन में मूल्यों का अत्यधिक महत्व होता है। मूल्य समाज के सदस्यों की आंतरिक भावना पर आधारित है। मानव मूल्य को व्याख्यायित करने केलिए डॉ जगदीश गुप्त का यह कथन उद्धरणीय है- "तत्वत: सभी मूल्य मानव मूल्य हैं चाहे वे नैतिक मूल्य हों, चाहे सौंन्दर्य परक मूल्य या कोई और। पर विशेष अर्थ में मानव मूल्यों का तात्पर्य उन मूल्यों से है, जो मानव के आंतरिक सहज स्वरूप के सबसे निकट प्रकट होते हैं तथा उसके संवेदनात्मक व्यक्तित्व से सबसे अधिक सीधे और गहन रूप से

सम्बद्ध हैं उनकी विशेषता इसी में है कि मानवीय संवेदनाओं की उनमें मुक्त स्वीकृति है। जीवन में उन मूल्यों की प्रतिष्ठा का अर्थ मानवता एवं मानवीयता की प्रतिष्ठा है। उसके बिना मानव अस्तित्व निरर्थक है।"[2]

आज की परिस्थितियाँ द्रुतगति से बदल रही हैं। व्यक्ति के नैतिक मूल्यों में परिवर्तन हो रहे हैं, आज मूल्यों में परिवर्तन उस दिशा में होने लगा है, जो मनुष्य को पतन और विकृतियों की ओर ले जाती है। इन बदलते मूल्यों का चित्रण कहानियों में हम देख सकते हैं। जीवन के विकास में संघटन और विघटन का क्रम निरंतर चलता है। वर्तमान परिस्थितियों में पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक मनोवैज्ञानिक कारणों से विघटन के तत्व अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट हो रहे हैं। कलाकार संवेदनशील होता है, संवेदनशील होने के कारण विघटन की तीव्र अनुभूति को वह अपने साहित्य में अभिव्यक्त करता है।

मृणाल पाण्डे जी की कहानियों में पारिवारिक जीवन के विविध पक्ष हमें देखने को मिलते हैं। रिश्तों से परिवार बँधा हुआ है। जब रिश्ते मूल्यों को लेकर चलते हैं, तो परिवार में सुख-शांति स्थापित होती है, अन्यथा परिवार विघटित हो जाता है। मृणालजी ने अपनी कहानियों में पति-पत्नी, पिता-संतान, माता-संतान, सास-बहू, देवर-भाभी आदि के रिश्तों को प्रमुख रूप से चित्रित किया है। उन्ही के माध्यम से पारिवारिक मूल्यों को दर्शाया है।

परिवार में सदस्यों के बीच आत्मीयता या सहयोग का भाव अपेक्षित है। सब एक दूसरे के सुख-दु:ख में सहगामी हैं और इसी में शांति निहित है। इसके विपरीत होने पर परिवारिक संबन्ध टूट जाता है। समकालीन सदर्भ में देखे तो मानव की ज़िन्दगी भाग-दौड की ओर अग्रसर है। सम्बन्धों में शिथिलता आ गयी है। नष्ट हो रहे मूल्यों को उजागर करने का कार्य मृणालजी ने अपनी कहानियों के माध्यम से किया है।

4.2.2. सास-बहू का संबन्ध:-

मृणालजी ने 'एक स्त्री का विदागीत' कहानी के द्वारा सास-बहू के संम्बन्ध को दर्शाया है। यह कहानी एक परिवार के माध्यम से पहाडी जीवन के वैभवशाली अतीत और वर्तमान जीवन शैली से उत्पन्न संघर्ष को प्रस्तुत करती है। सावित्री विगत का प्रतिनिधित्व करती है तो सुषमा वर्तमान का। संयुक्त परिवार के प्रति घृणा की भी इसमें अभिव्यक्ति हुई है। परिवार के सदस्यों के आपसी संबन्ध बाह्य तौर पर सौहार्दयुक्त प्रतीत होते हैं परंतु भीतर ही भीतर विद्वेष फैला हुआ है। सुषमा आधुनिक नारी है वह अच्छी तरह सास की देख-भाल करती है फिर भी सावित्री उससे नफरत करती है। दूसरे लोगों के सामने वह उसे खुशी से रखती है। "शादी-ब्याहों में पडोस की दस औरतों के बीच बहू की धूसर रंगी रेशमी साड़ी पहने सावित्री हाथ हिला-हिलाकर सुषमा की उदारता, उसकी गुणशीलता और परिवार के प्रति प्रेम का बखान

करती, तो औरतें विगलित होकर कहाँ उठती-‘आहाहा दान किये होंगे तुमने मुनुआ की आमा।"3 मृत्युशैया पर पडते वक्त गहने सब वह बेटियों को सौंपना चाहती है। सास को अंतिम समय तक सुषमा देखती है। वह उसे समझ पाने में असमर्थ थी।

धन के पीछे भागते वक्त मानव अपने सभी रिश्ते भूल जाता है। महानगरीय जीवन में होनेवाली ऐसी दर्दनाक घटना का चित्रण मृणालजी ने ‘दुर्घटना’ नामक कहानी में किया है। ज़िन्दगी की भाग-दौड़ में मूल्यों में भी ह्रास देखने को मिलता है। इसमें बेटे और बहू के कार के नीचे पड़कर मरने वाले पिता की दर्दनाक कहानी है। पिता की मृत्यु की खबर सुनाने केलिए छोटा भाई अपने बड़े भाई के घर आता है। भाभी पहले उसे पहचानती तक नहीं, और बातें सुनने पर भी उसे दु:ख नहीं होती है। रिश्तों को कोई मूल्य न देनेवाली स्त्री का चित्रण मृणालजी ने किया है। उनका यह कथन इसके लिए एक नमूना है “तो वे आपके फादर थे? बताइए तो भला उतनी रात बिना पैदल पारपथ के, चलती सड़क उन्होंने हरी बत्ती पर कैसे पार की? पुलिस का भी यही कहना था। वेरी इर्रिस्पांसिबुल ! हमारी कार का तो मडगार्ड काफी पिचक भी गया, पर हमने सोचा, कि छोडो भी, अब ज़रा-ज़रा-सी चीज़ का हर्जाना क्या भरवायें।"4

शहरीय जीवन में नष्ट होते मानवीय मूल्यों को उजागर करने का कार्य लेखिका ने किया है। आपसी रिश्तों को कोई भी मूल्य न देने वाली स्त्री का चित्रण है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण अच्छे मूल्यों का भी हनन हो रहा है। लेखिका बताती है कि भारत में ऐसी स्त्रियाँ भी हैं जिनकी दृष्टि में रिश्तों का कोई मूल्य नहीं है। वह अपने आप में खुश रहना चाहती है। वह रिश्तों के बंधन में पड़ना नहीं चाहती है।

मृणालजी की और एक कहानी है 'कौवे'। इसमें बूढों के प्रति होने वाली नफरत का चित्रण है। गीजेला पाश्चात्य संस्कृति में पली नारी है। उसे हिन्दुस्तान में रहना बिलकुल पसन्द नहीं है। सास-ससुर के पास रहना वह चाहती नहीं है। इसलिए तलाक लेकर अलग रहती है। वह घर में रहते वक्त सास की हालत दर्दनाक है। "जब से वह और गीजेला हिन्दुस्तान आये हैं, हर रोज़ दो-तीन बार यह नाटक होता है। गीजेला ने कहा कि उसे खाना खाने से यहाँ बदहजमी हो जाती है। उसे हिन्दुस्तान में कुछ भी रास नहीं आया था, हवा-पानी-लोग-रेलगाडी का किरकिराता कोयला भरा सफर। उस दिन अम्माजी ने खाना नहीं खाया था, बाबूजी ने भी, उसने भी।"5 पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण मूल्यों में दरारें आ जाती हैं। परिवार के सभी लोग मिलजुलकर रहने के बदले अलग-अलग खुशी से रहना पसन्द करते

हैं। मृणालजी ने इस कहानी में पाश्चात्य संस्कृति को चाहने वाली नारी का (बहू का) चित्रण किया है।

आज के अर्थपोषित समाज संम्बन्धों की सरल धारा स्वार्थ के रेगिस्थान में न जाने कहाँ खो गयी है? इस कहानी में लालची पिता का चित्रण हुआ है। विदेश में रहने वाले पुत्र की आकस्मिक मृत्यु की विभिषिका सहकर भी रघु के माता-पिता पुत्रवधु और बच्चों को भारत बुलाने का आग्रह नहीं करते हैं बल्कि रघु की संपत्ति अपने छोटे बेटे के नाम पर करने केलिए प्रयत्न करते हैं। पुत्र की मृत्यु में केवल माँ ही दु:खी दिखाई पड़ती है। पिता अर्थ को सब कुछ मानने वाले हैं। वे रघु के दोस्त से कहते हैं कि "पिछले बार रघु आया था तो एक हाउसिंग सांसायटी में कुछ रुपये डाल गया था अपने नाम एक फ्लैट केलिए – हम सोच रहे थे कि जेनी से लिखवा लें कि वह फ्लाट अब माधव के नाम ट्रांसफर कर दे। उसे यहाँ के फ्लैट से क्या करना, रघु होता तो बात और थी- अब तो क्या ही आयेंगे वो लोग इधर- वहाँ तो उनका घर है ही-"6 नष्ट हो रहे मानवीय मूल्य की ओर लेखिका यहाँ इशरा कर रही है।

प्रस्तुत कहानियों के ज़रिए मृणालजी ने सास-बहू के बीच संबन्ध को बहुत गहराई से चित्रित किया है। समकालीन ज़माने में हर कहीं परिवर्तन का बोल-बाला है। रिश्तों के बीच पुराने-ज़माने में अटूट शक्ति और मिठास

विद्यमान था तो आज सम्बन्धों में शिथिलता और कटुवाहट आ गयी है। संस्कृति में भी बदलाव हम देख सकते हैं। आपस में बाँटकर जीने केलिए आज लोग तैयार नहीं हैं। भारतीय संस्कृति के ऊपर छा जाने वाली पाश्चात्य संस्कृति की भीषणता ने किस प्रकार संबन्धों में दरारें पैदा की हैं इसका बखूबी चित्रण करने का प्रयास मृणालजी ने किया है।

4.2.3. पति-पत्नी का संबन्ध:-

स्त्री और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों के एकात्म से ही परिवार, समाज और सृष्टि का विकास संभव होता है। स्त्री-पुरुष एक सिक्के के दो पहलू हैं, जिनके संतुलन से जीवन आगे बढ़ता है और सुख-शांति पाता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी-अपनी प्रवृत्तियाँ होती हैं। हर व्यक्ति अपनी प्रवृत्तियों के अनुसार चलता भी है। लेकिन जब एक व्यक्ति दूसरे से मिलता है या संबंधों में जुड जाता है वहाँ एक दूसरे से मेलजोल संभव है। भिन्न प्रवृत्तियों से टकराहट पैदा होती है। एक दूसरे से वैचारिक धरातल पर समन्वय किया जाय तो संबन्ध का निर्वाह हो सकता है।

आज के ज़माने में मानवीय रिश्तों पर दरारें आ गयी हैं। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण हर कहीं बदलाव देखने को मिलता है। स्वार्थता के पीछे दौडने के कारण आपसी रिश्तों का मूल्य लोग भूल चुके हैं। मृणालजी ने अपनी प्रस्तुत कहानियों के माध्यम से नष्ट होते मानवीय रिश्तों का चित्रण

प्रस्तुत किया है। एक छत के नीचे रहते हुए भी आपस में समझने केलिए किसी के पास समय नहीं है। समकालीन सदर्भ में नष्ट हो रही मानवीयता को उभारने का कार्य लेखिका ने किया है। पति-पत्नी के बीच का संबन्ध पवित्र है। भारतीय संस्कृति के अनुसार आपसी संबन्धों में मूल्य निहित है।

आज के ज़माने में रिश्ते सब दिखावे की चीज़ मात्र बन गये हैं। मृणालजी ने आधुनिक वातावरण के प्रभाव के कारण उत्पन्न संबन्धों का ह्रास बखूबी से चित्रित किया है। 'कोहरा और मछलियाँ' नामक कहानी की 'ममी' विवाह तो लेखक से करती है, लेकिन बाद में सांमजस्य स्थापित करने में असमर्थ निकलती है। वह तो हमेशा फिल्मी दुनिया में जीना चाहती है। अपने पुरुष मित्रों के साथ पार्टियों में जाना बहुत पसन्द करती है। वह तो यह भी भूल जाती है कि पति के कमरे में सिर्फ पत्रकारों को इंटरव्यू देने केलिए जाती है तब वह पति की सेवा में तत्पर पत्नी की तरह फोटो खिंचवा लेती है। "जी हाँ, सिर में तो इनके दर्द पहले भी होता था, हमारा लोग समझते रहे, पढाई का जोर पड रहा है, फिर एयरपोर्ट पर बेहोश .... डॉक्टरों का कहना..... ब्रेन ट्यूमर ...... असाध्य ही समझिए........ नहीं, किसी से नहीं बोलते.......। ममी इटरव्यूकारों को उसी स्वर में बतातीं, जैसे कोई गाइड ध्वस्त ऐतिहासिक खंडहर दिखाये कि 'यहाँ हमाम था, वहाँ बेगमें नहाती थी.......।"[7] पति के मृत्यु के बाद भी उसके नाटकीय जीवन में कोई फर्क नहीं

पडता है। इसमें पति-पत्नी संबन्धों में मौजूद दरारों को गहराई से हम देख सकते हैं। इस कहानी में बच्चों की मनोव्यथा का चित्रण भी किया है। माँ-बाप के बीच की संबन्धों का चोट बच्चों पर ही ज़्यादा पडता है।

पति-पत्नी के बीच होने वाले अलगाव 'शरण्य की ओर' नामक कहानी में दर्शाया है। पालित और उमी पति-पत्नी के रूप में ज़िन्दगी बिताते हैं। लेकिन दोनों में दूरियाँ आ गई हैं। उमी के साथ अवैध संबन्धों को लेकर जो झगड़ा हुआ था वह उन दोनों में दूरियाँ पैदा करती हैं। पत्नी भी पति के साथ न होते वक्त अपने को स्वतंत्र समझ कर खुश होती है। "उमी का व्यवहार पति की अनुपस्थिति में ज़्यादा खुला, सहज हो आता है, वरना या तो दबी-दबी-सी वह चुपचाप सिगरेट पीती रहती है, या निरर्थक मुसकराहटें........"[8] रिश्तों में एक बार चोट पड़ने पर संबन्धों में अलगाव पड़ जाता है। पति भी पत्नी से बदला लेने केलिए अन्य स्त्रियों के साथ संबन्ध जोड़ने केलिए तैयार हो जाता है।

अन्य लोगों को दिखाने केलिए मात्र पति-पत्नी के रूप में जीते हैं। आपसी रिश्तों में यहाँ कोई मूल्य नहीं है।" दुनिया के दिखाने को समझौता हो भी गया,तो क्या? अंधा भी देख सकता है कि दोनों इससे कितने असंतुष्ट है....... जैसे एक-दूसरे को बुली करते रहते है........."[9] उमी स्वच्छद रूप से

जीना चाहती है। वह पति से प्यार नहीं कर सकती है। उमी अपने अवैध संबंध को छिपाने केलिए शादी करनेवाली औरत है तो पालित पत्नी से प्यार न मिलने के कारण और पत्नी से बदला लेने केलिए अन्य स्त्रियों से संबंध जोडने वाला पुरुष।फिर भी पालित वहाँ भी सफलता प्राप्त नहीं कर पाता है। इसमें पति की कुंठा को लेखिका ने व्यक्त करने का प्रयास किया है।

मृणालजी के 'बर्फ' कहानी के पति-पत्नी अव्यवस्थित मन के प्रतीक हैं। इस कहानी में ऐसे परिवार का चित्रण है जहाँ माँ-बाप के बीच झगड़ा चल रहा है और तीनों बच्चे सहमे से एक कमरे में बैठे हैं। पहले लड-लडकर सारे घर को सहमाना, तीन-चार दिन तक असामान्य हरकतें करना, और बाद में सुलह करके मुर्गी पकाना, माँ के द्वारा पिता को ग्लास भर शराब पकडाना आदि अजीब व्यवहार बच्चों केलिए अत्यंत विचित्र स्थिति उत्पन्न करते हैं। माँ-बाप के इस प्रकार के व्यवहार से बच्चे गलत रास्तों पर चलने लगते हैं। "ऐसी भारी साप्ताहिक झगडों के बाद जब उनके माँ-बाप में सुलह होती, तो निशानी यही थी। माँ खुद बैठेकर उम्दा मुर्गा पकाती, पापा का ग्लास भी खुद ही भरती और एक हिस्टीरिक्ल डर से मुक्त तीनों भाई-बहन पुराने पारिवारिक मज़ाकों पर बेवजह ज़ोरों से ठहाके लगाते....." [10]

मृणालजी ने प्रस्तुत कहानी में पति-पत्नी के बीच होने वाले तनावग्रस्तता को व्यक्त किया है। पति-पत्नी के बीच झगडा होते वक्त घर के अन्य सदस्यों पर पड़ने वाले असर का चित्रण भी उन्होंने किया है। झगडों के कारण बच्चों को ही अधिक कष्ट सहना पड़ता है। मानसिक तनाव से ग्रस्त बच्चों का पारिवारिक जीवन से विश्वास टूट जाता है। अव्यवस्थित मन से करने वाले काम में सफलता नहीं मिलती है। लेखिका ने इसमें नष्ट हो रहे रिश्तों के मूल्य को हमारे सामने रखा है। इससे अवगत होने का इशारा भी वे देती हैं।

भिन्न-भिन्न संस्कृति में जीने वाले लोगों के बीच, संबन्ध जुडने से भी अलगाव संभव होता है। 'कगार पर' कहानी में पति-पत्नी के बीच के अलगाव का कारण सांस्कृतिक अंतर है। विषु ने विदेश में रहते हुए विदेशी लड़की से विवाह तो किया परंतु दोनों ही अपनी संस्कृति व संस्कारों में इस तरह बन्धे हैं कि उन्हें कभी भी छोड़ नहीं पाते हैं। विषु पत्नी से बहुत प्यार करने वाला है। पत्नी मिली पाश्चात्य संस्कृति में पलने के कारण स्वतंत्र होकर जीना चाहती है। बच्चों को भी स्वतंत्र रहने की सीख भी देती है। भारतीय संस्कृति रिश्तों को मूल्यवान चीज़ समझती है। यहाँ विषु पत्नी को स्वतंत्रता देने से हिचकते नहीं। किंतु वह अपने संस्कारों के विरुद्ध चलता नहीं है। पत्नी पति की हर ज़रूरतों को डॉक्टर या अपनी माँ को सौंपकर जाती है। भारतीय पत्नी की तरह घर में रूककर पति की ज़रूरतें पूरा नहीं करती है और न ही इसे अपना कर्तव्य मानती है।

धीरे-धीरे दोनों के संबन्धों में आयी तनावग्रस्तता उन्हें अलग होने केलिए मज़बूर कर देती है। मिली खुलकर अपनी बातें पति के सामने रखती है-“सो बहरवाल हमें समय रहते एक-दूसरे और बच्चों के भले केलिए अलग हो जाना चाहिए। जितनी जल्दी हो उतना ही बेहतर जिसे लेकर हम दु:खी या भावुक हो सकते थे, वह बात रही नहीं, तब इस सब में ....”[11] पति-पत्नी के संबन्ध में आने वाली शिथिलता एवं तटस्थता को यहाँ दर्शाया गया है। संस्कारों के बीच का अंतर आपस में समझौता करने केलिए बाधक होता है। पाश्चात्य संस्कृति में पलने के कारण पत्नी अपने को स्वच्छन्दता से जीवन बीतना चाहती है। पत्नी हमेशा अपने ही घरवालों को प्रमुखता देती है।“बच्चों को लेकर तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी। ममी-डैडी ने कहा है कि मैं उनके साथ रह सकती हूँ, कानूनी कार्यवाही के दौरान। फिर कोई पक्का प्रबन्ध हो जायेगा। बेशक बच्चे तुम्हारे भी हैं। तुम हर महीने उन्हें मिलने एक बार आ सकते हो, अगर चाहे तो।"[12]

मृणालजी की और एक कहानी ‘पितृदाय’। इसमें भी दो संस्कृतियों के बीच होने वाले अंतर को ही दर्शाया गया है। भारतीय लड़की विदेश में जाकर नीग्रो से शादी कर लेती है, लेकिन बेरोज़गार पति के साथ ज़्यादा दिन निभाने में असमर्थ होती है। तलाक लेने केलिए पति-पत्नी विवश होते हैं। पति

नशीले पदार्थों का इस्तेमाल करता था। इस कारण वह पत्नी पर झूठा इल्ज़ाम लगाता है। वह सिर्फ पैसे को चाहने वाला आदमी है। “उसका नीग्रो पति,जो सिर्फ बेकारी का सरकारी मेहनताना खा रहा था, अपनी डॉक्टर पत्नी से तलाक के एवज में भरपूर हरजाना ऐंठने पर उतारू था।"[13]

मृणाल पाण्डे जी ने प्रस्तुत कहानियों के माध्यम से पति-पत्नी संबन्ध में आने वाली दरारों को हमारे सामने रखा है। भूमड़लीकरण के इस दौर में हर कहीं नया-नया बदलाव आ गया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण भी संबन्धों में दरारें आ गयी हैं। आपसी रिश्ते सब भूल गये हैं। सब लोग अपने आपको खुश रखने के घुड-दौड में है।

4.2.4. माँ-बाप के बीच बच्चों का संबन्ध:-

आज के कहानीकार यथार्थ की कटुता को वहन करने में सक्षम निकले हैं। वे पलायन या मुक्ति नहीं, अपनी पूरी जिजिविषा के साथ सघर्ष करना चाहते हैं। वर्तमान युग के औद्योगिक विकास विशेषकर नवऔपनिवेशिकवाद के बढते प्रभाव के फलस्वरूप गाँवों से नगरों की ओर भागने की प्रवृत्ति ने परिवार- प्रणाली के विघटन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने आत्मनिर्भरता प्रदान की है। स्वच्छन्द जीवन जीने की लालसा ने एकाकी परिवारों को जन्म दिया है। आज परिवार का अर्थ

पति-पत्नी एवं बच्चे रह गए हैं। हँसता-खिलखिलाता, फूल सा महकता परिवार आज कल्पना जगत की वस्तु बन गया है। अब परिवार कई प्रकार की समस्याओं से घिरा है, संतप्त और संत्रस्त है, मुक्ति की चाह से छटपटा रहा है।

महत्वकांक्षा आदमी को चैन से बैठने नहीं देती है। वह धीरे-धीरे चलकर नहीं, व्याकुलता से भागकर सब कुछ हासिल करना चाहता है। आसानी से सब कुछ मिल गया तो ठीक है नहीं, तो स्पर्धा के इस युग में दूसरों को अन्ध-गह्वर में धकेलकर शीर्ष पर चढने को भी उद्यत होते हैं। सम्बन्धों की ऊष्मा अब गाँव में ही देखने को मिलता है। आज मानव के भीतर की कटुता जन्मदायिनी माँ को भी 'बुढिया' कहने से हिचकती नहीं है। क्यों इस प्रकार होते हैं? यह बात सोचने केलिए भी हमारे पास समय नहीं है। सुख-शांति भरपूर जीवन में छा गयी काली छाया की ओर लेखिका हमारा ध्यान आकर्षित करती है। मृणालजी ने अपनी कहानियों में माँ-बाप और बच्चों के बीच के संबन्ध को दर्शाया है। आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। परिवार वालों से ही उसका चरित्र निर्माण संभव होता है। आज की पारिवारिक ज़िन्दगी में सब लोग किसी न किसी भाग-दौड में शामिल हैं। ज़िन्दगी को सुरक्षित रखने या ज़िन्दगी को अच्छी तरह आगे बढाने की कोशिश करते वक्त वे जीना भूल जाते हैं। बढ़ते जीवन संघर्षों ने आज परिवार का सारा रस, सारा माधुर्य, सारा उल्लास सोख लिया है। नयी पीढ़ी का अपने घर-परिवार से उदासीन

रहना, कटकर रहना और सिर्फ स्वार्थता पूर्ति की खातिर जुड़ना ये सब ज़िन्दगी को भयावह स्थिति में डालता है।

पिता सदैव यह चाहता है कि मेरा पुत्र जीवन में सफल हो, आगे बढ़े समृद्धि और प्रसिद्धि प्राप्त करे। इसी दृष्टि से वह पुत्र को संस्कारित उत्प्रेरित करने की कोशिश करता है और हर तरह से अपनी सामर्थ्य के अनुसार पुत्र को योग्य बनाने का प्रयास करता है। ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने के दौड में आपस में बातें करने केलिए भी समय नहीं मिलता है। बच्चों को किसी भी प्रकार का कष्ट न हो इस केलिए वे सब कुछ देने केलिए तैयार होते हैं जो बच्चे चाहते हैं। इस प्रकार करने से भी संबन्धों में दरारें आ जाती है। माँ-बाप की इस व्यवहार से बच्चे दिशाहीन हो जाते हैं। मृणालजी ने 'जगह मिलने पर साइड दी जायेगी उर्फ तीसरी दुनिया की प्रेमकथा' कहानी में युवा पीढ़ी किस प्रकार माँ-बाप को देखती है, इसका चित्रण प्रस्तुत किया है। युवा पीढ़ी के लोग माँ-बाप के पास सिर्फ धन लेने केलिए मात्र जाते हैं। घटते मूल्य को इसमें व्यक्त किया है। "वह अपने पिता को बाप कहता था, माँ को ओल्ड लेडी और चरस से दमकती लाल आँखें चमकाता परिवार के गडे मुर्दे उखाड़ाने लगत।"[14] पुत्र हमेशा सुख लोलुपता में डूबकर जीना चाहता है। वह परिवारवालों के साथ रहने के बदले अलग रहना चाहता है। "अपने बाप के आठ शयनकक्षों वाले घर में वह बाहर गैराज के ऊपर बने एक फ्लैट में रहता

था और घरवालों से उसका औपचारिक ताल्लुक भी शायद न रहा था। वैसे घरवालों की बातें वे करते भी नहीं थी।"[15] पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण पारिवारिक मूल्यों में भी ह्रास देखने को मिलता है।

'दुर्घटना' नामक कहानी के माध्यम से लेखिका ने माँ-बाप के प्रति बच्चों का संबन्ध व्यक्त किया है। गाँव में रहने वाले माँ-बाप अपने बच्चे का देहाती बन जाने के भय से शहर में जाकर जीते हैं। पिता भारतीय संस्कृति को आत्मसात करनेवाले आदमी हैं। माँ के आदेश मानकर वे शहर जाने केलिए तैयार होते हैं। "मेरे होने के बाद अम्मा ने बाबूजी से गाँव छुडवा दिया। यहाँ रहते उन्हें अपने बेटों के नितांत 'हूश देहाती' बन जाने की आशंका थी, जो निराधार न थी। हम दोनों के जन्म से पहले ही शायद उन्होंने हम दोनों के स्वर्णिम शहरी भविष्य़ के कई सपने देख डाले थे"[16] बड़े विदेश में जाकर पढ़ाई करता है। माँ की मृत्यु के बाद छोटे बेटे और बाप एक साथ रहते हैं। अचानक एक दिन पिता गाड़ी से टकराकर मर जाते हैं। "वह बड़ी-सी गाड़ी एक मर्द और औरत के जोडे को लेकर कहीं से आ रही थी कि बाबूजी सामने पड़ गये। रात का समय था। गाड़ी तेज़ी से आ रही थी, कुचलती हुई चली गयी। बाबूजी मर गये।"[17] पुत्र और बहू ने ही यह गाड़ी चलाई थी। भाई बाबूजी की मृत्यु की खबर बताने केलिए उसके फ्लाट में जाता है। पहले भाभी भी उसे पहचानते नहीं है। मृत्यु की खबर सुनते से भी उसे कोई दु:ख नहीं

होता है। "मेरे फादर सड़क पार कर रहे थे कि आपकी कार से टकराकर चल बसे। भैया को मैं ने खबर दे दी थी।"[18] इससे व्यक्त हो जाता है कि आपस में बातें करने केलिए भी किसी के पास वक्त नहीं है। खून के रिश्ते होने पर भी एक दूसरे को पहचानने में असमर्थ निकलता है। हमारी संस्कृति में आने वाली भयंकर समस्या की ओर लेखिका ने यहाँ इशारा किया है।

तेज़ी से बढ़ते युग में धन की महत्ता भी बहुत बढ़ गयी है। 'पितृदाय' नामक कहानी में मृणालजी ने एक स्वार्थी पिता का चित्रण किया है। बेटे और बेटी विदेश में रहते हैं। बेटी पति से तलाक लेकर अलग रहती है। वह वापस आना चाहती है पिता के आदेश से वह वहाँ काम करती है। बेटा भी काम करके पैसा भेजता है। पिता की बीमारी की खबर सुनकर बेटा घर आता है और पिता की सेवा में जुड़ जाता है। पिता की मृत्यु होती है। कहानी में बेटे की मानसिक व्यथा को भी यों दर्शाया गया है "जन्म-भर मुझे नफरत से देखा, फिर मेरे ही मत्थे मरने आये" इस वाक्य से पिता के प्रति पुत्र के मन में छिपे क्रोध का खुलासा होता है। धन के पीछे भागते वक्त आत्मीयता छूट जाती है। मृणालजी के 'दोपहर में मौत' नामक कहानी में भी पिता की स्वार्थता का चित्रण मिलता है। विदेश में रहने वाले पुत्र की अचानक मृत्यु होती है। पुत्र के मित्र आते वक्त पिता से बातें करते हैं। बेटे की मृत्यु से पिता के मन में शोक नहीं है। उसके मन में पुत्र की पत्नी और बच्चों के प्रति भी चिंता नहीं। वह सिर्फ धन चाहने वाला था। वह पुत्र का खरीदा हुआ फ्लैट छोटे बेटे के नाम पर

करने के बारे में हमेशा सोचता रहता है। “तो ज़रा मालूम कर लेना कि क्या कार्रवाई करनी होगी उसके लिए। ये काम अभी ही हो जाये तो ठीक है।"[19]

पुराने-ज़माने के बदले माँ-बच्चों के संबन्धों में भी दूरियाँ देखने को मिलती हैं। आधुनिक वातावरण के प्रभाव के कारण संबन्धों में ह्रास आ गया है। ‘कोहरा और मछलियाँ’ नामक कहानी में माँ हमेशा अपने पुरुष मित्रों के साथ पार्टी में भाग लेकर खुशी से रहना चाहती है। पति की बीमारी के दौरान हृदय हीनता की सीमा तक उनकी उपेक्षा और मित्रों का इंटरव्यू लेने आए लोगों के बीच पति की सेवा का प्रदर्शन आदि दोनों लड़कियों को माँ से दूर करते जाते हैं। वे किसी प्रकार घर से बाहर जाना चाहती हैं। लेखिका ने इसमें माँ के आधुनिक रूप को दर्शाने का प्रयत्न किया है। ‘रिक्ति’ कहानी में माँ भी हमेशा टेलीविज़न देखकर घर में ही रहना चाहती है। पिता की मृत्यु हो जाती है। बेटी को पिता की यादें सताती हैं। मीडिया के बढते प्रभाव के कारण परिवारवालों को आपस में बातें करने केलिए भी समय नहीं मिलता है। ‘हमसफर’ कहानी की माँ भी अपना पूरा क्रोध बेटे पर उतार लेती है। विधवा होने के कारण परिवारवालों द्वारा दी गई कठिनाइयों से वह जूझती है। माँ को बेटे के प्रति प्यार होते हुए भी वह प्रकट नहीं कर पाती। ‘लड़कियाँ’ नामक कहानी में लडके और लडकी के प्रति माँ और परिवारवालों के भेदभाव को दर्शाया है। लड़की की मनोकामना पर ध्यान नहीं देती है। लडकी द्वारा किया

गया कार्य माँ को हमेशा मुसीबत-सा लगता है। समाज में लडकियों के प्रति होने वाली घृणा भरी दृष्टि को भी इसमें प्रस्तुत किया गया है। माँ-बाप के बीच होने वाले झगडों के कारण भी बच्चों से उसका संबन्ध टूट जाता है। 'बर्फ', 'कौवे', 'रूबी' आदि कहनियाँ इसके उदाहरण हैं।

परिवार एक संघटन है। इसमें परिवार वालों के बीच गहरा संबन्ध होता है। आधुनिक वातावरण में हर कहीं बदलाव आ गया है। अपने आपको स्वस्थ रहने की भाग दौड में सामने वालों को देखने और समझने का वक्त अब किसी के पास नहीं है। मृणाल पाण्डे जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से संबन्धों के बीच आने वाले घुटन और संत्रास को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

4.2.5. बाल-मनोविज्ञान:-

मृणालजी ने अपनी कहानियों में बाल मन की आकाक्षाओं और बच्चों की मानसिक तनावों का भी चित्रण किया है। परिवार वालों के बीच होने वाले संघर्ष का फल बच्चों को ही भोगना पडता है। आधुनिक दौर में बच्चों की मानसिकता में भी बदलाव आ गया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण बच्चे भी स्वतंत्र होकर सोचते हैं। माँ-बाप भी बच्चों को खुश रखने केलिए सब कुछ करने को तैयार हैं। अधिक धन की प्राप्ति होने से युवा पीढ़ी या बच्चे दिशाहीन हो जाते हैं। माँ-बाप के बीच का सघर्ष और झगडा तलाक तक पहूँच

जाते हैं। माँ-बाप के बीच का अलगाव बच्चों के व्यवहार में परिवर्तन लाता है। बच्चे के पालन में माँ और पिता का साथ हमेशा होना चाहिए।

'रूबी' कहानी में उच्चवर्गीय किशोर मन की व्यथा और बनाबटी ज़िन्दगी के रुग्ण रूपों से साक्षात्कार होता है। रूबी एक छोटी सी बच्ची है उसके पिता के तबादले की वजह से पहाडी क्षेत्र में आयी है। वह अमीर घर की लड़की है, उसे घर से बाहर निकलने नहीं देते हैं। पहाडी में रहने वाले दो बच्चे उसके साथ खेलने केलिए आते हैं। रूबी अकेले रहते-रहते अनमनी या उदास होती थी। माँ-बाप के बीच हमेशा झगडा देखने के कारण वह अकेलेपन में ही रहना चाहती है। लेखिका ने इसमें इस बच्ची की मनोव्यथा को दर्शाया है। रूबी जैसी कई लडकियाँ हमारे समाज में पायी जाती हैं जो अपने घर के वातावरण से परेशान हैं। उनके मानस पर घरेलू झगडे का असर पडता है कभी-कभी पागल हो जाती हैं। "हर खाने के साथ-साथ उसे आयरन, मल्टी विटामिन, कैल्शियन वगैरह, जाने किस-किस चीज़ की गोलियाँ निगलनी होती थीं, पर इसके बावजूद उसका दुबला चेहरा वैसा ही पीला, उदास और कुम्हलाया सा रहता। अम्मा का कहना था कि अगर दवाइयों की गोलियों के बजाय वे लोग रूबी को खुली हवा में आने और हँस-बोलने का मौका दें तो चार दिन में लडकी का कायापलट हो जाये।"[20]

समाज में लडकी और लडकों के प्रति भेदभाव देखने को मिलता है। बचपन से ही लड़कियों को दबा कर रखते हैं। मृणालजी की 'लड़कियाँ' शीर्षक कहानी में छोटी-सी बच्ची के प्रतिशोध को व्यक्त किया गया है। माँ भी हमेशा उसे मुसीबत के रूप में देखती है। नानी के घर जाने वाली लड़की के मन में वहाँ के लोगों द्वारा दिखाये गये भेद-भाव से घृणा उत्पन्न हो जाती है। नानी मामा के लडके को गोद में बिठाकर कहानी सुनाती है। लड़की उस समय वहाँ आ जाती तो नानी उसे पैर छूने का आदेश देते हुए कहती है कि "मुझ से कहा गया कि पैर छूओ, ऐसे नहीं ऐ से । अरे लडकी का जनम है और ज़िन्दगी भर झुकना है तो सीख ही लो।"[21] अष्टमी के दिन लड़कियों को लेकर पूजा करती है। वह इसे बिलकुल पसंद नहीं करती है। माँ और नानी के सामने प्रतिशोध व्यक्त करते हुए वह कहती है "मुझे नहीं चाहिए इन औरतों का हलवा-पूरी, टीका रुपया मैं देवी नहीं बनूँगी!"[22] लेखिका ने इसमें आज के बच्चों की मानसिकता को दर्शाया है। साथ ही साथ परंपराओं के प्रति लडकी के विद्रोह व प्रतिरोध को दिखाया है।

'कुन्नु' कहानी में भी बच्चों के बीच का भेदभाव दर्शाया गया है। कुन्नू छोटी सी लडकी है। उसके मन में अनेक प्रकार के प्रश्न उठते हैं। उसका उत्तर उसे किसी से नहीं मिलता है। वह चिडियों के साथ खेलना पसंद करती है। लडकी होने के कारण हमेशा प्रश्न करने से माँ टोक लेती है। बाल मन की

जिज्ञासा को दबाकर रखने से उत्सुकता बढ़ती जाती है। कहानी कुन्नू की किशोर अवस्था से लेकर सयानी होने तक की मानसिकता को दर्शाया गया है। वह अकेले खुले वातावरण में चलना चाहती है। अपने मन को पूरी तरह न समझ पाने के कारण वह भी माँ-बाप से दूर होना चाहती है।

'खेल' कहानी में अमीर-गरीब बच्चों की मानसिकता को दर्शाया गया है। अमीर घर का बच्चा हमेशा गरीब घर के बच्चों को नौकर बनाकर खेल खेलता है। बाल मन का चित्रण लेखिका ने सूक्ष्मता के साथ दर्शाया है। खेल एक ऐसी कहानी है जिसमें बाल मनोविज्ञान से जुडी नाटकीयता के साथ हमारे समाज के वर्गभेद की साफ सुथरा चित्रण अंकित हुआ है। यह कहानी मालिक के बच्चों और नौकर के बच्चे के बीच खेल, संवादों के ज़रिए घटित होती है। मालिक का बच्चे 'परताप' खुलकर बताता है-" क्यों नहीं? आदमी का बच्चा आदमी और नौकर का बच्चा नौकर!"[23] कहानी में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की मानसिकता के बीच व्यंग्य के कई स्तर भी सहज रूप में उभरते हैं। बच्चों की मानसिकता में आये बदलाव को सूक्ष्मता के साथ कहानी में स्पष्ट किया गया है।

माँ-बाप के कुसंस्कार का असर बच्चों पर पडता है। 'लक्का-सुन्नी' कहानी में अनाथ हो गयी बच्ची की मानसिकता को दर्शाया गया है। अमृता नानी के साथ रहती है। उसकी माँ कैंसर रोग से ग्रस्त है। वह अपने

इच्छानुसार विवाह करके विदेश में रहती है। पति नशीली वस्तुओं का उपयोग करके मृत्यु का वरण करता है। कैंसर रोग के कारण माँ भी घर आना नहीं चाहती। बच्ची को नानी के पास सौंपकर उसकी भी मृत्यु होती है। बच्ची भी देश को पसंद करने में असमर्थ निकलती है। वह हमेशा अपने काल्पनिक जगत में लक्का-सुन्नी नामक दोस्तों से खेलती है। वह हमेशा अकेले खेलना चाहती है। माँ-बाप की मृत्यु का बुरा असर उस पर पडता है। उसे घुटन भरी और तनावग्रस्त ज़िन्दगी जीना पडती है।

'एक पगलाई सस्पेंस की कथा' में विष्णु प्रिया नामक अनाथ लड़की की मानसिकता का चित्रण भी लेखिका ने किया है। माँ-बाप की मृत्यु के बाद उसे रिश्तेदार के फार्म हाउस में ले आती है। वहाँ नौकरों के बीच उसकी सारी ज़िन्दगी गुज़रती है। वह कुत्तियों के साथ खेलती है। कहानी के अंत में सयानी होती विष्णु प्रिया आत्महत्या करती है।

सौतेली माँ की पीड़ा सहने वाली बच्चे की कहानी है 'अब्दुल्ला'। वह एक ओर गरीबी से त्रस्त है तो दूसरी ओर सौतेली माँ की पीड़ा से। बिन्नो उसका दोस्त है। दोनों अल्ला मिया से दुआ माँगते हैं। "अब्दुल्ला की सौतेली माँ को कीड़े पड़ जाएँ, उसे कोढ़ चकरी फूटे, नाक सड़ के सड़ा टमाटर हो जाए, दीदे फूट जाएँ, और तब बस इस्टाप पर वो नाक से गुँगुआ-गुँगुआ के भीख माँगे।"[24] भारतीय समाज में सौतेली माँ की पीड़ा सहने वाले कई बच्चे

हैं। उसकी मानसिकता को दर्शाया गया है। पिता से भी वह नफरत करता है। 'हिर्दा मेयो की मंझला' कहानी में गरीब बच्चे का कम उम्र में नौकरी करना और पढ़ाई से वंचित रहना, हमेशा अनमना सा रहना या बेजान रहना आदि समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है।

'बर्फ' कहानी में माँ-बाप के झगड़े के बीच बच्चों की मानसिक स्थिति का चित्रण है। हमेशा झगड़ा देखने वाले बच्चों के मन में भी भय और अन्याय करने की चिंता होती है। इसमें लेखिका ने तीन बच्चों की मानसिकता का चित्रण बखूबी के किया है। तीनों बच्चे परेशान हैं। फिर भी माँ-बाप से बातें करने केलिए डरते हैं। भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण इसमें अंकित है। पति के अत्याचारों से परेशान पत्नी अपना गुस्सा बच्चों पर उतारती है। इस प्रकार करने से बच्चे भी माँ से नफरत करने केलिए प्रेरित होते है।'हमसफर' कहानी की माँ भी अपना सारा क्रोध और परेशानी बेटे पर उधार लेती है। विधवा होने के कारण वह परिवारवालों के द्वारा कई प्रकार की कठिनाइयों को सहती है। बच्चे को मारकर वह अपनी पीड़ा को कम करती है। इसमें बच्चों की दर्दनाक स्थिति का चित्रण हुआ है।

4.3. स्त्री विमर्श:-

स्त्री को केन्द्र में रखकर उसके जीवन के हर पहलू को लेकर गभीर सोच-विचार करना स्त्री विमर्श का अर्थ है। समकालीन स्त्री अपने अधिकारों के

प्रति जागरूक होने पर भी पुरुष के वर्चस्व जन्य आचरण को हमेशा झेलती है। स्त्री अपने ऊपर होने वाले शोषण, दमन, उत्पीड़न, उपेक्षा आदि पर चर्चा करके मानवोचित जीवन जीने का अधिकार हासिल करना चाहती है। वही साहित्य का स्त्री विमर्श का पक्ष है जिससे स्त्री जीवन की अनछुई एवं अनजानी पीड़ा जगत का उद्घाटन होता है।

स्त्री विमर्श पर सबसे महत्वपूर्ण विचार महादेवी वर्मा जी की श्रृंखला की कडियों में मिलता है। इतिहास पर नज़र डालते हुए हमें पता चलता है कि अनादि काल से समाज में नारी का गौरवमय स्थान रहा है और वह पुरुष की पूरक और समकक्ष रही है। वेद, पुराण जैसे ग्रंथों में स्त्री को ऊँचा स्थान देकर उसे हमेशा हाशिये पर रखा गया। आज नारी शिक्षा के तहत अपने हक हासिल करने केलिए प्रयत्न कर रही है। उसने पुरुषवर्चस्ववादी समाज को सही ढंग से पहचान लिया है। पितृसत्तात्मक समाज के बन्धन के कारण उसे जीने केलिए संघर्ष करना पड़ता है। स्त्री पुरुष से नहीं बल्कि पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता से मुक्त रहना चाहती है। समकालीन भारतीय समाज में नारी जीवन की विसंगतियों, बदलते सदर्भों और नवीन परिस्थितियों के कारण नारी के संघर्षपूर्ण जीवन, उसकी विभिन्न स्थितियों का आंकन लेखिका ने किया है। मृणालजी ने जीवन के भोगे यथार्थ के आधार पर बड़ी मार्मिक अभिव्यक्ति की है। मृणालजी स्त्रीत्ववादी कथा लेखिका ही नहीं, बल्कि हिन्दी की एक प्रमुख स्त्रीवादी लेखिका भी है जो भारतीय स्त्री की

ठोस परिस्थितियों की तामाम जटिलताओं की तह में जाती है। उन्होंने स्त्री की समस्याओं को उसके कर्म, श्रम, भूमिका और सामाजिक सरोकारों से जोड़ लिया है। स्त्री जीवन के विविध पहलूओं का आंकन मृणालजी ने अपनी कहानियों के माध्यम से किया है।

4.3.1. स्त्री दोयम दर्जे का नागरिक नहीं:-

भारतीय समाज में अब भी बेटा-बेटी में विभेद कहीं देखने को मिलता है। यहाँ भी माना जाता है कि पुत्र ही कुल को बढ़ाने वाली कडी है इसलिए उसे शिक्षा देना आवश्यक है। लड़की सिर्फ घर सँभालने केलिए है। इसलिए घर का काम-धंधा सीखना ही काफी है। इस भेदभाव की रूढियों के कारण नारी घर की चारदीवारी में बन्द रहती है। नारी शिक्षा प्राप्त करने के कारण आज प्रश्न कर रही है, अपना हक हासिल करने केलिए वह कोशिश कर रही है। पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता को वह तोड रही है। पुराने-ज़माने से शोषण सहने के कारण आज भी समाज में बूढ़े लोगों की मानसिकता में बदलाव नहीं आया है। नारी के प्रति दोयम दर्जे का दृष्टिकोण आज भी देखने को मिलता है। पुत्री के जन्म में शोक मनाया जाता है। पुत्री को जन्म देने वाली माँ को भी समाज में तिरस्कार मिलता है। इसलिए माँ हमेशा बेटी को मुसीबत समझती है। मृणालजी ने अपनी कहानी 'लड़कियाँ' के द्वारा एक छोटी सी लड़की के प्रतिरोध को व्यक्त किया है। परिवार वाले और माँ उसे

हमेशा मुसीबत मानते हैं। नानी भी मामा के लड़के को गोद में बिठाकर कहानी सुनाती है। उससे हमेशा झुककर रहने का आदेश देती है। लड़की होने के नाते उसे जिन्दगी भर सिर झुका कर रहने का सबक देती है। अष्टमी के दिन नानी लड़कियों की पूजा करती है और हल्वा पूरियाँ आदि खिलाती है। उस दिन लड़की को देवी का स्थान देती हैं "बच्चे है वो-कन्याकुमारी ठैरी,आज अष्टमी हुआ। देवी का दिन, आज के दिन कन्याकुमारी पर हाथ नहीं उठाना हुआ। सराप-पाप लगता है।"[25] लड़की इस प्रकार के रीति-रिवाज़ों के प्रति अपना विद्रोह प्रकट करती है:-"जब तुम लोग लड़कियों को प्यार नहीं करते तो झूठ–मूठ में उनकी पूजा क्यों करते हो?" मेरी आवाज़ रूलाई से फटती है, गुस्से में मेरे मन में आता है कि आरती का जलता कपूर निगल कर अपने इस दगाबाज गले को दाग दूँ। "क्यों ? मैं फिर पूछना चाहती हूँ, पर रो पड़ने के डर से चुप हो। मैं रोना नहीं चाहती। इनके सामने, खासकर ।"[26]

परिवार को सुरक्षा का प्रतिक माना गया है। पर अधिकांश स्त्रियों केलिए परिवार असुरक्षित है, उत्पीड़न तथा शोषण का केन्द्र है। पितृसत्तात्मक समाज ने नारी को कई नियमों में जकडकर रखा है। उसे बचपन से उस ढाँचे में पाला-पोसा है। जो इस ढाँचे से निकलती है उसे समाज झूठे सम्मान और पद देकर अपने अनुकूल बना लेता है। पुरुष अपने स्वार्थता की पूर्ति केलिए स्त्री का इस्तेमाल कर रहा है। 'प्रतिशोध' कहानी में मृणालजी ने पुरुष की

स्वार्थ मानसिकता को उजागार किया है। इस कहानी के मधुसूदन बाबू अकेले रहने वाला है। बचपन में माँ-बाप के छोड जाने के कारण मामा के पास रहकर एंटर्स करके ट्रासपोर्ट कंपनी की नौकरी करती है। वह बहुत बड़ा संगीत प्रेमी था। पडोस के दामोदर उससे हारमोनियम चलाने केलिए सहायता मांग कर आता है। पहले वह दामोदर से बातचीत करने को तैयार नहीं था बाद में उससे दोस्ती होती है। दामोदर की माँ और बहन है। माँ रोग ग्रस्त है। दमयंती नौकरी पेशा नारी थी विधवा होने के कारण वह भी माँ के साथ रहती थी। दमयंती को देखते ही मधुसूदन उसे चाहने लगा है। खुलकर बात करने केलिए वह तैयार नहीं होता। स्त्री के प्रेति उनकी गलत मानसिकता है उनकी राय में "स्त्री को गंभीर और मितभाषी होना चाहिए। जो पूछा जाए बस, सो ही बतलाये और अपने काम-से-काम।"[27] पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता इसमें व्यक्त है। माँ की मृत्यु के बाद दमयंती फिर नौकरी में प्रवेश करना चाहती है। यह बात सुनकर मधुसूदन ने एक खत लिखकर कालेज के चेयरमान को भेजता है। उसमें उन्होंने अश्लील बातों का प्रयोग करके दमयंती के चरित्र पर अंकुश लगाने का प्रयत्न करता है। इस तरह का गढिया आचरण करके भी वह समाज में सही ढंग से जीता है। "स्टेशन पर पहूँचकर उन्होंने खत स्टेशन के बाहर ही पोस्ट किया और वापसी का टिकट कटाकर तुरंत लौट आये। इसके बाद वे महीनों बाद मंन्दिर गये और देर तक भक्ति-भाव से वह बैठा किये।"[28]

पुरूषवर्चस्ववादी समाज ने लड़कियों की चाल-चलन को तय करके रखा है। पुरूष जैसा चाहे वैसा कर सकता है। भारतीय समाज में लड़कियों के प्रति होने वाली मानसिकता को 'कुन्नू' कहानी में व्यक्त किया गया है। इसमें लेखिका ने कुन्नू नामक लड़की की बचपन से लेकर सयानी होने तक की मानसिकता को व्यक्त किया है। बचपन से ही उसके मन में कई प्रकार की शंकायें होती हैं। परिवारवाले उसके प्रश्न का उत्तर नहीं देते बल्कि उसे माँ भी हमेशा टोकती है। उसे किस प्रकार का वस्त्र पहनना है ये सब घरवाले ही निश्चय करते हैं। कुन्नू एक प्रकार की गुलामी का एहसास करती है। वह स्वतंत्र होना चाहती है। फिर भी असमर्थ होती है। "अब वह सयानी हो रही है, और उटंग फ्रोक पहनकर अकेले इधर-उधर डोलने फिरने की उसे कोई जरूरत नहीं। अगले दिन में दर्जी को बुलाकर उसके लिए सलवार-कमीज़ की नाप दे दी गयी थी, और पाप लीन की चार बास्कट जैसी तंग बंडियाँ, कुर्ते के भीतर पहनने का उसे आदेश हुआ था। बंडी पहनकर उसे लगता है उसके सीने पर किसी ने रस्सियाँ बाँध दी हैं........ और वह साँस नहीं ले पायेगी।"[29]

समाज में स्त्रियों को हमेशा दबा कर रखा जाता है। इसलिए जब कभी अवसर मिलने पर वह स्वतंत्र होकर सब कुछ करने केलिए तैयार हो जाती है। 'परियों का नाच ऐसा' कहानी में एक रूपक है जिसके तहत एक दिन केलिए सत्ता हाथ में आने पर स्त्रियाँ जो खेल रचती हैं, प्रतीकार्थ में खेल

अपने वर्ग के विरूद्ध पारंपरिक शोषण और दमन की स्थितियों को उजागर करते हैं। घर पर पुरुष के होते ही वे चुप रहती हैं। इसमें अपने अस्तित्व केलिए संघर्ष करने वाली स्त्रियों का चित्रण है।

स्त्री स्वतंत्र रूप से चितंन मनन करने लगी है। एक ओर स्त्री अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व और अस्तित्व को बनाये रखना चाहती है। पुरुष हमेशा स्त्री को अपने नियत्रण में रखने का आग्रह करता है। इसके विपरीत स्त्रियाँ स्वतंत्र रूप में सोचने लगती है तो पति-पत्नी के संबन्धों में विघटन आता है। आज भी पति पत्नी को अधिकृत संपत्ति के रूप में देखता है। अब भी अधिकांश स्त्री पति की आज्ञाकारिणी बनकर जीना चाहती है। कुछ स्त्रियाँ अपने ऊपर होने वाले शोषण से बचना चाहती है। 'एक स्त्री का विदागीत' की सुषमा पढ़ी-लिखी औरत है। घर का सारा काम करके वह नौकरी भी करती है। फिर भी उसे परिवार में कोई स्थान नहीं मिलता है। सास भी बहु और बेटी का भेदभाव हमेशा रखती है। वह ये सब सहकर जीना चाहती है।

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण भी नारी की मानसिकता में बदलाव आ गया है। मृणालजी ने 'कगार पर' कहानी में स्त्री का ऐसा रूप दिखाया है। वह पति से तलाक लेकर माँ-बाप के साथ रहना चाहती है। भारतीय संस्कृति में पले अपने पति को वह ठीक तरह समझ नहीं पाती है। एक साथ रहने से जो टकराहटें हुई है इससे स्वतंत्र होकर जीना वह चाहती है। भारतीय समाज में अब भी तलाक को पूर्णतया स्वीकार नहीं किया गया

है। तलाकशुदा नारी को संन्देह की दृष्टि से समाज हमेशा देखता है। आधुनिक नारी अब शोषण सहने केलिए तैयार नहीं है। लेखिका ने विदेश में रहने वाली नारी की मानसिकता को भी कई कहानियों में व्यक्त किया है। 'रूबी', 'कौवे' आदि कहानियाँ इसका उत्तम नमूने हैं।

स्त्री-पुरुष सम्बन्धी चिंतन के सदर्भ में तलाक संबन्धी विदेशी मानसिकता का आंकन भी मृणालजी की कई कहानियों में हुआ हैं। व्यक्ति मन का स्वातंत्र्य ही सब कुछ है। स्त्री स्वातंत्र्य को नकारने की वृत्ति का परिणाम है विधवाओं की ज़िन्दगी। विधावायें हमेशा समाज की निन्दा का पात्र बनती हैं। किसी भी विधुर की स्थिति इस प्रकार नहीं है। वह अपने इच्छानुसार विवाह कर सकता है। समाज का भय उसे नहीं है। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री और पुरुष दोनों केलिए अलग-अलग नियम हैं। इससे स्त्री की स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है। विधवा होते ही वह निन्दा का पात्र बन जाती है। समाज ने नारी पर बहुत सारी पाबन्दियाँ लगा दी हैं। इसके कारण वह नारकीय जीवन जीने केलिए अभिशप्त हो गई है। पुराने ज़माने में वह अपने ऊपर होने वाले शोषण सहते हुए जीती थी। अब उस मानसिकता में थोड़ा सा बदलाव आ गया है। वह अपना प्रतिशोध किसी-न-किसी प्रकार करना चाहती है।

'परियों का नाच ऐसा' कहानी में कंतु बुआ एक बाल विधवा है। वह भाई के घर में रहती है। विवाह केलिए घर के सारे पुरुष जाते वक्त वह घर के सारे काम छोडकर अन्य स्त्रियों के साथ मिलकर नाच-गाना करती है।

एक दिन की स्वातंत्रता में वह खुशियाँ मनाती है। संपत्ति साथ होने के कारण वह शोषण का शिकार नहीं बन जाती है फिर भी उसे अपनी सारी इच्छाओं को दबा कर रखना पड़ता है। घरवालों के साथ उसका संबन्ध अच्छा था। 'सुपारी बुआ' कहानी में एक विधावा की दर्दनाक ज़िन्दगी का चित्रण है। विधवा होने के कारण घरवाले भी उसे अलग रखते हैं। पति के घरवाले उसे मायके भेजते हैं। बीमारी सुपारी फुआ को घरवाले ले जाते हैं। वहाँ की भी ज़िन्दगी अच्छी नहीं है। "मेरे फिर हमारी बला से, हमारा क्या, हमने तो अपना कर्तव्य समझकर नेक सलाह दे दी। भाई-भौजाई कितने दिन किसके?"[30] घरवाले उसे मुक्ति देना चाहते हैं। भारतीय समाज में विधवाओं की ज़िन्दगी दर्दनाक ही है। विधवा होने से नारी अपना स्वत्व खो जाती है। यह मानसिकता पितृसत्तात्मक व्यवस्था का परिणाम है।

'हमसफर' कहानी में भी विधवा के हमसफर दैन्य और शोषण है। शराबी पति की मृत्यु के बाद निर्मला विधवा हो जाती है। अपने पुत्र के साथ वह पति के घर में रहती है। वहाँ वह पति के पिता और जेठानी के शोषण का शिकार बन जाती है। घर के सारे काम संभालते हुए भी उसे कई प्रकार की कठिनाइयाँ सहनी पड़ती हैं। वह अपने बेटे को पीटते हुए क्रोध का शमन करती है। "एक पूरी दुनिया को उसके हाथ मोड़ते झकझोरते चले जा रहे थे। "ले! ले! ले!" बेचारा बच्चा इस कदर घबरा गया था कि रो क्या, गुँगुआ भी नहीं पा रहा था।"निर्मला गाडी में जाते वक्त उसे पीटती है। यह देखकर सामने

बैठने वाले भी उसे कोसते हैं। इसमें निर्मला की मानसिकता का अंकन है। एक ओर विधवा होने का दु:ख है तो दूसरी ओर पति के घरवालों द्वारा शोषण के शिकार बनने का। वह अपने को स्वास्थ रखने केलिए इस प्रकार करने केलिए विवश होती है। मन में माँ का प्यार होने पर भी वह बेटे के सामने खुलकर प्रकट करने में असमर्थ हो जाती है।

'लेडीज़' कहानी में दंगे में पीडित लोगों तथा विधवाओं की सहायता करने वाली नारी का चित्रण है। बूढ़ी होने पर भी वह समाज सेवा करना चाहती है। बेटा इससे नाराज़ होता है। फिर भी वह अपना काम करती रहती है। साप्रदायिक दंगा होने पर अनेक कष्टतायें स्त्रियों को झेलनी पड़ती हैं। "कैसा ज़माना हो गया। "माँ अनमनी-सी बाहर ताक रही थी- "हर जगह खून-खराबा, लड़ाई-फसाद, गुस्सा, नफरत। पहले भाईचारा था। हिन्दु-मुसलमान-सिख-कभी ऐसा सोचा ही नहीं हम लोगों ने।"[31] यह सब देखकर माँ का हृदय द्रवित हो उठता है। माँ घर की चारदीवारी में बन्द रहना पसंद नहीं करती। वह अपने समय का सदुपयोग करना चाहती है।

'खेल' कहानी की बच्ची को भी असमय लड़की होने के बोध से गुज़रती हुई चित्रित किया गया है। वह अपने भाई से कहता है "तुम लड़के लोग होते ही ऐसे हो। पहले सब सामान इधर-उधर करवा के घर-घर बनाते हो,फिर सँभालते वक्त खुद बाहर भाग जाते हो- सब हमारे सिर छोड़कर-"[32]

इसमें लड़के और लड़कियों की मानसिकता को व्यक्त किया गया है। खेलते वक्त लड़के उसमें शामिल होना नहीं चाहते। लड़की कई प्रकार के खेल खेलने केलिए उसे बुलाने की कोशिश करती है। उसे उसमें कोई रूचि नहीं होती है। पितृसत्तात्मक समाज में हमेशा लड़कों को ही ऊँचा स्थान प्राप्त है। अपने मन पसंद खेल भी वे खेलते हैं बच्चों में भी समानता का भाव नहीं है।

मृणालजी के 'ढलवान' कहानी उच्च वर्ग से संबद्ध है। इसमें मौसी के द्वारा भारतीय नारी पर निर्दिष्ट आचार संहिता को भी उजागर किया गया है। समाज स्त्री केलिए कई प्रकार के नियमों का गढ़न किया है। मौसी का कथन है कि "लड़कियों को बहुत ऊँची आवाज़ में हँसना-बोलना शोभा नहीं देता, खासकर लड़कों से।"[33] एक ओर पितृसत्तात्मक समाज द्वारा कल्पित नियमों का पालन करती मौसी का चित्रण भी है। इसमें लड़की अपने दोस्तों से हँसकर बोलती ही नहीं वह उच्च शिक्षा प्राप्त करने की कोशिश भी करती है। इनकी 'टेलर मास्टर' कहानी में अविवाहित कामकाजी स्त्री के प्रति पुरुष नज़रिए की विडम्बना का आंकन हुआ है।

'रिक्ति' कहानी की स्त्री संगीत प्रतिभा से संपन्न है। वह पति की रूढिवादिता से अपने अतंर्मन की बातें कह नहीं पाती। अपनी प्रतिभा से समझौता करती है। अपनी अतंर्मन की बातें वह बच्चों से कहती है "क्योंकि मेरे पिता नहीं थे, पीछे चार और बहनें थीं, फिर तुम्हारे बाबूजी के पास पक्की

सरकारी नौकरी थी, अपना मकान था, और कुछ जो क्या देखते थे लड़कों में उस ज़माने में? आगे तो लड़की का अपना भाग होता है। भाभी ने भी कहा था तुम्हारी नानी वैसे ही चिंता में अधमरी होती जा रही थी, कि इतनी पढ़ी-लिखी, इतने बड़े घराने की बेबाप की अठारह बरस की लड़की कौन ब्याहेगा, उस वक्त पन्द्रह बरस से पोढी लड़की को घर-घर कहाँ जुटते थे?- फिर सर पर बाप भी नहीं-"[34] यहाँ समाज की रूढ़ियों का पालन करने वाली नारी का अंकन है। वह भी स्वतंत्रता चाहती है।

मृणालजी की ‘कोहरा और मछलियाँ’, ‘उमेश जी’,’चेहरे’, ‘शब्दवेदी’, ‘लकीरें’, ‘मीटिंग’, ‘बिब्बो’,’एक नीच ट्रजेडी’, ‘चार नम्बर की बाग लेन’ आदि कहानियों में चित्रित नारियाँ उच्च एवं मध्य वर्ग से संबद्ध रखा हैं। ये स्त्रियाँ शिक्षित एवं स्वतंत्र चितंन वाली भी हैं। फिर भी इन कहानियों के स्त्रियाँ किसी न किसी विड़म्बनाओं से गुज़रती दिखाई देती है। मृणालजी की पहली कहानी है ‘कोहरा और मछलियाँ’। इस कहानी की माँ के स्वच्छंद जीवन से बेटियों को तंग ही मिलता है। इस कहानी की बेटी बानो अपनी माँ की स्वच्छंद प्रवृत्ति के प्रति रति के सम्मुख आक्रोश व्यक्त करती है “एनीथिंग जस्ट टु गेट अवे फ्रॉम ममीज स्टैग्नेण्ट डेन”(ममी की इस दूषित माँद से बच भागने को मैं कुछ भी कर सकती हूँ)।“[35]

मृणालजी ने 'एक थी हंसमुख' कहानी में परियों की कथा के माध्यम से नारी की स्थिति को चित्रित किया है। हँसमुख गुरू के सामने भी प्रश्न करती है। पुराने ज़माने में स्त्रियों केलिए कई आचार संहितायें गढ़ी गयी थीं ऋषि-मुनि औरतों की परछाई पड़ने पर गंगास्थान करते हैं। हँसमुखी गुरू के सामने प्रश्न करती है कि "गुरूजी, आप अपनी माँ के पेट से निकलकर भी क्या गंगास्नान करने ही भागे थे? दूध क्या आप बैल का पीते हैं? धरती भी तो स्त्रीजाति है, अब आप उसके सीने पर उपजा अन्न कैसे ग्रहण करते हैं? राजगुरू इस वामा तर्क से आगबबूला हो गये। कमंडल दंड उठाकर बोले- "इस महल में या तो मेरा ही निवास होगा। या इस वाचाल कन्या का!"[36] इसमें नायिका किसी भी परिस्थिति में हार मानने केलिए तैयार नहीं है। हर मुश्किल परिस्थिति में उसे खुशी में रहने केलिए संघर्ष करना पड़ता है। परियों की कहानी के ज़रिए लेखिका यह बताना चाहती है कि नारी को अपनी अस्मिता को कायम रखने केलिए हमेशा संघर्षरत होना चाहिए।

4.3.2. नौकरीपेशा नारी:-

नारी शिक्षा के माध्यम से अपने आस-पास के यथार्थ का ही नहीं दुनिया भर की वास्तविकताओं का सही का परिचय मिलता है। नारी शिक्षा उसके व्यक्तित्व रूपायन में बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। शिक्षा प्राप्त करके नारी नौकरी करना चाहती है। नौकरी करके वह स्वावलंबी होने का आग्रह

भी करती है। कठिन परिश्रम और आत्मविश्वास के साथ वह नौकरी में प्रवेश करती है। धन कमाकर वह अपने इच्छनुसार ज़िन्दगी गढ़ने का प्रयास करती है। वहाँ भी उसका शोषण होता रहता है। अपनी अस्मिता को कायम रखने केलिए संघर्ष करने की आवश्यकता भी बढ़ती है। घर और दफ्तर के काम दोनों उसे सँभालने पड़ते हैं। धन कमाती है तो भी उसको अपनी आमदनी पर कोई अधिकार नहीं होता। इससे अशांति का वातावरण पैदा होता है। नौकरीपेशा नारी का जीवन एक नया पहलू है। समकालीन लेखिकाओं ने उस विषय पर चर्चा भी की है। मृणालजी ने भी अपनी कहानियों के माध्यम से नौकरीपेशा नारी की दर्दनाक अवस्था को पेश किया है। सामाजिक व्यवस्था में बदलाव लाने केलिए नारी को शिक्षा प्राप्त करना और स्वतंत्र रूप से विचार करना भी है। अपने ऊपर होने वाले शोषण के विरूद्ध बोलने वाली स्त्री चरित्र भी उनकी कहानियाँ में हैं।

नौकरीपेशा नारी की हालत बिलकुल कष्टदायक है। मृणालजी ने ‘एक स्त्री का विदागीत’ कहानी के माध्यम से नौकरीपेशा नारी के दो चित्र प्रस्तुत किये हैं। पहला चित्र नौकरी और घर को एक साथ सँभालने केलिए असमर्थ नारी का चित्र है। स्टाफ रूम में अन्य अध्यापकों के बीच का संवाद है “अगर रमला बच्चे के कारण काम नहीं कर सकती तो बेहतर है इस्तीफा दे-दे-गद्दी क्यों धरे हुए है? आखिर बच्चा उसका है, कालेज का तो नहीं? छह महीने के बच्चे की माँ रमला दास, अंग्रेजी प्राध्यापिका और माँ का दोहरा रोल निभाती

अक्सर दोनों में गच्चा खाती ,खाती रह जाती थी।"[37] सुषमा और एक पात्र है। वह भी सास और परिवार के सभी कामों को सँभलाते हुए आगे चलती है। वह सब प्रकार की कष्टतायें सहते हुए भी अपने इच्छानुसार बच्चों को शिक्षा देती है। "सुषमा ने अपनी इच्छानुसार बेटों को ऊँची फीस वाले होस्टल में, घर से जितनी दूर भेजा जा सकता था, भेज दिया था। उसकी ज़िद थी कि वह चाहे जैसे रहे, बच्चे उसके अंग्रेज़ी माहौल में ही पलें ताकि उनका भविष्य......."[38] सुषमा आधुनिक नारी का प्रतीक है।

नारी नौकरी करके धनार्जन करती है। पुरुष हमेशा स्त्री पर अपना अधिकार जमाकर रखता है। पत्नी की नौकरी से मिले धन लेकर वह आराम से जीता है। इस प्रकार नारी का शोषण संभव है। 'पितृदाय' कहानी की स्त्री विदेश में काम करने वाली है। वह शिक्षित नारी है। वह घरवालों से अपनी बात बताने में असमर्थ दिखाई पडती है। "उसका नीग्रो पति, जो सिर्फ बेकारी का सरकारी मेहनताना खा रहा था, अपनी डॉक्टर पत्नी से तलाक के एवज में भरपूर हरजाना ऐंठने पर उतारू था।"[39]

घर की गरीबी को मिटाने केलिए स्त्रियाँ नौकरी करने केलिए विवश हो जाती हैं। उसे एक ओर गरीबी का कष्ट झेलना है तो दूसरी ओर नौकरी केलिए जाते वक्त दफ्तर से भी पीडायें सहनी पडती हैं। काम करने केलिए जाते वक्त वहाँ के अफसरों से भी शोषण सहना पडता है।

मृणालजी ने ‘उमेशजी’ कहानी में आज के दफ्तर में काम मिलने केलिए किस प्रकार की कष्टतायें निम्नवर्गीय स्त्रियों के साथ होती हैं उसका चित्रण किया है। घर की स्थिति अच्छा न होने के कारण माँ के निर्देशानुसार नायिका उमेश जी के पास जाती है। वहाँ उसे कई देर तक प्रतीक्षा करना पडता है। वहाँ उसे कई देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। वहाँ नौकरी पाने केलिए आने वाली लड़कियों के साथ वह हमेशा बुरा व्यवहार करता था। “उमेश जी से नौकरी माँगने को आने वाली हर लड़की के साथ इस दफ्तर में ऐसा ही जलालत भरा बर्ताव होता होगा। कमाल है, फिर भी लड़कियाँ आती हैं, नौकरी माँगने, जैसे कि खुद मैं”[40] इससे व्यक्त होता है कि शोषण सहकर काम करने केलिए जाना स्त्री की विवशता है। किसी भी प्रकार वह स्वतंत्र रहना या घर को सँभालना चाहती है। समाज में ऐसे पुरुष भी पाये जाते हैं जो स्त्रियों से काम करवा के शोषण की शिकार बनाते हैं। उसके चाल चलन पर किसी भी व्यक्ति उँगली नहीं उठाती। नारीयों को वे हमेशा अपने साथ रखते हैं सिर्फ भोग वस्तु की तरह। वह अपने अधिकार का दुविनियोग करता है। पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता को भी इसमें दर्शाया गया है- ‘ये नौकरी केलिए बिना कोशिश किए नौकरी पाना चाहती हैं!,दफ्तर के अन्य लोगों के सामने वह इस प्रकार कहता है। कोई भी इसके बदले एक शब्द भी नहीं बोलते सिर्फ हँसते हैं। “क्या-क्या कर सकती हो?” उनका सुर मेरी कनपटियों पर भाप-सी छोडने लगा।

भाप में पायरिया की सडांध थी।“घर से कैसे आई”।[41] इसमें नारी की शोचनीय स्थिति व्यक्त है। समाज में होने वाले इस प्रकार के अन्याय के विरूद्ध सोचने का अवसर लेखिका प्रदान करती है।

नारी आत्मनिर्भर रहने केलिए नौकरी की तलाश में जाती है। नौकरी से मिलने वाले आमदनी भी वह खुद खर्च करने में असमर्थ है क्योंकि परिवार वाले उससे पैसा मांगते ही रहते हैं। यह, समाज में मौजूद शोषण का एक और दर्दनाक रूप है।पुरुष अपने धन किसी भी प्रकार खर्च कर सकते हैं। स्त्रियों को ऐसा नहीं करने देते। लेखिका ने इससे अलग एक स्थिति को हमारे सामने पेश किया है। ‘चिमगादडें’ कहानी में बूढ़ी माँ गरीबी से ग्रस्त है वह हमेशा अपने पैसा दूसरों को नहीं देती। बेटी कमाती है। वह घर सँभालती है। लड़की की मानसिकता को यहाँ व्यक्त किया गया है “मर खप कर अस्सी रुपया स्कूल से कमाती हूँ, उसके भी सौ हिस्सेदार हो जाते हैं। अपने धोबी का हिसाब मैं अलग से करूँ। बस का किराया अपने पैसों से दूँ। धेले का क्रिसमस प्रेजेण्ट तो मिलना दूर, उस पर उधार माँगने को सब तैयार। ममा से क्यूँ नहीं कहती सीधे? मेरी मारिया तो सारे वक्त कहती रहती है बुढ़िया! हँह ....कोई घर है यह भी?”[42] इसमें लेखिका ने नौकरीपेशा लड़की की वेदना को स्पष्ट किया है। वह माँ को पसन्द करती है फिर भी गरीबी की अभावग्रस्तता उसे कुपित बनाती है। ‘बिब्बो’ शीर्षक कहानी में

बिब्बो नामक नौकरानी की कथा है। गरीबी से त्रस्त बिब्बो काम तलाशती हुई एक उच्चवर्गीय परिवार में आती है। वहाँ उसे मालिकिन शिक्षा देना चाहती है उसे इसमें कोई रूचि नहीं होती। उसे एक ब्यूटीशियन से ट्रेंनिग दिलवाती है उसके बाद उसके व्यवहार में भी बदलाव आ जाता है। घर वालों केलिए वह एक बोझ बन जाती है। इसमें लेखिका यह बताना चाहती है कि गरीबी में रहते वक्त उसकी आशायें –आकाक्षायें व्यक्त न कर पातीं। यहाँ आकर वह स्वतंत्र हो गयी है। इसलिए मानसिकता में बदलाव आ गया है। 'लेड़ीज टेलर' कहानी में अविवाहित कामकाजी नारी के प्रति पुरुष की छेड-छाड को दर्शाया गया है। अविवाहित कामकाजी नारी की स्थिति भी अत्यंत दर्दनाक है। काम करके स्वस्थ जीवन चाहने वाली नारी पर भी पुरुष छेड-छाड़ करता है। उसका किसी लड़के से बोलना भी शंका की दृष्टि से ही देखा जाता है। पितृसत्तात्मक समाज की निकृष्ट मानसिकता यहाँ व्यक्त है।

मृणालजी ने अपनी कहानियों को नारीवादी दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया है। वे पुरुष के विरोध में खड़ी होने का संन्देश नहीं बल्कि समाज में अपना हक हासिल करने केलिए पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता से लड़ने का आह्वान देती हैं। उनकी राय है कि नारी अपनी अस्मिता को कायम रखने केलिए हमेशा संघर्ष लगे रहे । कहानियों में स्त्रियों का शोषण दिखाकर उसे सजग और सतर्क रहने का आह्वान लेखिका देती है। स्त्री लेखन वास्तव में स्त्री अस्तित्व बोध की पहचान कराता है। स्त्री आज पुराने ज़माने का नहीं है। वह प्रश्न करने वाली है। वह चुपचाप अन्याय, अत्याचार और शोषण को सहने

केलिए तैयार नहीं रहती। इस प्रकार की असामाजिक वृत्तियों के खिलाफ संघर्ष करती है। यह प्रवृत्ति उनकी आत्मबोध की पहचान है। इस प्रकार के विचार को बढ़ाने की कोशिश लेखिका करती है।

मृणालजी ने पाश्चात्य संस्कृति में पली नारी का चित्रण भी किया है। भारतीय नारी की अपेक्षा वे हमेशा स्वतंत्र रहना चाहती हैं। दो संस्कृतियों के बीच होने वाली टकराहट को भी लेखिका यहाँ प्रस्तुत करती है। 'कगार पर' कहानी की पत्नी इसका उदाहरण है। दोनों अपने-अपने संस्कारों में बन्धे रहने के कारण समझौता नहीं करती है। वह उससे तलाक लेकर माँ-बाप के पास रहने का निश्चय लेती है। कुछ कहानियों के पात्र ऐसे हैं। इसमें अस्मिता केलिए प्रयत्न करती नारी का चित्रण है। भारतीय संस्कृति में पली नारी हमेशा शोषण का शिकार बनती है। वह समझौता करके ज़िन्दगी बिताती है। लेखिका ने दोनों प्रकार की नारी ज़िन्दगी का चित्र हमारे सामने पेश किया है। स्त्री जीवन के विविध पहलुओं को उन्होंने लिया है। आज के स्त्री समाज ने यह बात पहचान ली है कि पुरुष वर्ग सदियों से स्त्रियों के साथ खिलवाड कर रहा है। कहानियों के माध्यम से लेखिका ने प्रस्तुत सामाजिक स्थिति को हमारे सामने प्रस्तुत करके उस पर सोच-विचार करने केलिए प्रेरित करती है। नारी को अपने समय के अनुसार बदलना अनिवार्य है। अपनी पहचान को उजागर करने केलिए संघर्ष जरूरी ही है।

4.4. पाश्चात्य संस्कृति का बढ़ता प्रभाव:-

भारत आज़ाद होने पर भी भारतीयों की मन:स्थिति बदली नहीं है। भारतीय संस्कृति की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि वह सब कुछ ग्रहण कर सकती है। पुराने ज़माने में भारत कई विदेशी शक्तियों के अधीन में था। विदेशी दासता से मुक्त होने पर भी पूरी तरह स्वतंत्रता नहीं मिली है। अंग्रेज़ी शिक्षा के माध्यम से पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव इधर पडा था। पाश्चात्य संस्कृति के अच्छा मूल्यों को हमें पहचानना चाहिए। आज के ज़माने में हम भारतीय अपने मूल्यों को छोडकर पाश्चात्य संस्कृति को ग्रहण कर रहे हैं। इस प्रकार करने से हमारा स्वत्व भी नष्ट होता है। मृणाल पाण्डे जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से बढ़ती पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव को दर्शाया है। इससे नष्ट होने वाले मूल्यों का अंकन करके हमें सजग बनाने का कार्य किया है।

'जगह मिलने पर साइड दी जाएगी उर्फ तीसरी दुनिया की प्रेमकथा' कहानी में इसका उदाहरण पेश किया गया है। आज की युवा पीढ़ी फैशन परस्त हो गयी है, वह माँ-बाप के साथ रहना नहीं चाहती। उसे मात्र पैसा देने की वस्तु मानती है। हमेशा नशीले पदार्थों के इस्तेमाल करके इधर-उधर घूमना चाहती है। वह पिता को बाप और माँ को ओल्ड लेडी कहकर संबोधन करती है। यह मात्र लड़कों की स्थिति नहीं है लड़कियाँ भी इसमें शामिल है।“धौल-धप्पेबाजी में वे लड़कों से बीस ही पड़ती थीं और लड़कों के सामने

अपने अंतर्वस्त्र सँभलने या गला, पीठ वगैरा खुजाने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता। बडे हक भरे भाव से लड़कों की जेबों या झोलों में हाथ डालकर सिगरेटे निकाल लेती थी, और फिर सिगरेट सुलगाकर कुछ देर तंद्रिल आँखों से क्षितिज को ताकती बैठी रहती थीं।"[43] इसमें पाश्चात्य लोगों के अनुकरण करने वाले युवा वर्ग का चित्रण है। भारतीय संस्कृति के अनुसार माँ-बाप आदर के पात्र हैं। पाश्चात्य संस्कृति के कुप्रभाव के कारण युवाजन जन्म देने वाले माँ बाप को भूल जाते हैं। तेज़ी से बढ़ती ज़िन्दगी में, पैसा कमाने की दौड में माँ-बाप भी शामिल है। बच्चों को पालने केलिए उसके पास समय नहीं रहता। इसका नतीजा यह होता है कि युवा पीढ़ी दिशाहीन बन जाती है।

'कोहरा और मछलियाँ' की माँ भी पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने वाली है। नारी का आधुनिक रूप इसमें प्रस्तुत है। माँ हमेशा फिल्मी दुनिया में विचरण करती है। पति के बीमार पड़ने पर भी वह पति के दोस्त के साथ रिश्ता जोड़ती है पार्टियों में जाकर खुशी से रहना चाहती है। पति लेखक है। इसलिए इटरव्यू लेने केलिए आने वाले लोगों के सामने वह पति की सेवा में जुटी रहती है। बच्ची भी माँ से दूर भागने के कारण व्यक्तियों के बीच का रिश्ता भी मूल्य हीन बन जाता है।

'दुर्घटना' कहानी में भी संस्कृति में आने वाले बदलाव हम देख सकते हैं। गाँव में रहने वाले माँ-बाप, माँ के इच्छानुसार अंग्रेज़ी शिक्षा केलिए शहर

में बसते हैं। बडे बेटे विदेश में पढ़कर वहाँ की लड़की से शादी भी करता है वह भी वहाँ की संस्कृति को अपना लेता है। वृद्ध पिता बेटे और बहू की गाड़ी से टकराकर मृत्यु को वरण करता है। पिता की मृत्यु की खबर सुनकर भी उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। रिश्तों में आने वाली दरारों को यहाँ व्यक्त किया गया है।

'पितृदाय' कहानी के पिता विदेश में रहता है और विदेशी वस्तुओं को पसंन्द करता है। बेटे और बेटी को अंग्रेज़ी शिक्षा देकर वह विदेश भेजता है। वह कभी भी उसे गाँव वापस नहीं आने देता है। विदेश में घूम कर आने पर उसे हिन्दुस्थान पसंन्द नहीं आता है।"फिर अमरिका घूम आने के बाद के हिन्दुस्थानी अस्पतालों पर उनका विश्वास कतई नहीं रहा था। वैसे अस्पताल ही क्या, किसी भी हिन्दुस्थानी चीज़ पर उनका विश्वास नहीं था शुरू से ही।" पुत्र भारत में जीना चाहता है। इसमें भी संबन्धों में आने वाले टकराहट को दर्शाया गया है।

दो संस्कृतियों के बीच का टकराहट व्यक्तियों के बीच भी हो जाती है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव दिखाते वक्त लेखिका ने भिन्न-भिन्न संस्कृतियों पर पले व्यक्तियों के मिलन से उत्पन्न दरारों का चित्रण भी किया है। 'कौवे', कगार पर जैसी कहानियाँ इसके उत्तम नमूने भी हैं। संस्कृतियों के बीच होने वाला संघर्ष पति-पत्नी के बीच भी हो सकता है। पाश्चात्य संस्कृति

में पली नारी हमेशा स्वच्छन्द रहना चाहती है। वह कभी भी भारतीय रीति-रिवाज़ के अनुसार जीना नहीं चाहती है। इसलिए वह तलाक लेकर अपनी ज़िन्दगी जीती है। हमें भी अपनी संस्कृति के मूल्य को पहचानना जरूरी है। लेखिका ने भारतीय संस्कृति के महत्व पर ज़ोर देते हुए अच्छे मूल्यों को अपनाने का सुझाव भी प्रस्तुत किया है।

4.5. मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों की आंड़बर प्रियता:-

समाज मुख्यत: तीन वर्गों में बाँटा गया है। उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग। मध्यवर्ग हमेशा अपने ऊपर के उच्च वर्ग के अनुसार अपने को ढालने का प्रयत्न करता ही रहता है। मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों पर आड़म्बर प्रियता भी देखने को मिलती है। 'बिब्बो' कहानी में एक ओर लेखिका ने गरीबी से त्रस्त होकर नौकरानी बनने वाली बिब्बो का चित्रण किया है। दूसरी ओर मध्यवर्गीय नारी की प्रदर्शन प्रियता को दर्शाया है। मालिकिन बिब्बो को ब्यूटीशियन कोर्स सिखाती है। अपनी इच्छा के अनुसार उसे बदलने की कोशिश करती है। घर के काम करने के बदले बिब्बो भी घर आने वाले लोगों का ख्याल रखती है। घर का सारा काम बिगड जाता है। मालकिन अंत में उसे घर वापस भेजने केलिए विवश हो जाती है। पति उस समय व्यंग्य करके कहता है कि "पर फिर तुम्हारा काम कौन करेगा?"[44] पति ने एक खैरख्वाह मित्र की गरमाहट-भरी दृष्टि से पत्नी का नाजुक जिस्म निहारा। "कोई यही की

बूढ़ी बाई मिल जायेगी ज़्यादा पैसा देकर ! तुम चिंता न करो। सिर्फ इसे भर पैक ऑफ कर दो वरना खानसामा इसे लेकर किसी भी दिन छोडकर चल देगा, फिर क्या होगा?"घर में दो ही प्राणी हैं। समाज में ऐसे ही लोग हैं स्टाटस को बनाये रखने केलिए घर का छोटी सी काम करने केलिए नौकर को रखते है। इसमें मालकिन की आडम्बर प्रियता पर गिल्ली उठाने का काम लेखिका ने किया है।

'प्रेमचंद:जैसा कि मैं ने उन्हें देखा' में सेमिनारों में होनेवाली प्रदर्शन प्रियता को लेखिका ने प्रस्तुत किया है। समारोहों में होने वाले आंडम्बर प्रियता को इसमें व्यंग्य के रूप में उकेरा गया है। समारोहों में लोग अपना प्रदर्शन दिखाते खडे हो जाते हैं। प्रेमचंद को लेकर चर्चा होती है। वे प्रेमचंद की कहानियों की तारीफ भी करते हैं। मुख्य अतिथि के जाने के बाद वहाँ इकटठे हुए लोगों के बीच भी चर्चा ज़ारी है। "मुझ पर उनकी 'दो बैलों की कथा' पढकर देर तक घोर डिप्रेशन रहा।"[45] इस प्रकार की बातें करने वाले लोग बाहर सामने खडी ज़िन्दगी को अनदेखा करते हैं। "बाहर चिलकती धूप में मुँह खोले गौरैया गटर पर हॉफ रही है। नल सूखे पडे हैं, कूडे की गाडी न आने से कुत्ते-बिल्लियाँ बहुत खुश हैं, भिखारियों के बच्चे भी कौवे भी। लूटपाट का एक हँसमुख महोत्सव उनमें चल रहा है। कॉर्नफ्लेक्स के पिचके खाली डिब्बे को ताज की तरह सिर पर धरे एक काला अधनंगा बच्चा मलबे के ढ़ेर पर खडा

ज़ोरों से रेंट सुडककर अपने साथियों से कहता है-“ देखो बे मैं राजा हूँ। खी-खी-खी” प्रजा राजा पर कचडे की वर्षा करती है, फिर राजा और प्रजा पेट बजाकर लौ-स्टोरी के गाने गाने लगते हैं। धूप हम सब पर आशीर्वाद-सी बरसती है। लगातार! मैं ने प्रेमचंद जी को पा लिया है अपने समय के ऐन बीचोंबीच।“[46] समाज में सुधार लाने का प्रयत्न प्रेमचंद जी ने किया था। आज उसकी साहित्य की चर्चा होती है। इसकी अंतर्सत्ता कोई पहचानता नहीं। शोषितों के प्रति सहानुभूति का भाव कहानी पढ़कर मन में आता है, किंतु बाहर दिखाने में असमर्थ है।

‘मीटिंग’ कहानी में भी प्रदर्शन प्रियता को दर्शाया गया है। बडे-बड़े अफसरों शिक्षाविदों, भाषाविदों, प्रकाशकों आदि के बीच में मीटिंग चलती हैं। मीटिंग में भाग लेने केलिए कई लोग आये हैं। भाषण देते वक्त सुनने वालों की हालत को भी कहानी में यों व्यक्त किया गया है “एक चपरासी मुस्तैदी से पानी की ट्रे लिये पंक्तियों के बीच तिर रहा है, गिलास पकड़ती उगलियां-अंगुष्ठ तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा-पन्ने फिर पलटे जाते हैं। अब सिर्फ चार पन्ने ओर हैं। कुछ लोग जमुहाई ले रहे हैं- डबडबायी आँखों से इधर-उधर ताकते। उसे जमुहाई लोग बहुत प्यारे लगते हैं, असहाय और आत्मलिप्त। वह

भी जमुहाई लेती है।"[47] इसमें लेखिका मीटिंगों में चलने वाले कार्यक्रम के खोखलापन को दिखाने का प्रयास किया है।

4.6. पारिस्थितिक सजगता:-

प्रकृति से मानव का रिश्ता बहुत गहरा है। प्रकृति के बिना मनुष्य नहीं है। पर्यावरण संपूर्ण जीव-जगत को सूचित करने वाले सामाजिक घटक है। पुराने ज़माने से ही मानव और जानवरों के बीच आत्मीय संबन्ध था। आधुनिक दौर में हर कहीं बदलाव या परिवर्तन हो रहा है। मनुष्य अपनी स्वार्थपूर्ति केलिए वस्तु का उपयोग करते हैं। उपयोग-शून्य वस्तुओं को निर्दयता से बाहर फेंक देते हैं। मानवीयता का ह्रास हर कहीं अब देखने को मिल रहा है। मृणालजी ने कहानियों के ज़रिए इस प्रकार के मुद्दों पर विचार करने का उपदेश दिया है। नष्ट होती आत्मीयता की ओर लेखिका ने इशारा किया है। परिस्थिति के संतुलन केलिए कार्य करने का भी आह्वान उन्होंने दिया है।

'कुत्ते की मौत' कहानी के ज़रिए नष्ट होती आत्मीयता का अंकन किया गया है। कुत्ते के पिल्ले को उठाकर घर ले आते हैं। वहाँ उसे पालते हैं। जल्दी ही पिल्ले घरवालों से मिलजुलते हैं। अब लोग कुत्ते को नस्ल देखकर ही पालते हैं। पिल्ले बड़े हो जाते हैं। वह सबसे अच्छा संबन्ध रखता है। कुत्ता वफादार जानवर है। फिर भी एक बार खिलवाड़ करने से कुत्ता माँ को काटता है। यह

खबर सुनते ही पिता चिकित्सक के पास जाते हैं। इसमें पशु चिक्तिसक की मानसिकता को भी दर्शाया गया है। निरीह प्राणियों के पर वे भी अत्याचार करते हैं। "मेरी राय में आप इसे खतम करवा दें तो ठीक रहेगा। स्वभाव तो अब इसका दवा-दारू, विटामिन किसी से बदलेगा नहीं। बच्चों का क्या है! बढ़िया नस्ल का दूसरा ला दीजिए, दो दिन में पूछेंगे भी नहीं कि कहाँ गया। देसी कुत्ता ही तो है। किसी को काटा तो नहीं इधर इसने?"48

इसमें जानवरों पर किये जाने वाले अत्याचारों का चित्रण है। लोग अपनी इच्छानुसार या स्वार्थाता केलिए जानवरों से आत्मीयता रखते हैं। इस कहानी के अंत में कुत्ते को जहर देकर मारा जाता है। मानव की क्रूरता यहाँ ज़ाहिर होती है। "मरना तो उसे था ही, मरवा दिया, सो ठीक किया। बाल्कनी की औरतों में से किसी एक ने कहा-"अरे कुत्ता हो तो कुत्ते की औकात में रहे। कुत्ता भी आदमी जैसा तुनक मिज़ाज़ हो जाये तो हम लोग पालतू बनाकर किसे रखेंगे, है कि नहीं?"49 लेखिका ने प्रस्तुत वाक्यों के द्वारा मनुष्य के सलूकों पर व्यंग्य किया है। लेखिका यह प्रश्न करती है कि माँ को काटनेवाला जंगली कुत्ता दोषी है या अपने को बुद्धिजीवि मानने वाले और कुत्ते को मृत्यु की सजा देने वाला मानव?

आज के ज़माने में रिश्तों में टूटन हम देख सकते हैं। अच्छे मूल्य और मानवीयता के लुप्त होते इस समय में भी जानवरों के साथ बच्चों के अच्छे

आत्मीय संबंध देखने को मिलता है। 'एक पगलाई सस्पेस कथा' में लेखिका ने बच्चों के साथ जानवरों की आत्मीयता को दर्शाया है। माँ-बाप की मृत्यु के बाद विष्णुप्रिया अनाथ हो जाती है। वह अमीर रिश्तेदारों के घर में लायी गयी है। वहाँ के लोग उसकी देख-भाल करना नहीं चाहते हैं। फार्म के मज़दूरों केलिए बनाई झोंपडी में उसे रहना पडता है। वहाँ किसी भी लोगों के साथ उसका कोई रिश्ता नहीं था। विष्णुप्रिया की अकेली ज़िन्दगी में कुत्ता ही उसे साथ देता है। "फारम पर रिश्तेदारों के अलवा उनके ठीक विपरीत, दिखाने में खूंखार, पर भीतर से बेहद प्रेममय जर्मन कुत्तों की स्याह जोडी भी थी। कुत्तों में एक नर था और एक मादा। वे लहीम-शहीम थे और कुत्तिया को तो पिल्ले भी होने वाले थे। अनेक पिल्ला-भ्रूणों के बीहड भार से दोहरी देह और समोसों से लटके स्तनों समेत इधर-उधर डोलती कुतिया विष्णुप्रिया को अपने पीछे छूट चुके शहर की भरी-भरी बसों जैसी लगती थी। कुत्तों ने उसे बड़े प्यार से अपना लिया।"[50]

विष्णु प्रिया की अकेली ज़िन्दगी में एक साथी के समान कुत्ता आता है। दोनों क बीच की आत्मीयता भी बहुत बढ़िया है। "कुत्तों की दुनिया में विष्णुप्रिया केलिए ठौर थी। खाल, रोम और मांस की बास इस गर्म दुनिया में आशा-हताशा, इच्छा या अनिच्छा, कुछ नहीं था, सिर्फ हुम्फनी लेता एक

गीला सौहार्द्र था, जो भोजन आने पर कुछ देर दोनों तरफ स्थगित हो जाता। वे साथ ही हल्की नींद सोते, खेलते, इंतजार करते, सोते।"[51] इस में एक ओर लेखिका ने छोटी बच्ची को जानवर से होनेवाली आत्मीयता को दर्शाया है तो दूसरी ओर कुत्ते की ज़िन्दगी जीने वाली अनाथ बच्ची की मानसिक तनाव का भी चित्रण किया है। 'कुन्नू' कहानी में कुन्नू चिडियों को पसंद करती है। चिडियाँ खुले आसमान में विचरण करती हैं। कुन्नू भी चिडियों की तरह स्वतंत्रता चाहने वाली है। फिर भी लड़की होने के कारण उसे परिवार वाले पुरानी रुढ़ियों से मुक्त नहीं करना चाहते हैं।

स्त्री भी प्रकृति का एक प्रतिरूप ही है। प्रकृति और स्त्री आज हमेशा शोषण के शिकार बनती है। जिस प्रकार प्रकृति से मानव का आपसी रिश्ता गहरा है, उसी प्रकार स्त्री और बच्चों के बीच का रिश्ता गहरा है। पत्नी के रूप में शोषण सहते वक्त भी वह बच्चों से अधिक प्यार करती है। माँ और बच्चों के बीच के अच्छे रिश्तों को भी मृणालजी ने अपने कहानियों में व्यक्त किया है। 'व्यक्तिगत' नामक कहानी में बेटे और माँ का संबन्ध दोस्त के समान है। पिता हमेशा आदेश देता ही रहता है। बेटा हमेशा पिता से डरता है। स्नेह प्रकट करने में वह भी असमर्थ है। पति और पत्नी के बीच भी चुप्पी रहती है। 'चिमगादडें', 'दोपहर में मौत' जैसी कहानियों में भी माँ का बच्चों के प्रति होने वाले प्रेम को दर्शाया गया है। शोषण के शिकार बनने पर भी प्रकृति और स्त्री हमेशा मानव से अच्छे संबन्ध रखने की कोशिश करती है।

'बीज' कहानी में लेखिका ने आज की किसान की व्यथा को उठाया है। बड़े-बड़े कृषि अफ्सर आकर उसे देशी बीज के बदले अमरीकी बीज बोने का आदेश देते हैं। परिस्थिति से मिल जुलकर रहने वाले किसान इसके लिए तैयार नहीं होते हैं। इस प्रकार के अनाज बोने से या कीटनाशक का प्रयोग ज़्यादा करने से मिट्टी की गंध नष्ट हो जाती है।"तुम्हारे कीटनाशकों ने जो क्या मारा कीड़े को। चौमासे में जोरदार बरखा हुई तब वो वह के गया। तब तक फसल बरबाद हो चुकी थी हमारी। और आर्थिक समुदाय का बीज तो साला हमने जितना बोया उतना भी धान नहीं मिला। इससे अच्छा तो अपनी पहाड़ी धान था। अगेता बोओ या पछेता, अपने हाथ का हुआ। फिर चारा देने वाला हुआ वो भरपूर। बौने धान में साला न सवाद चारा। और उसका पराया माँउ तो बछिया भी सूँघ के छोड देती है। बाज़ार केलिए बोएँ फिर बाज़ार से लेके खाएँ, ये सरकारी खेती हमसे नहीं होगी सैप। जै हिन्द।"[52] खेती से अजीविका के लिए धन न मिलने के कारण लोग खेती करने केलिए तैयार नहीं होते "सब चीज़ बस्त बाजार से ही माँगती हुई। खेती की उपज बाज़ार में, बाज़ार की उपज घरों में बरक्कत कहाँ रही? लड़के दि थे, दोनों पढ़-लिख के मैदान को भाग गए। इस बुढ़ापे में घर उसे ही चलाना ही हुआ"[53] इससे नष्ट होती संस्कृति का भी चित्रण है। प्राकृतिक वातावरण में भी इसलिए बदलाव आ सकते हैं। नष्ट होती हरियाली या किसानों की व्यथा को हमारे सामने प्रस्तुत करते हुए लेखिका हमें भी सजग करने का प्रयास किया है।

4.7. वृद्ध जीवन का यथार्थ:-

समाज में आज वृद्ध जनों की ज़िन्दगी अतयंत दयनीय है। उपभोगवादी संस्कृति के प्रभाव से आज कोई भी बच नहीं सकता। इससे नैतिक मूल्यों में भी ह्रास देखने को मिलता है। वृद्धों की ज़िन्दगी को कष्ट देने वाले कई घटक समाज में विद्यमान हैं। वृद्ध मानसिकता, सभ्यता, सांस्कृतिक मोह, अहं-भाव, नेतृत्व की लालसा, वैधव्य, अलगाव, अपर्याप्त पारिवारिक समर्थन तथा देख-रेख करने वालों का अभाव आदि इस सामाजिक रुगणता के सामान्य तत्व हैं। वृद्ध जनों के जीवन यापन केलिए वृद्धाश्रम, आनंदलोक आदि व्यवस्था है किंतु उन्हें मानव प्रेम, भरण-पोषण और संरक्षण की अपरिहार्यता है। वृद्ध को समझना और सहेजना मानवीयता और मानवीय पहचान का द्योतक है।

समकालीन हिन्दी साहित्य में वृद्ध जीवन की त्रासदी को दर्शानेवाली कई कहानियाँ उपलब्ध हैं। ज्ञानरंजन की 'पिता', उषा प्रियंवदा की 'वापसी', भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' आदि कहानियों में वृद्ध जनों की ज़िन्दगी को दर्शाया गया है। वृद्ध जनों की ज़िन्दगी को कष्ट दायक बनाने में एक हद तक उसी की मानसिकता भी एक कारण है। मृणालजी ने 'एक स्त्री का विदागीत' कहानी में रोगशय्या में पड़ी सास का चित्रण किया है। बहु साथ रहती है। फिर भी वह पूर्ण रूप से उसे अपनाती नहीं है। बहू नौकरीपेशा नारी है। वह आधुनिक नारी का प्रतिक है। सास विधवा है। वह दूसरों के सामने बहू

की प्रशंसा करती रहती है। घर के अन्दर उसका व्यवहार बिलकुल विपरीत है। हमेशा वह आदेश देती रहती है। पीढ़ियों में आने वाले अंतर को यहाँ दर्शाया गया है। अपने आपको उच्च मानने की मानसिकता रखने के कारण संबन्धों में भी बिखराव आने लगे हैं।

'चिमगादडें' कहानी की माँ और बच्चे गरीबी से तस्त्र हैं। माँ बूढ़ी हो गई है। बड़ी बेटी काम करके घर चलाती है। माँ और बच्चों के बीच प्यार का भाव अवश्य है। फिर भी अभावग्रस्तता के कारण एक दूसरे से हमेशा झगड़ा होता रहता है। मारिया हमेशा माँ की ख्याल रखती है। डायबिटीज के कारण वह माँ को देने वाले खाने में कंट्रोल करती है। बूढ़ी माँ भी प्रतिक्रिया व्यक्त करती हुई कहती है कि "तुम दोनों केलिए मैं बस एक ज़िन्दा लाज भर हूँ"[54] इस में एक और बूढ़ी माँ के मन की वेदना हम देख सकते हैं। बेटियों से वे काम करवाना नहीं चाहती। फिर भी अभावग्रस्तता के कारण वह भी बेटियों पर निर्भर रहती है।खाने की चीज़ की गंध से वह मुग्ध रहती है। खाना मिलते समय उसकी खुशी की सीमा नहीं होती है- "बस खाने की गंध मिली नहीं कि बुड्ढी की पाँचों इन्द्रियाँ जग पड़ती हैं! ममा जवाब न पाकर भी चहके जा रही थी साइकारिन की तीन गोली डालना मेरी चाय में! एक दो गोली से तो मिठास ही नहीं आती.........."[55] मारिया ने टोस्ट बढ़ा-दिया "लें!" इसमें माँ के प्रति बेटी का प्यार हम देख सकते हैं।

'दोपहर में मौत' कहानी में वृद्ध माँ और बाप की मानसिकता को दर्शाया गया है। बेटा विदेश में काम करता है। वह वहाँ की लड़की से शादी करके विदेश में ही रहता है। वह बार-बार भारत आकर माँ बाप से मिलता रहता है। अचानक विदेश में बेटे की मृत्यु एक अक्सीटेट से होती है। मृत्यु के बाद बेटे का एक दोस्त परिवार वालों से मिलने केलिए आता है। यहाँ आकर मित्र को मालूम होता है कि पिता हमेशा धन को ही चाहता है। उसने देश में एक फ्लाट खरीदा था। इसे अपने छोटे बेटे के नाम पर करना वह चाहता है। बहू को वह कभी भी वापस नहीं बुलाता है। वृद्ध माँ की स्थिति बिलकुल भिन्न थी "वृद्ध के पीछे होते ही दूर कहीं नारी कठं की खिलखिलाहट गूजी खै....... खै....... खै। उसने पाया वह काँप रहा था।"[56] मृणालजी ने एक ओर वृद्ध पिता की स्वार्थी मानसिकता को सूचित किया तो दूसरी ओर माँ की करुणा भरी वेदना को भी दर्शाने की कोशिश की है।

'कौवे' कहानी की पत्नी वृद्धों से दूर रहना चाहती है। पाश्चात्य संस्कृति में पलने के कारण वह पति के माँ-बाप के साथ रहना नहीं चाहती। इसलिए तलाक लेकर किराये के मकान पर रहती है। हिन्दुस्थानी पति अपने माँ-बाप को छोडना नहीं चाहता है।माँ-बाप की मानसिकता भी अत्यंत दर्दभरी है। वे हमेशा बच्चों को खुश रखना चाहते हैं- यहाँ भी माँ-बाप बेटे से कहते हैं कि "सोचता हूँ तुम लोगों का अगर वहीं बाहर भला निबाह होता तो वहीं लौट

जाओ। करने वाले हैं ही, हो ही जायेगा।"[57] इसमें लेखिका यह बताना चाहती है कि दोनों की संस्कृति भिन्न-भिन्न है इसका तालमोल संभव नहीं है। बूढ़े लोग भी अपनी ज़िन्दगी में जल्दी बदलाव लाने में असमर्थ होते हैं। गीजेला का चरित्र को भी यहाँ दर्शाया गया है "गीजेला की माँ किसी बूढ़ों के होम में रहती है। हर महीने एक बार वह वहाँ जाती है। लौटकर देर तक उसका मिजाज खराब रहता था। 'उफ बूढ़ों को देखना कितना डिप्रेस करता है!' वह कहती थी। शायद इसी से इस देश में बूढ़ों को समाज की युवा नज़रों से छिपाया जाता है। जब तक बाल रँगे जा सकें, उभार रबड़ में तानकर टिकाये जा सकें, तुम लोगों के बीच रह सकते हो। उसके बाद अपनी घडी लो और समुद्र किनारे गर्म तटों की नरम आबहवा में पाँत-के-पाँत बैठे रहो कौवे जैसे, संमदर को ताकते हुए .... ओ भो पितरसृप्यंताम् !"[58] इससे बूढ़े लोगों के प्रति होने वाली मानसिकता ज़ाहिर होती है।

'सुपारी फुआ' में बूढ़ी विधवा की दर्द भरी कहानी कही गयी है। बूढ़ी विधवा की मृत्यु का चित्रण लेखिका पेश करती है। विधवा होने के कारण वह अकेली एक कोठरी में रहती थी। किसी से बातें किये बिना पूजाघर में समय बिताती थी। एकादशी का व्रत भी लेती थी। बूढ़ी बीमार से होकर पड़ी है। परिवार वाले सब उसकी मृत्यु चाहते हैं। कमरे के अन्दर कोई नहीं जाता। "बच्चे अक्सर बड़ों से पूछते कि वे क्यों बुआ के कमरे में नहीं जा सकते? बड़े

लोग उन्हें डपटकर भगा देते। वे सब एक अनकहे कोरस में सोचने लगे थे कि अब सुपारी फुआ की मुक्ति हो जाती तो अच्छा था।"[59] इससे लोगों की मन: स्थिति स्पष्ट जाती है। परिवार का कोई भी सदस्य कभी भी उसकी सेवा नहीं करता क्योंकि वह एक विधवा है।

मृणालजी ने वृद्धों की ज़िन्दगी के विविध पहलुओं को लिया है। समाज में वृद्धों के प्रति होने वाली मानसिकता के बदले वृद्धों की अपनी मानसिकता और परिवारवालों की मानसिकता को उन्होंने उकेरा है। 'कैंसर'कहानी में भी ऐसे एक वृद्ध का चित्र है। कैंसर से पीडित बाबूजी परिवार वालों को अपने साथ रहने का आग्रह करते हैं। फिर भी लड़के विदेश में काम करने के कारण वह आकर पैसे देकर, नौकर को रखकर चला जाता है। बूढ़े लोग भी अपनी पुराने मूल्यों को तोड़ना नहीं चाहते। पीढ़ियों के अंतर के कारण भी समस्यायें उत्पन्न होती हैं। आज मानव स्वतंत्र होकर जीना चाहते हैं। ज़िन्दगी की दौड़-धूप में आगे-पीछे की चिंता नहीं रहती है। इसलिए मूल्यों में च्यूति आ गयी है। मृणालजी ने अपनी कहानी साहित्य के ज़रिए पाठकों के सामने कई प्रश्न खड़े किये हैं।

4.8. मृणाल पाण्डे की कहानियों की भाषा की विशेषताएँ :-

कहानी की सफलता केलिए भाषा अत्यंत आवश्यक है। बहुत बढ़िया साहित्य सर्जन करने वाली लेखिका मृणालजी की कहानियों की भाषा

सशक्त एवं कलात्मक है। कहानी पढ़ने से मृणालजी की भाषा पर पकड साफ देख सकते हैं। कठिन एवं पांडित्य युक्त भाषा के बदले सरल भाषा का प्रयोग उन्होंने किया है। मृणालजी की कहानियों को भाषा समय, स्थान, और पात्र के मूल स्वर तक पहूँचाने में भाषा सहायक हुई है। अंग्रेज़ी भाषा के शब्दों व वाक्यों का प्रयोग भी हम देख सकते हैं(कोहरा और मछलियाँ)। व्यंग्य मूलक भाषा का प्रयोग भी उन्होंने किया है।

लेखिका ने अपनी कहानियों में अलंकार और मुहावरों का भी प्रयोग किया है(उदा:-उमेशजी 'मेरी धिग्गी बंध गई)। कुछ कहानियों में देशज भाषा का भी प्रयोग हम देख सकते हैं (उदा:कर्कशा कहानी 'कुत्ते जित्ती इज़्ज़त नयीं मेरी वहाँ, कुत्ते जित्ती)।संक्षेप में कहें तो मृणालजी ने अपनी कहानियों में सफल भाषा शैली का प्रयोग किया है।

निष्कर्ष:-

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मृणाल पाण्डे जी की कहानी कला अत्यंत साहित्यिक है। उन्होंने अपनी कहानियों के ज़रिए समकालीन सामाजिक यथार्थ का खुलासा पाठकों के सामने किया है। उनकी अधिकांश कहानियों के केन्द्र में नारी ही रही है। फिर भी समकालीन समाज में होने वाली सभी विसंगतियों पर भी लेखिका ने अपनी कलम चलाई है। लेखिका ने हमारे सामने कई मुद्दों को पेश करके उस बात पर सोच-विचार करने का या

सजह एवं जागृत रहने का आह्वान दिया है। उनकी इन कहानियों के आधार पर बताया जा सकता हैं कि पारिवारिक जीवन के विभिन्न पक्ष स्त्री-पुरुष संबंध, परिवार के सदस्यों के आपसी रिश्ते और उसके बदले रूप, बाल मनोविज्ञान, स्त्री के प्रति समाज का दृष्टिकोण, स्त्री को दोयम दर्जे का नागरिक मानने की प्रवृत्ति, पुरुषवर्चस्ववाद का विरोध, नौकरी पेशा नारी की यातनाएँ, मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का खोखलापन, पारिस्थितिक सजगता, वृद्धजीवन का यथार्थ जैसे विभिन्न पक्षों पर मृणालजी ने अपनी कहानियों प्रकाश डाला है। हिन्दी कहानी जगत में उनका स्थान बहुत उल्लेखनीय है।

सन्दर्भ:-

1.डॉ.पुष्पपाल सिंह -समकालीन कहानी: सोच और समझ

2.डॉ.जगदीश चन्द्र गुप्त -नयी कविता:स्वरुप और समस्याएं (सं):-पृ.12-13

3.मृणाल पाण्डे -एक स्त्री का विदागीत :-पृ.28

4. मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.139

5. वहीं :-पृ.183

6.वहीं :-पृ.249

7. वहीं पृ.14

8.वही:-पृ.50

9.वही:-पृ.55

10.वही:-पृ.232

11. वही:-पृ.105

12.वही:-पृ.105

13.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.17

14.वही:-पृ.116

15.वही:-पृ.116

16.वही:-पृ.116

17.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.132

18.वही:-पृ.139

19.वही:-पृ.249

20.वही:-पृ.174

21.मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.15

22.वही:-पृ.19

23.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.226

24.मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.88

25.वहीं:-पृ.19

26. वहीं:-पृ.19

27.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.40

28.वहीं:-पृ.46

29.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.106

30.मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.80

31.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.156

32.वहीं:-पृ.227

33.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.25

34.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.177

35.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.12

36.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.167

37.मृणाल पाण्डे -एक स्त्री का विदागीत :-पृ.26

38.वहीं :-पृ.28

39.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.17

40.मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.31

41.वही:-पृ.35

42.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.19-20

43..मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.116

44.वही:-पृ.16

45.वही:-पृ.114

46.वही:-पृ.114

47.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.199

48.मृणाल पाण्डे -बचुली चौकीदारिन की कढी :-पृ.35

49.वही:-पृ.36

50.मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.21

51.वही:-पृ.22

52.वही:-पृ.76

53.वही :-पृ.76

54.मृणाल पाण्डे -यानी कि एक बात थी :-पृ.17

55.वही:-पृ.21

56.वही :-पृ.249

57.वही:-पृ.185

58. वही:-पृ.185

59..मृणाल पाण्डे -चार दिन की जवानी तेरी :-पृ.84

अध्याय पांच

मृणाल पाण्डे का निबंध साहित्य

अध्याय पांच

मृणाल पाण्डे का निबंध साहित्य

5.0. प्रस्तावना:-

नाटककार, उपन्यासकार एवं कहानीकार के रूप में विख्यात मृणाल पाण्डेजी ने सशक्त निबन्धकार के रूप में भी खास पहचान बनायी है। एक स्त्री के नज़रिए से समससामयिक सन्दर्भों की जांच-पड़ताल उन्होंने पैनी दृष्टि से अपने निबंधों में प्रस्तुत की है| हमारे उपनिषदों-पुराणों के समय से लेकर स्त्रियों केलिए अनेक नियमों और मर्यादाओं की रचना हुई है |तब से आज तक स्त्री अपनी अस्मिता की खोज करती आ रही है | आज कई प्रकार के कानून स्त्री को सुरक्षा देने के लिए हैं | फिर भी सच्चे न्याय से वह कोसों दूर है | मृणाल पांडेयजी ने अपने निबंधों के ज़रिये कई मुद्दों पर हमारा ध्यान खींच लिया है | पुराने ज़माने से लेकर आज तक की स्त्री नियती की जांच-पड़ताल उन्होंने की है | पत्रकारिता के क्षेत्र में जुड़े रहने के कारण समय-समय पर परिवर्तित समाज में स्त्री की सच्ची स्थिति से समाज को अवगत कराने का महत्वपूर्ण प्रयास ही उन्होंने अपनी निबंधों के ज़रिए किया है। प्रस्तुत अध्याय में मृणाल जी के निबन्धों में निहित सामाजिक सदर्भों को आंकने का प्रयास है।

स्त्री और पुरुष समाज के दो पहलू हैं | समाज-संचालन में एक की सक्रियता और दूसरे की बाध्यता जीवन के सतत प्रवाह में गतिरोध पैदा न करें तो भी उसे कुंठित अवश्य करती है |मानवीय भावना और व मानसिक क्षमता के स्तर पर स्त्री-पुरुष से कुछ भिन्न या निम्न नहीं है |प्रकृतिदत्त शारीरिक भिन्नता के अलावा उसमें जो कुछ भी भिन्न,दुर्बल या निचले स्तर का रहा है तो वह विभिन्न ज़माने में परिस्थिति या परिवेश की उपज है| आज के समय में भी स्त्रियाँ अपनी अस्मिता की खोज में भटकती हैं | समाज में विभिन्न प्रकार का बदलाव समय-समय पर होता रहा है| फिर भी स्त्रियों के प्रति समाज की भावना पुराने ज़माने की तरह जमकर रही है।

मृणाल जी ने अपने निबंधों के ज़रिये स्त्रियों के विभिन्न प्रकार की समस्याओं का उल्लेख किया है | पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री छवि के कल्पित रूप को ही एक स्त्री के नज़रिए से न देखकर प्रस्तुत किया है | मृणालजी सुसंगत स्त्रीवादी लेखिका है ,जो भारतीय स्त्री की ठोस परिस्थितियों की सम्पूर्ण जटिलताओं में जाती है |उन्होंने स्त्री की समस्याओं को उसके कर्म ,श्रम,भूमिका और सामजिक संबंधों से जोड़ा हैं |सही आंकड़ों को प्रस्तुत करके उन्होंने स्त्री से जुडी सारी समस्याओं का अंकन किया हैं | अपने ऊपर होनेवाले अत्याचार के विरुद्ध प्रतिरोध करने का आह्वान भी उन्होंनेदिया है | सिर्फ

समस्याओं को सामने रखा मात्र ही नहीं बल्कि समाधान और सुझाव भी उन्होंने प्रस्तुत किया है |

5.1. नारी के प्रति समाज का धार्मिक दृष्टिकोण :-

भारतीय संस्कृति के अनुसार स्त्री देवता है | भारत में कई प्रकार के व्रत -त्योहार मनाये जाते हैं | उनमें देवियों को ऊंचा स्थान दिया गया है | हमारी संस्कृति में स्त्री को पुरुष से ऊंचा स्थान मिला है , सिर्फ इसलिए कि वह पुरुष की जननी और देखभाल करनेवाली है | भारतीय संस्कृति में स्त्री की छवि सिर्फ यही रही है | लक्ष्मी की पूजा करने वाले समाज अपने घर की निर्माण प्रक्रिया में स्त्री-पुरुष की बराबरी का अधिकार नहीं देता |

मृणालजी ने "मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा " में धर्म गुरुवों द्वरा स्त्री के प्रति होने वाले भेद भाव को दर्शाया है | पुरी के शंकराचार्य स्वमी निश्चलानंद स्त्रियों को बातों में महत्वपूर्ण स्थान देते हैं | यही व्यक्ति स्त्रियों को वेदपाठ करने से रोकता है | उसके अनुसार मात्र पुरुष ही वेदपाठ कर सकते हैं | वेदपाठ करने वालों को यज्ञोपवीत धारण करना ज़रूरी है |यज्ञोपवीत धारण करने केलिए पहले उसे बटुक वेश धर एक वस्त्र पहनकर

भीख मांगना ज़रूरी है | स्त्रियों को आदर करने के कारण उसे इस हालात में देखना नहीं चाहते हैं | स्त्रियों को वेदपाठ न करने के और भी कारण वे प्रस्तुत करते हैं | स्त्रियों के वेदपाठ के खिलाफ पुरी शंकराचार्य यह सवाल करता है – “ मुस्लमान महिलाएँ भी तो मस्जिद में कुरन नहीं पड़ती फिर हमारी आर्य ललनाएं वेदपाठ क्यूँ करें ? वे कहते है कि हर संप्रदाय के अपने उसूल होते हैं ,हम भी अपने उसूलों का ही अनुसरण करेंगे |”[1]

लेखिका ने इसमें धार्मिक गुरुओं की मानसिकता को भी व्यक्त किया है| राजसी आडम्बर के साथ शहर घूमते ऐसे व्यक्तियों पर खिल्ली उड़ाती हुई लेखिका अपना मत यों व्यक्त करती है -" कलकत्ता के सडकों पर अपनी राजसी कार में गुज़रते हुए शंकराचार्य जी अपने दिव्य चक्षु निमीलित रहे हुए थे ,जो उन्हें वहाँ पर गोद में अधमरे बच्चे टाँगे एकवस्त्र गृहहीन ,तिरस्कृत सैकडों महिलाओं की भीड यत्र -तत्र भीख मांगती नहीं दिखी।"[2] धर्म के नाम पर मुखौटा पहनकर घूमने केलिए धर्म गुरु तैयार है | उनके आगे गरीबी से त्रस्त या पीड़ित स्त्री का दर्द देखा नहीं जाता | समाज में व्याप्त अत्याचारों के खिलाफ बोलने केलिए वे कभी तैयार नहीं होते | लेखिका आगे स्पष्ट करती हैं- " शबाना आज़मी करोड़ों अश्वेतों के नेता वृद्ध नेल्सन मंडेला को स्नेह और

आदर से चूम लें ,एक अरुंधती रायचौधरी अपने मधुर कंठ से पवित्र ऋचाओं के पाठ से वातावरण को पवित्र करें ,तो कठमुल्लों और धर्माधिकारियों के पारे चढने लगते हैं | लेकिन सैकड़ों कनीजाएँ अमीनाएँ ,बूढ़े शेखों के हाथ भेड-बकरियों की तरह बिकती रहें था,भंवरीभाई जैसी समाजसेवी साथियों के साथ सामूहिक बलात्कार होते रहे ,वे मूंह में दही जमाए बैठे हैं|"[3]

धर्म की ओट में जीनेवाले ऐसे धार्मिक गुरु अपने आपको खुश रखने का कार्य हमेशा करते रहते हैं | ऐसे लोगों को कोई स्थान न देना चाहिए| लेखिका हमारे इतिहास-पुराणों की कुछ घटनाओं को सामने रखते हुए अपनी विचार प्रस्तुत करती है| धर्म गुरुओं की चुप्पी महा अपराध ही है |

महाभारत के एक प्रसंग देकर लेखिका कहती हैं कि "कौरवों की सभा में विद्वत्ता और नीति के प्रतीक भीष्म ने द्रौपदी का अपमान देखकर जो चुप्पी साधी थी, उसके लिए वह भले कहते रहे -'अत्रापि उदाहरन्ती मितिहांस पुरातनम' पर इतिहास -पुराण की दुहाई के बावजूद न तो कृष्ण-बलराम और न ही परशुराम की तरह अवतारों में गिना गया और न ही उनके वंशधरों ने आपस में लड़ने का उनका आग्रह माना|"[4] दूसरे एक प्रसंग में वे कहती हैं कि भीष्म अपने निर्वीर्य भाईयों के लिए बलात लाई गयी स्त्री जल

कर मरी |भीष्म को अंत में शिखंडी की ओट में शरशैय्या ही मिले |ब्रह्मचर्य के मूर्तिमत रूप होने से भी भीष्म ने इस प्रकार का कार्य किया है | महिलाओं की प्रशंसा करने वाले धार्मिक नेता उसे आगे आने से रोक सकते हैं | यह एक अत्यंत शोचनीय स्थिति ही है | लेखिका इसमें एक ब्राह्मण और व्याध के माध्यम से धर्म की सच्ची व्याख्या भी देती है | कौशिक नामक ब्राह्मण भिक्षा मांगते हुए एक महिला के पास पहूंचता है| भिक्षा मिलने में देरी होने पर वह जल्दी उसे शाप देने के लिए तैयार होता है | उस वक्त क्रौध से महिला कहती है कि-"मैं वह बगुली नहीं जिसे तुम्हारा रोष जला कर राख कर दे | तुम तो धर्म का तत्व ही नहीं समझे हो | जाओ ,मिथिला में मांस बेचने वाले उस व्याध से धर्म पूछो ,जो तुमसे कहीं बड़ा धर्मात्मा और संत है | काषाय वस्त्र पहनकर ही कोई धार्मिक गुरु बन जाता |"[5]

स्त्रियों पर नियमावलियों की रचना करने वाले धार्मिक लोग सच्चे धर्म जाने बिना भटकते रहते हैं| सही धर्म क्या है उसे भी वे पहचानते नहीं | लेखिका धर्म की सही व्याख्या व्याध के माध्यम से व्यक्त करती है " सब लोग जब प्रेम से स्वकर्म करें तभी लोक व्यवहार सुरक्षित रहता है| धर्म के रूप में कितने भी अधर्म घास -फूस से ढके कुओं के समान लोग में फैले हैं ,वे धर्म

के नाम पर इन्द्रिय-दमन और पवित्रता का प्रलाप तो करते हैं ,पर शिष्टाचार से शून्य है |"[6] धर्म के नाम पर झूठा मुखौटा पहनने वालों से लेखिका इस प्रकार कहना चाहती हैं कि काषाय वस्त्र मात्र पहनकर या वेदपाठ करने से सभी गुरु नहीं बन जाते हैं |समाज के निम्न स्तरों की उन्नति के लिए सेवा करना चाहिए |स्त्रियों के पद पर रूकावट बनकर रहने के बदले सामजिक यथार्थ को समझकर सही धर्म का पालन करना चाहिए | उन्होंने अपनी बातों के स्पष्ट करते हुए कहा है कि "पुरी शंकराचार्य से भी हम उस महिला तथा वधिक की तरह ये ही कहेंगी कि हे प्रियवर ,स्त्री -उत्थान के जगन्नाथ -रथ को रोकने की प्रयास करने की बजाय जाईए अन्यत्र नहीं तो अपने प्रांत के करोड़ों भूख और गरीबी से छटपटाते जनों के कष्ट निवारण और सेवा में जुटिए!यही धर्म है|"[7] लेखिका ने प्रस्तुत निबंध में ऐसे धार्मिक लोगों पर व्यंग्य उठाया है जिनकी कथनी और करनी में अंतर है| स्त्रियों के प्रति होने वाले उनके दृष्टिकोण को सूक्ष्म रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास भी सराहनीय लगता है।

5.2. समाज में स्त्री की स्थिति :-

पुराने ज़माने से ही स्त्रियों को समाज में कई प्रकार की रुढियों का पालन करना पड़ा है | पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्तिथि अत्यंत

दर्दनाक होती जा रही है | इसका एक कारण सामाजिक व्यवस्था और पुरानी रूढिवादी मानसिकता ही है | आधुनिक शिक्षा के प्रसार से स्त्री को भी बोलने का अवसर मिला है। फिर भी समाज में हमेशा उसे दबाकर रखने की कोशिश भी जारी रही है | समाज में लड़के का जन्म पर उत्सव मनाये जाते हैं | समाज की इस व्यवस्था के कारण ज़्यादातर स्त्रियाँ बेटे की माँ बनना चाहती है | पारिवारिक दबाव के कारण स्त्रियाँ भी इस प्रकार सोचती रहती हैं कि बेटे को जन्म देने से ही उसे परिवार में स्थान मिलेगा | लेखिका ने इस बात को अपने निबंध 'निज मन मुकुर सुधारी 'में यों स्पष्ट किया है -"स्त्री को चुनने योग्य आत्मछवियों का जो बना-बनाया छद्म सामजिक ज़खीरा भेंट किया जाता रहा है ,उनमें सबसे स्तुत्य मानी गयी है-बेटे की माँ की छवि कर्मकांड ,लोकगीत,लोकाचार सब इस छवि को बचपन से दब्बू, भीरु और स्त्रीत्व के हीनताबोध से आक्रान्त मन के लिए इतना श्लाघनीय बना देते हैं ,कि अपने अस्तित्व की सकारात्मक पड़ताल की बजाय अधिकतर स्त्रियाँ बेटे की माँ बनकर अपनी आत्मछवि को सम्पूर्ण समझती हैं |"[8]

भ्रूण हत्या बढ़ने से या समाज के इस प्रकार के सोच के कारण लड़कियों की तादाद घटती ज रही है| लेखिका सही आंकड़े को हमारे सामने

प्रस्तुत करती हुई इस दर्दनाक स्थिति को लेकर विचार विमर्श करती है| दुनिया की तमाम विकसित और अविकसित प्रदेशों में 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते ' वाला नारा हम सुन सकते हैं जिसने अपनी आबादी की बीहड़ बढ़ोत्तरी के बावजूद 1901 के उस लिंग-आधारित अनुपात को,जिसके अनुसार देश में हर 1000 पुरुषों के पीछे 972 स्त्रियाँ थीं,घटा कर 1000 पुरुषों के पीछे 935 स्त्रियों में तब्दील कर दिया है|"[९] कुपोषण के कारण लड़कियाँ दुनिया छोड़ने के लिए बाध्य हो जाती हैं | समाज में आज भी भेदभाव की भावना जारी है। स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में भी लड़कियों की कमी देख सकते हैं | पुराने ज़माने से स्त्रियों को शिक्षा के वंचित रखा गया था | 'स्त्री शिक्षा की अंधेरी भूलभुलैया' में लेखिका ने स्त्री शिक्षा को लेकर विचार किया है | ग्रामीण लोग गरीबी से त्रस्त होते वक्त भी बेटों को पढ़ाई करने केलिए भेज दिया जाता है | लड़कियों को घर सँभालने और खेती का काम करने का आदेश दिया जाता है |स्कूल जाने से उसे कोई भौतिक लाभ नहीं मिलता है|

आजादी के बाद की स्त्री शिक्षा का आंकड़ा भी लेखिका प्रस्तुत करती हैं| "आजादी इतने वर्षों बाद भी हमारे देश में पढी -लिखी औरतों का प्रतिशत 25% तक भी नहीं पहुँच सका है| इस का सब से

चिंताजनक पहलू है 8 से 15 वर्ष की लड़कियों द्वारा बढी तादाद अधबीच में स्कूली पढाई छोड़ देना| 1981 जनगणना आँकड़ों के अनुसार 6-11 वर्ष की बच्चियों में से 45% को 12-14वर्ष की लड़कियों में से 75%और 15-17 वर्ष की किशोरियों में 85% को पढ़ाई छुडवाकर घर पर बिठा दिए गए हैं| लड़कों में इसके तुलनात्मक आंकड़े थे -20%,57%,और 71%|"[10] देश के सभी प्रांतों में शिक्षा की दशा एक जैसी नहीं है| अशिक्षा से पीड़ित स्त्रियों वाले प्रान्तों में स्त्रियों की मृत्यु दर काफी ऊंची होती है | गरीबी के कारण ही स्त्री अशिक्षा का शिकार बन जाती है | शिक्षा देने में भी भेद-भाव देख सकते हैं|

परिवार में पुरुष को कर्ता और स्त्री को कमजोरी का नैसर्गिक प्रतीक माना गया |समाज आज की असाधारण रूप से प्रतिभावान स्त्रियों की सफ़लता और सामर्थ्य को सहजता से नहीं देख पाता है |आज भी स्त्रियों को परम्परा के अनुसार जीने का आदेश दिया जाता है| लेखिका बॉलीवुड की अभिनेत्री ऐश्वर्या राय की वाराणसी यात्रा का उल्लेख हमारे सामने प्रस्तुत करती है | इससे सामजिक अन्धाविश्वासों की झलक भी मिलती है | ऐश्वर्या की कुण्डली में मांगलिक दोष था , ज्योतिषियों के अनुसार यह दोष अभिनेता पति के लिए असुखकारी बन सकता है |अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त इस अभिनेत्री

को पहले बरगद ,पीपल ,तुलसी सोने की विष्णु प्रतिमा आदि-आदि से ब्याह दिया गया | इससे स्पष्ट होता है कि स्त्री कितनी भी ऊंचे स्तर पर हो उसे गिराने के लिए कोई-न-कोई कार्य पितृसत्तात्मक समाज द्वारा किया जाता है |'घरेलू हिंसा ,यानी जबरा मारे भी और रोने भी न दे ' में लेखिका ने उच्चवर्ग के ख्याति प्राप्त स्त्री का उदाहरण प्रस्तुत किया है |

समाज की दर्दनाक अव्यवस्था का चित्र भी लेखिका ने 'सती,लोकतंत्र और हम' में प्रस्तुत किया है |समाज में प्रचलित भीषण प्रथा के रूप में सती प्रथा को हम देख सकते हैं |मृणाल जी कुछ उदाहरणों के द्वारा समाज में प्रचलित इस व्यवस्था की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं| राजस्थान के देवराला कस्बे में 18 सितंबर में रूपकंवर नामक 18 साल की युवती पति की चिता पर बैठकर 'सती' हो गयी थी | उसके बाद बुंदेलखंड इलाके में पचपन वर्षीय महिला और मध्य प्रदेश के पन्ना जिले में एक वृद्धा कुट्टूबाई आदि नारियाँ भी 'सती' हो गयी थीं | पहले का पति नपुंसक था और उसने आत्महत्या की थी | दूसरे का टी.बी ग्रस्त पति अर्से से खाट पर पड़ा था, तथा कुट्टूबाई अपने पति की मौत के काफी पहले से उससे अलग रह रही थी| दोनों से प्रेम भाव तो दूर, वार्तालाप तक नहीं था |

पुराने समय में सती का अनुष्ठान करना स्त्रियों के लिए गर्व की बात मानी जाती थी| स्थानीय जनता की नज़रों में इन सभी स्त्रियों ने अपने ऐसे असुखी दाम्पत्य के बावजूद अंततः पति के साथ जल मरने का शौर्य दिखाया है | इसलिए उनकी नज़र में महान 'सती' परम पूजनीया है | चोरी-छिपे लोग 'सती' स्थल आकर नारियल,मिठाई और पैसे चढाते रहते हैं | इस प्रकार करने से वास्तव में औरतों के मूल नागरिक अधिकारों का हनन हुआ है| धार्मिकता के नाम पर ऐसी प्रथा ग्रामीण इलाकों में चलती रहती है| शिक्षा की कमी के कारण स्त्रियाँ हमेशा इस प्रकार के शोषण का शिकार बन जाती हैं|

समाज स्त्रियों को हमेशा दोयम दर्जा का स्थान ही देता आया है| पितृसत्तात्मक समाज की ऐसी एक धारणा है कि स्त्री घर और बाहर एक साथ काम नहीं कर सकती। उसे हमेशा घर की चारदीवारी में ही रखना उचित है | इस सोच को लेखिका एक विज्ञापन के ज़रिए प्रस्तुत करती हैं -"1988 में निविया क्रीम का एक बहुचर्चित विज्ञापन आया,जो कामकाजी स्त्रियों से तंज के साथ पूछता था 'क्या आप का चेहरा आपके कार्यक्षेत्र में सफलता की कीमत तो नहीं चुका रहा है? विज्ञापन में ब्रीफकेस उठाए एक कामकाजी महिला को गोद में बच्चा लिए 'क्रेश 'की ओर बदहवासी से दौड़ते दिखाया गया था | इसी

तरह प्रख्यात फैशन पत्रिका 'मैडमोइजेल' ने सफल कामकाजी स्त्रियों को कई लेखों की श्रृखला छापकर आगाह करना शुरू किया कि काम का तनाव जो है, तुम्हारे सुन्दर चेहरे पर झुर्रियाँ डाल देगा | तनाव बढ़ने से तुम्हारे सर पर रूसी छा जाएगी| मतलब साफ़ था स्त्रियाँ पुरुष की तरह घर और बाहर एक साथ सफल नहीं हो सकती|"11 'चौथी कसम उर्फ़ पकड़ी गयी मिस इंडिया 'में लेखिका ने स्त्रियों के प्रति होने वाले सामजिक दृष्टिकोण का चित्र विज्ञापन के ज़रिए दर्शाने का प्रयास किया है |घर पर रहने वाली स्त्रियों को समाज आदर्श नारी का दर्जा देता है| वर्तमान समय में इस सामजिक व्यवस्था में कुछ बदलाव आया है | फिर भी स्त्रियों को पूर्ण रूप से मुक्ति देने के लिए कोई व्यवस्था नहीं है|

औरतें बेटों की माँ के रूप में भी हमेशा स्मरणीय बनती हैं | स्त्रियों का अपना अस्तित्व बोध नष्ट होने की संभावना भी समाज में निहित है। स्त्रियों का दर्जा समाज में निचले स्तर का है | उसे स्वतंत्र पहचान तक नहीं मिलता है | पितृसत्तात्मक समाज में हमेशा पुरुषों को ऊंचा स्थान मिला है | उसे हर तरह का अधिकार है ,स्वतंत्र पहचान भी है | लेखिका ने अपने लेख 'मातृदिवस के बहाने कुछ मुर्तिभंजक विचार' में नष्ट होती स्त्री अस्मिता का

चित्रण किया है | 'पुरनिया' स्त्री की मातृसत्तात्मक वशंवाली तैयार करने केलिए लेखिका उनके परिवार जनों से मिलती है| दादाजी को न अपनी माँ का वास्तविक नाम मालूम था न बहनों का | दादीजी का कहना है कि " हम तो उन्हें 'इजा' कहते थे,और लोग 'भाऊ'(बच्चे)की इजा! बहनें हुई छोटी दी ,बड़ी दी| औरतों को तो तब हम नाम लेकर कहाँ बुलाते थे ?"[12] प ुरुष अपनी आत्मछवि पिता और अन्य पुरुषों से ही जोडते हैं|

समाज द्वारा निर्धारित माताओं के गुणों पर भी लेखिका विचार करती है| स्त्री को हमेशा सहनशील बनकर रहने का आदेश परिवारवालों द्वारा दिया जाता है| अपने घर-परिवार और बच्चों में पूरी तरह मग्न रहना और उन सब केलिए तिल-तिल कर अपने आपको समर्पित करना तथा अपनी महत्वाकाक्षाओं, इच्छाओं तथा सपनों को त्यागना आज भी एक स्त्री और माँ का सबसे महान गुण माना जाता है | समाज में मातृत्व को 'आँचल में दूध और आँखों में पानी' मार्का पीड़ा की ब्रांडिग के साथ वितरित किया जाता है | वर्तमान समय में मातृदिवस धूम-धाम से मनाया जाता है | लेखिका इसके विरोध में कहती है कि समाज में स्त्रियों के साथ होनेवाले व्यवहार में बदलाव आये बिना इस प्रकार खुशी मनाना सही नहीं है| अपनी बातों वे यों स्पष्ट

करती है कि "आज भी इत्र, फूल, चाकलेट अथवा गहने-कपडे अपने तथा अपने बच्चों की माँओं को उपहार देकर 'करवाचौथ' या 'मातृदिवस' मनाना भी इसी ग्लानिमुक्ति के तहत संपन्न वर्ग के व्यावसायिक दोहन का एक नया रास्ता खोलता है | इससे स्त्रियाँ के सशक्तीकरण की उम्मीद करना व्यर्थ है | वह वस्तुतः उनके अशक्तीकरण का ही महोत्सव है|"[13]

लेखिका वाल्मिकी दर्शन के प्रसंग हमारे सामने रखकर समाज में माताओं के प्रति होने वाले भाव को इस प्रकार व्यक्त करती है "सार्थक मातृत्व की स्वीकृत परिभाषा उसके तत्वावधान में यही बनती है 'कि यशस्वी पुत्रवसू माँ बने 'हर कीमत पर संतान केलिए स्वयं अहर्निश बिना किसी अवकाश दूसरे की मदद लिए पूर्णतः समर्पित बनी रहो 'लेकिन समय आने पर सारे अधिकार और पत्नी-पुसी संतान पिताओं को सौंप दो और खुद धरती में समा जाओ| पिता ही (पुत्र का) राजतिलक और (पुत्री का) कन्यादान करेंगे | इस दृष्टिकोण के कारण मातृत्व लालनाओं के लिए भारत में एक टूर्नमेंट की तरह बन चुका है- मरेंगी तो माएँ स्वर्ग जायेंगी, और जिन्दा रहीं तो एक अदद अपने ही जैसी अधिकारहीन पुत्र वधु के रूप में एक चमकीली किन्तु दिखावटी ट्राफी की हकदार होंगी |"[14] प्रस्तुत वाक्यों से माँ की स्थिति हम पहचान सकते हैं पितृसत्तात्मक समाज में माँ का स्थान भी नीचे का है | परिवार के

दबाव के कारण और दूसरों को सुखी रखने केलिए अपने आप को समर्पित करना पड़ता है| स्त्री के रूप में उसे कोई स्वतंत्रता मिलती नहीं है|

मर्यादाओं का पालन करते हुए हकों केलिए लड़ने का उपदेश समाज स्त्रियों को देता है|पर मातृदिवस के बारे में और माताओं के प्रति हमारे दृष्टिकोण इस प्रकार रखने का आशा करती है- "कम-से-कम स्त्रियों को अपनी माँओं की ज़िंदगी का सच अपने राष्ट्रीय उत्थान-पतन के भीतर सच से जोड़कर देखना और दिखाना ही होगा ,ताकि गुलाबी गलतफहमियों का रिबन में बाँधे मदर्स डे मार्का मातृत्व की ब्रांडिंग से हमारी अंतरात्माएँ मुक्त हो सकें |"[15]

समाज में ऐसी धारणाएँ भी प्रचलित हैं स्त्रियों को कुछ क्षेत्रों से अलग कर रखते है | मृणाल जी ने अपने एक निबंध 'सशस्त्र स्त्री से कौन उरता' में कुछ मुद्दों को उठाया है | फौज के उप-प्रमुख ले-जनरल पट्टाभिरामन महिला अफसरों की उपस्थिति भारतीय फौज केलिए गैर ज़रूरी मानने वालों में है | कुछ क्षेत्रों में आज भी महिलाओं को दर्जा नहीं दिया गया है| लेखिका के अनुसार"आज भी महिलाओं को स्थाई सेवा नहीं मिली है और आयुध विभाग ,साजो-सामान तथा एडवोकेट जनरल शाखाओं में पुरुषों के उपलाब्ध न होने पर भी प्राय: मन मारकर मात्र पाँच वर्ष केलिए उन्हें भर्ती किया जा रहा है

वहीँ उन्हें स्थायी सेवा और समान वेतन की बुनियादी सुविधाएँ देने और उनके साथ हो रहे भेदभाव को तर्कसंगत ढंग से परखने-सुधारने को लेकर उच्चतम स्तरों पर एक ठेठ भारतीय शंका और लापरवाही होगी ही|"[16] स्त्रियों को ऊंचे ओहदे न देने के लिए कई नियमों को उस पर थोपा जाता है |

5.3. गरीबी से त्रस्त ग्रामीण भारतीय नारी:-

भारत जैसे महान देश में कई जगहों (गाँव) में गरीबी से त्रस्त लोगों को हम देख सकते हैं | गरीबी की वजह से कई लोग उच्च वर्ग के शोषण के शिकार भी बनते हैं | भूख मिटाने के लिए ज्यादात्तर स्त्रियाँ खेतों में काम करती हैं | कड़ी मेहनत करके भी एक जून की रोटी हासिल नहीं कर पाती हैं | भारत में गरीबी को मिटाने के लिए कई योजनायें सरकारी तौर पर अमल हो रही हैं| फिर भी इस योजना का फल गरीबों को नहीं मिल रहा है |

'गरीबी का महिलाकरण 'लेख के ज़रिए मृणाल जी ने मजदूर औरतों पर मालिकों द्वारा किये गए शोषण का मुद्दा उठाया है |लेखिका हमारे सामने कुछ उदाहरणों को प्रस्तुत करके अपनी बातों को स्पष्ट करती हैं | कर्नाटक के कन्नौर जिले की 58 वर्षीया विधवा सुब्बलक्ष्मी अगरबत्ती बनाती है |गाँव में एक ठेकेदार हर सप्ताह आकर उसे तथा उसकी जैसी कई महिलाओं

को अगरबत्ती बनाने का कच्चा माल यानी तीलियाँ तथा पिसा मसाला दे जाता है और बनी-बनायी अगरबत्तियाँ ले जाता है |एक हज़ार अगरबती देने से उसे लगभग ढाई रूपया मिलता था| सेठ अपनी फैक्टरी का ठप्पा लगाकर ऐसी 25 अगरबत्तियों का पैकेट साढ़े चार रूपये में बेचते हैं|

उसी प्रकार मध्यप्रदेश के कलमाडी गाँव में अनुसूचित जनजाति की सुखी बाई जैसी कई औरतें बांस की टोकरियाँ बनाती हैं | यह उनका परम्परागत पेशा भी है। जंगल से बांस न काटने का आदेश सरकार की ओर से हो रहा था | इसलिए ग्रामीण लोग चोरी-छिपे बांस लाकर टोकरियाँ तथा झाड़ू बनाते हैं| दलाल के द्वारा ही वे बेच सकते थे | उसे तुच्छ पैसा देकर बाकी दलाल वसूल करते थे| जोखिम उठाकर काम करने पर भी उसे मेहनत का वेतन नहीं मिलता | अहमदाबाद की शांताबेन भी फार्मसुटिकेल कंपनी में डिब्बों में दवाईयां पैक करने का काम करती है| सौ डिब्बे पैक करने पर उसे सिर्फ पांच रूपये ही मिलता है| लेखिका के अनुसार "सुब्बलक्ष्मी, सुखीबाई और शान्ताबेन यह तीन चेहरे हैं, उस निपट गरीबी ग्रस्त असंगठित क्षेत्र के ,जिसके लगातार बढते दायरे में हमारे अधिकाधिक कामगार कैद होते जा रहे हैं| दूसरी मार्के की बात यह है कि यह तब का हमारे उद्योग तंत्र का सबसे बड़ा हिस्सा होते हुए भी आज राष्ट्र की आंखों से लगभग ओझल है | क्योंकि

एक तो इसके तकरीबन अस्सी प्रतिशत कामगारों में अधिकतर स्त्रियाँ हैं ,दूसरे वे फैक्टरियों मिलों या सार्वजनिक क्षेत्रों में कार्यरत नहीं है। वे अपने जीर्ण-शीर्ण घरों झुगियों के भीतर बैठकर कताई ,बुनाई, छपाई, कुटाई-पिसाई अथवा पैकेजिंग जैसे धंधों द्वारा बहुत नगण्य सी मंजूरी पर ही संतोष करने को बाध्य है| एतदर्थ सरकारी बहियों में वे 'गृहिणी 'के खाते में डाल दी गयी हैं, कामगारों की कोटी में नहीं गिनी जातीं| "[17] मृणाल जी ने इसमें असंगठित क्षेत्र में काम करके जीवन-यापन करने वाली गरीब औरतों की दर्दनाक हालत को व्यक्त किया है | इसप्रकार के शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए अन्य देशों में कई संस्थाएँ कार्यरत हैं |इन संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले कार्यक्रमों का उल्लेख भी इस लेख में है |

'अ से अर्थजगत ,आ से आदमी ,औ से औरत ' में हमारे आर्थिक क्षेत्र में हो रही विसंगतियों का चित्रण है | आज एक ओर बेरोजगारी बढता जा रहा है तो दूसरी ओर महंगाई की खाई | सुधारवाद की ही तरह गरीबों तक नियंत्रित मूल्यों पर ज़रूरी खाद्य समग्री पहुंचाने वाली सार्वजनिक वितरण प्रणाली का स्वरुप भी बदला जा रहा है |लेखिका के अनुसार 'ज्यों-ज्यों पारिवारिक आय घटेगी और महँगाई बढेगी,परिवारों के भीतर औरतों

पर खींचतान करके किसी तरह गृहस्थी चलाने का कठोर दबाव और भी बढेगा| नतीजतन उसको कम खाकर और भी अंधिक घंटे काम करना होगा| इससे उनके तथा घर की लड़कियों के स्वास्थ्य तथा बढत पर विपरित असर पड़ सकता है, क्योंकि पारंपरिक तौर से अपने यहाँ एक तो स्त्रियों-लड़कियों को घर के पौष्टिक भोजनों में तुलनात्मक रूप से कम हिस्सा मिलता है, दूसरी आमदनी घटने पर और खर्चा बढने पर पहले लटकी की पढाई-छुड़ाई जाती है, और फिर उसे भी माँ के साथ काम में जोत दिया जाता है|"[18] गरीबों के पास महँगाई और बेरोज़गारी के दबाव सहने केलिए अधिक जगह नहीं होती, अतः एक सीमा के बाद उनकी हताशा तथा आक्रोश भाल भाला कर फूट पडते हैं| ये आवेश सार्वजनिक तोड़-फोड़ और दंगे के रूप में हमारे सामने आते है| कभी-कभी परिवारों के भीतर माँ-बाप द्वारा चरम हिंसक और विध्वंसक रूप में भी आता है हम समाचार पत्रों में अक्सर ऐसा हाल देख सकते हैं। जहाँ आवेश में पति ने पत्नी समेत बच्चों की हत्या करके स्वयं आत्महत्या कर ली हो या एक खिन्न पत्नी ने किरासन छिड़ककर अपने साथ पूरे परिवार को भस्म कर दिया हो |सरकार की ओर से इसप्रकार की घटनाओं को रोकने के लिए और गरीबी कम करने के लिए योजनायें बनाना आवश्यक हैं| लेखिका ने इस निबंध में वैश्वीकरण और उदारीकरण के मुद्दों को भी उठाया हैं |लेखिका ने

अपनी बातों को इस प्रकार व्यक्त किया है कि "ये ही वजह हैं, कि हाल के समय में गरीबों के बीच कार्यरत कई स्वैच्छिक संस्थाओं तथा मजदूर और महिला संगठनों ने बार-बार मांग की है ,कि सरकार पुनर्रचना की परिकल्पना तथा दिशा निर्धारण के काम को बहुराष्ट्रीय कंपनियों या महाजनी संस्थाओं के निर्देश की बजाय जनप्रतिनिधियों तथा जनता से जुड़े संगठनों के साथ खुले विमर्श द्वारा आजम दे|"[19]

'इक्कीसवीं सदी की खेतिहर स्त्री 'में खेती के क्षेत्र में काम करने वाली औरतों की दर्दनाक स्थिति को व्यक्त किया गया है| लेखिका अग्रिकल्चर टुवड्र्स 2000 के अंतर्राष्ट्रीय खाद्य एवं कृषि संगठन के प्रपत्र में कहे गए प्रसंग का उल्लेख करते हुए कहती हैं कि "अधिकतर समाजों में स्त्रियाँ अन्न के उत्पादन, संरक्षण और संवर्धन में अहम् भूमिका अदा करती हैं | अन्न के उत्पादन में उन्हें कई तरह की पारंपरिक महारत हासिल है, और जिन मुल्कों में पुरुष कामकाज के लिए बाहर जा रहे हैं वहाँ वे प्रमुख खेतिहर और रोजी-रोटी कमाने वाली परिवार की मुखिया भी बनती चली जा रही हैं ....पर अन्न के उत्पादन में इतनी महत्वपूर्ण भूमिका निबाहने के बावजूद उन्हें खेतिहर के रूप में अनेक कठिन बाधाएँ झेलनी पड़ रही हैं...........| कृषि-विकास कार्यक्रम अक्सर पुरुषों द्वारा तय होते हैं, और पुरुषों

के हितों की दृष्टि से ही लागू भी किये जाते हैं.......ऐसे ही मशीनीकरण ने पारंपरिक तौर से पुरुषों के हिस्से आनेवाले खेती का काम तो सरल कर दिया है ,पर खेतिहर औरतों का बोझ अभी भी जस का तस है। बल्कि कुछ मायनों में वह बढ़ा ही है...........विशेषज्ञ तथा प्रचारकर्ता भी ,जो अक्सर पुरुष ही होते हैं,अपनी सलाह का लक्ष्य पुरुषों और पुरुषों की पसंदीदा फसलों तक ही सीमित रखते हैं ....इससे कुछ इलाकों में जीवन-धारण के लिए ज़रूरी अन्य फसलों (जो अक्सर औरतों की पसंद की फसलें होती हैं)का उत्पादन घटकर नकद फरालों (जो अफसर पुरुषों की पसंदीदा हैं) का उत्पादन बढने की संभावना बनती है, जिससे कालांतर में निस्संदेह परिवारों को मिलनेवाले ज़रूरी पोषाहार में कमी हो जायेगी|" (एग्रिकल्चर:टुवड्‌र्स 2000 अंतर्राष्ट्रीय खाद्य एवं कृषि संगठन के प्रपत्र से)”[20]

खेत में काम करने वाली स्त्री कई समस्यों से गुज़रती है| एक ओर वह परिवार का सारा काम करती है और खेत में भी कड़ी मेहनत करती है |उस समय उसको बच्चों की देखभाल न करनी पड़ती है ,इससे बच्चे कुपोषण की शिकार बन जाते हैं | उसी प्रकार स्त्री का स्वास्थ्य भी बिगड जाता है| लेखिका कुछ प्रांतों का ब्यौरा हमारे सामने रखती है | कुमाऊँ,

गढ़वाल, संथाल,परगान जैसे इलाकों में साठ से सत्तर प्रतिशत तक पति या घर के मर्द काम की तलाश में परिवार को गाँव में छोड़कर शहर में चले जाते हैं| यहाँ स्त्रियों के कंधे पर है परिवार का बोझ | वहाँ स्त्री घर के भीतर गृहणी भी है ,बच्चे की धाय भी और घर परिवार की मुखिया भी, तमाम बाहरी काम उसके जिम्मे आ गये हैं |

खेती करने वाली स्त्रियों का रिपोर्ट पर्यावरण विशेषज्ञों द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है |लेखिका स्पष्ट करती है-"पर्यावरण विशेषज्ञों ने कर्नाटक राज्य के पूरा इलाकों के सर्वेक्षण में पाया कि वहाँ खेतिहर परिवारों की औरतें अपने काम के कुल घंटों का 46 प्रतिशत हिस्सा खेती के कामों में लगाती हैं ,जबकि मर्द कुल 37 प्रतिशत हिस्सा लगाते हैं | इसके बाद भी खाना पकाना ,पानी लाना ,इंधन बटोरना और खेतों तक भोजन पहुँचाने का काम औरतों के ही जिम्मे आता है,क्योंकि यह हमेशा औरतों का काम माना जाता रहा है | विशेषज्ञों ने हिसाब लगाया है कि पूरे इलाके की औसतन हर कामकाजी औरत हर साल 1.74 टन ईंधन जमा करती है ,पानी तथा ईधन लाने में रोज़ कम से कम 8.54 किलोमीटर की दूरी तय करती है | इसी प्रकार पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण इलाकों में गर्भवती स्त्रियाँ भी रोज़ 14 से 14 घंटे घर तथा खेतों में काम करती पाई गयी हैं |"[21] खेत में काम करनेवाली

स्त्रियों की स्थिति बहुत कष्टतर ही है। गरीबी से बचने के लिए या भूख मिटाने के लिए वे इस धंधे को अपनाती हैं | शारीरिक रूप से भी उसे कठिनाईयाँ झेलनी पड़ती हैं |इतनी मेहनत करने पर भी वह सुख से नहीं रह पाती है| परिवारजनों की देखभाल करते-करते वह खुद थक जाती है| बच्चियाँ भी पोषाकारों से वंचित हो जाती हैं |काम तथा पोषाहारों के असंतुलित बंटवारे से गर्भवती या दूध पिलानेवाली माएँ खास तौर से दुष्प्रभावित हो जाती हैं|

हमारे भारत कृषि प्रधान देश ही है| वहाँ औरतें पुरुषों से अधिक मेहनत करती हैं| इस लेख के ज़रिए लेखिका ने हमारा ध्यान ग्रामीण औरतों की ज़िन्दगी की ओर खींच लिया है| भारत देश कृषि को अधिक महत्ता देता है | कई कार्यक्रम भी इसलिए चलाये जाते हैं | फिर भी सही न्याय उसे नहीं मिलता है| शिक्षा से वंचित रखनेवाली खेतिहर स्त्री की नियति भी दर्दनाक है | वह अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाने के लिए असमर्थ रहती है | गरीबी की वजह से घर और बाहर का काम निभाकर चुप रहती है |वर्तमान समय में समाज परिवर्तन की ओर बढ़ रहा है | सरकार द्वारा गरीबी से बचाने के लिए योजनायें घोषित होती रहती है|

पुरुषसत्तात्मक समाज में राजनीति की बागडोर उच्चवर्ग के हाथों में है| संगठित होकर आवाज़ उठाने से ही इस हालत में बदलाव लाया जा सकता है|

5.4. असमानता के बीच भारतीय नारी:-

परिवार में स्थान प्रमुख होने के बावजूद भी स्त्री समाज में समानता का पात्र नहीं है| बचपन से ही उसे अलग नज़रिए से पाला जाता है| पितृसत्तात्मक समाज में पुत्रों को ऊंचा स्थान मिला है उसे हर तरह स्वस्थ रखने की कोशिश भी होती रहती है| लड़कियों का जन्म पहले ही नष्ट करने का कार्य समाज में हो रहा है| समाज में कन्या भ्रूण हत्या की तादाद बढती रहती है| लड़कियों को छोटी उम्र से ही कई प्रकार की नियमावलियों का पालन करना पड़ता है| समाज द्वारा कल्पित मूल्यों से वह बाहर नहीं आ सकती है| हमेशा उसकी शक्ति को दबाकर रखने का प्रयास किया जाता है|

समाज में कई क्षेत्रों में स्त्रियों के बीच असमानता हम देख सकते हैं| उसमें प्रमुख शिक्षा का क्षेत्र ही है| ज़्यादातर लोग लड़कों को पढ़ाने में रुचि लेते हैं| असुविधा के बावजूद भी लड़कों को पढ़ाते हैं| लड़कियों को हमेशा वंचित रखते हैं| मृणालजी अपने लेखों में असमानता को झेलती नारी की विविध समस्याओं का आँकन किया है| गरीबी के कारण लड़कियों को शिक्षा

नहीं मिलती है| 'किसे परवाह है बच्चों की' लेख में बच्चों के प्रति होने वाले अत्याचरों का चित्रण है| ग्रामीण औरतों को कई सदियों से शिक्षा से वंचित रखता आया है| अनपढ़ होने के कारण और सामाजिक व्यवस्था के अनुसार स्त्री अगली पीढ़ी को भी शिक्षा नहीं दे पाती है| लड़कियों को शिक्षा से वंचित रखने के कारणों के बारें में वे यों कहती है " माँओं की पीठ-पीछे इन बच्चों की देखभाल का दाय बड़े-बहनों पर आ जाता है| इनके भी भाईयों की तुलना में बहनों का बोझ कहीं ज्यादा है| यही हमारी लड़कियों तक बुनियादी शिक्षा न पहूँचने का सबसे बड़ा कारण है| पहली से चौथी कक्षा में भर्ती होने वाले लड़कों की तादाद सरकारी आंकडों के आधार पर 79.03 प्रतिशत है, जबकि लड़कियों की मात्र 54.32 प्रतिशत| आठवीं कक्षा पहुँचते-पहुँचते लड़कियों की तादाद घटकर 18 प्रतिशत रह जाती है| सत्तर के दशक के एक शोध के अनुसार आदिवासी इलाकों में 6 से कम आयु के 60 प्रतिशत बच्चों की देखभाल उनके भाई बहन कर रहे थे जिनमें 15 प्रतिशत खुद भी छह बरस के कम उम्र के थे|"[22]

स्त्री को शिक्षा से दूर रखने के कारण के बारें में 'अकाल मृत्यू और स्कूल के बीच ठिठकी लड़कियां' लेख में बताया गया है | भारत में एक

और लडकियों की तादाद घटती जा रही है | शिक्षा के क्षेत्र में लड़कियों की स्थिति और शिक्षा प्रणाली को लेकर लेखिका ने विचार विमर्श किया है |रपट के अनुसार लडकियों की निरक्षरता के मुख्य कारण वे हैं इन देशों के समाज पितृसत्तात्मक ढांचा (जहां पारिवारिक जीवन से जुड़े सभी अहम् फैलने प्रायःपुरुष की लेते हैं), लड़कियों की अल्पायु में शादी (और उसके बाद उन पर असमय आ पड़नेवाला घर तथा मातृत्व का बोझ), महिलाशिक्षकों की कमी और हमारे बुनियादी तंत्र की ढाचागत कमजोरियाँ"[23]

हमारे संविधान में 86वाँ संशोधन करके 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का मूल अधिकार है| क़ानून इस प्रकार होते हुए भी बच्चियाँ शिक्षा से दूर रहती हैं| ज़्यादातर लड़कियों को घर का सारा काम करके ही स्कूल जाना पड़ता है| प्राथमिक शिक्षा के बाद वे घर पर ही बैठी रहती हैं| परिवार वाले भी उसे खेती और अन्य नौकरी केलिए भेज देते हैं और उस से लाभान्वित हो जाते हैं| वर्तमान समाज में ही इस प्रकार की घटनायें घटती रहती हैं| गरीबी से बचने केलिए इस प्रकार करना पड़ता है| पितृसत्तात्मक समाज होने के कारण लडकों पर कोई रोक-टोक नहीं है| अपनी मन पसंद कार्य करने से कोई रोक नहीं सकता है| भारत के कई गरीब इलाकों

में लडकियों की स्थिति बेदहतर ही । शिक्षा के दूर रखने के आलावा उससे खाद्य पदार्थीं के बंटवारे में भी भेदभाव हम देख सकते हैं|

'भोजन की राजनीति' में लेखिका ने खाद्य पदार्थों के बंटवारे के बारे में विचार किया है| समाज में स्त्रियों को खाद्य पदार्थों से भी वंचित रखा जाता है| परिवार रूपी रथ के पहिये के रूप में काम करने वाली स्त्री भी भर पेट खाना नहीं खा सकती है| वह पति ,बच्चे और घरवालों को खाना खिलाती है और खुद भूखी रहती है| इसका एक कारण गरीबी ही है| स्त्रियों के समान छोटी लड़कियों की स्थति भी ऐसी ही है| लेखिका पुरानी मान्यताओं का उल्लेख करते हुए स्त्रियों की स्थिति पर प्रकाश डालती है | "यह एक गहरा पारंपरिक विश्वास है कि मूलतः दुनिया, राज्य और परिवार तीनों को चलने में औरत का महत्व पुरुष से बहुत कम है| आज इसका तार्किक आधार न होने पर भी हमारे समाज में हर स्तर पर यह भावना बहुत गहरे से व्याप्त है| चूँकि हर लड़की इसी समाज में पैदा होती है और इसी के मूल्यों और सोच-विचार को अपने में समेटती हुई बड़ी होती है, अतः स्त्री बनते ही वह भी अपनी जाति को हीन मानकर खुद अपने ही घर में, अपने बच्चों के बीच लड़के और लड़की में भेदभाव करने लगती है|"[24] बेटे को परिवार में सम्मान के साथ रखता है

और उसे बुढ़ापे का सहारा और आर्थिक सुरक्षा देने वाले के रूप में मानते हैं| इसलिए बचपन से ही उसे अच्छा खाद्य पदार्थ देते रहते हैं | समाज में बहू और बेटियों को बचपन से ही त्याग के बारे में सिखाया जाता है| उन्हें आत्मरिर्भारता नहीं सिखाती है| खुलकर बोलना मनुष्य केलिए स्वतंत्रता का प्रतीक है | उसे खुलकर बोलने से डांट पड़ती है। इसलिए वह दब कर रहती है| समाज में प्रचलित पुरानी मान्यतावों का पालन से ऐसी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं |

शिक्ष से वंचित होने के कारण या अज्ञानतावश स्त्रियाँ इस प्रकार के भेदभाव का सामना करती हैं| लेखिका ने समाज में हानेवाले भेदभाव के बारे में कुछ लोगों को समझाने की कोशिश की है| उसमें एक नाइजीरियाई औरत का कथन उद्‌धृत करती है- "अभी हाल में यह बात मैंने कुछ नाएजीरियाई औरतों से कही,तो उनमें से एक लहीम-रहीम प्रौढा ने आँखों में आँसू भरकर मुझे गला लगा लिया और बोली बहन, तुम्हारे मूँह से हम सब बोल रही हैं| यकीन मानो, हमारे यहाँ भी कोई माँ अपनी बेटी को बेटे की तरह खिला, पिलाकर ताकतवार बनाने केलिए स्वतंत्र नहीं है | उनका मन बचपन से ही बांध दिया जाता है कि अपने घर का अन्न, अपने प्यार की पूँजी सिर्फ बेटे या

घर के मर्दों पर खर्च करो |"[25] अज्ञता के कारण स्त्रियाँ इस प्रकार करने केलिए विवश हो जाती हैं| पितृसत्तात्मक समाज द्वारा कल्पित नियमों के पालन करते हुए वे कई तरह के अत्याचारों का शिकार बन जाती हैं|

मिस्र की लेखिका द्वारा कही गयी बातों का भी उल्लेख लेखिका करती है "उनके यहाँ भी गोश्त, अंडा, दूध, कुछ बेशकीमती फल और सब्जियाँ सिर्फ घर के मर्दों को ही खिलाने का रिवाज़ है,जबकि औरतों के हिस्से अक्सर कसावा ,टैपियोका और अरबी जैसी(कार्बोज-बहुल,पर प्रोटीन रहित) साधारण खाद्य वस्तुएँ ही आती हैं | यही नहीं कुछ इलाकों में तो यह मान्यता है कि औरतों को दूध, मक्खन और गोश्त जैसे पदार्थों को यूँ भी खाना ही नहीं चाहिए, क्योंकि इससे उनके स्वभाव में गर्मी आ जाती है और वे बाँझ हो जाती हैं| (मुझे याद आया, कि मेरी एक पंजाबी मित्र ने बताया था की उसकी ग्रामीण दादी उसे उसके भाइयों की तुलना में गुड और घी बहुत थोडा खाने देती थी, क्योंकि उनके ख्याल से इससे बढती उम्र की लड़कियों को 'गर्मी' चढ़ जाती है)"[26] इसके अलावा कई देशों में इस प्रकार का भेद भाव हम देख सकते हैं। स्त्री के मन में भोजन सिर्फ पोषाहार नहीं ताकत का प्रतीक भी है| लेखिका ने हमारे सामने भोजन से जुडी कुछ भ्रांतियों को प्रस्तुत किया है|

इसमें पहला है पुरुषों को बेहतर और ज्यादा भोजन खाना चाहिए,क्योंकि वे ज्यादा काम करते हैं| इस स्थिति की सच्चाई लेखिका इस प्रकार व्यक्त करती है कि 'संयुक्त राष्ट्र संघ के रपट के अनुसार ,दुनिया भर में होने वाले शारीरिक श्रम का दो-तिहाई हिस्सा औरतों द्वारा किये जाने वाले काम का है जिनमें से अधिकतर काम इसलिए दिखाई नहीं पड़ता,कि उसे करने की स्त्रियों को कोई तनख्वाह नहीं मिलती है| लैटिन अमेरिका के देशों में खेती के काम में लगे मज़दूरों में 50 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं, आफ्रिका और एशिया में कहीं उनकी तादाद कुल संख्या 90 प्रतिशत स्त्रियाँ है| तिस पर हर कामगार स्त्री, जो घर के बाहर काम कर रही है, अपने घर के काम का पूरा बोझ भी उठाये हुए है ,जब्कि कामगार पुरुष पर सिर्फ तक तरह के काम का बोझ हैं| पोषाहार -विशेषज्ञों की राय में गर्भवती तथा दूध पिलाने वाली माँ की प्रोटीन, कैल्शियम तथा लौह तत्वों की ज़रूरत पुरुष से दूनी होती है|"[27]

दूसरी एक भ्रान्ति इस प्रकार है कि कई स्त्रियाँ खुद डाइटिंग के चक्कर में खाना -पीना छोडे बैठी रहती हैं तो कोई क्या करें ? लेखिका सच्चाई को व्यक्त करते हुए कहती है कि यह धारणा गलत है| संपन्न देशों में औरतें फिगर-बिगड़ने के डर से बच्चों को स्थनपान नहीं करना चाहती|

अत्यधिक डाइटिंग से होने वाली घातक दुर्बलता की बिमारी (एनोरेक्सिया नर्वोसा) सिर्फ संपन्नतम शहरी वर्गों की औरतों का रोग है | ज़्यादातर स्त्रियाँ गाँव में कम करनेवाली आम औरतों ही हैं| उसे भर पेट खाना भी नहीं मिल सकता है | समाज की सोच में बदलाव आए बिना भूख की समस्या का सही समाधान नहीं मिल सकता है। सरकार से और से भी अन्न का वितरण सही तरह नहीं होता है। वितरण प्रबंध की कमी से भी कष्टताएँ झेलनी पड़ती हैं| इस लेख के ज़रिए लेखिका बताती है कि ऐसी समाज व्यवस्था के विरुद्ध जरूर आवाज़ उठानी चाहिए वर्तमान समाज में स्त्रियों के प्रति कई तरह के अत्याचार होते रहते हैं| समाज की एक धारणा इस प्रकार है कि घर की चारदीवारी में स्त्री सुरक्षित है| घर की इस चारदीवारी को स्त्री की सुरक्षा की सबसे बड़ी गारंटी माना जाता है, वहीँ कई बार स्त्रियों केलिए उनके हिंसक शारीरिक-मानसिक उत्पीडन का सबसे बड़ा और स्थायी स्रोत बन जाता है| घरेलु हिंसा के कई उदहारण हम रोज़ समाचार पत्रों के माध्यम से सुन सकते हैं| लेखिका ने अपने लेख 'घरेलू हिंसा ,यानी जबरा मारे भी और रोने भी न दे ' में घरेलु हिंसा के शिकार बनती स्त्रियों का चित्रण और सामाजिक अव्यवस्था को लेकर विचार किया है|

घरेलू हिंसा की खबर हम अक्सर सुनते हैं| बड़े मंत्रियों और उनके बेटों, प्रसिद्ध अभिनेताओं और कलाकारों से लेकर झोंपड़ियों में रहने वाले पतियों तक के द्वारा पत्नी या बच्चों की निर्मम धुनाई और मानसिक प्रताड़ने के हज़ारों किस्से हमारे पुलिस कर्मचारी, मीडिया और अस्पताली रजिस्टरों से भी लगातार उजागर होते रहते हैं| मृणालजी हमारे सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए आज की दर्दनाक स्थिति का उल्लेख करती हैं| हाल में एक बिगडैल मंत्री पुत्र द्वारा अपनी पत्नी के आर्थिक शोषण और शारीरिक बदसलूकी के प्रकरण मीडिया में छाए रहे | उससे पहले एक प्रसिद्ध अभिनेत्री द्वारा पति के घर से वापस मायके लौटने की वजह भी पति द्वारा मारपीट बताई गई| दोनों वी.आई.पी पत्नियाँ यद्यपि बाद में अपने कहे से मुकर गईं, लेकिन प्रकरणों की छवियाँ भुक्त-भोगी परिवारों के मन से आसानी से उतरने वाली नहीं | उतरनी भी नहीं चाहिए| स्त्रीयाँ और उनके परिजन अक्सर उत्पीडिता की समग्र शारीरिक-मानसिक सुरक्षा और उस पर लगातार मंडराते खतरों को जबरन कर सुविधाजनक पूर्वाग्रहों और अनिच्छापूर्वक जबरन दिलवाए गए वक्तव्यों के आधार पर मामले चुपचाप सुलझाना पसंद करते हैं| लेकिन समाज की बुनियाद में व्याप्त गंभीर शक्ति ....और उसके अन्यायपूर्ण दुष्परिणामों से उपजी गहरी शर्म और तकलीफ के साथ रू-ब-रू

हुए बिना घरेलु हिंसा के असली स्वरूप को नहीं समझा, रोका जा सकता|" [28] ज़्यादातर निम्न वर्ग की स्त्रियाँ घरेलु हिंसा के शिकार बन जाती हैं| घरेलू हिंसा की शिकार बनती स्त्री की मानसिक स्थिति के बारे में कोई सोचता नहीं है |

पढ़ी-लिखी स्त्रियों के प्रति भी समाज का दृष्टिकोण ऐसा है| हमेशा पुरुष ही ऊँचा दर्जा हासिल करते हैं| बराबरी की मांग यदि स्त्री द्वारा उठायी गयी तो उसे किसी-न -किसी प्रकार दबाकर रखने की कोशिश की जाती है| विवाह के बाद घर की चारदीवारी के भीतर पारंपरिक संसार में जीने केलिए उसे विवश किया जाता है| वहाँ उसे अपनी पूर्ण अस्मिता को खोकर रहना पडता है| परिवार को चालने केलिए हमेशा उसे अत्याचारों को सहना पडता है | स्त्रियों के संगठन की कमी के कारण वह प्रतिरोध नहीं कर सकती है। लेखिका कहती है -"परिवारों के भीतर औरतें शक्ति की असमानता से दो स्तरों पर साक्षात्कार करती हैं| एक स्तर वह है, जहाँ वे सब अबला स्त्रियाँ होती हैं| दूसरा स्तर वह है, जहाँ परिवार के कमासुत बेटों की माँ होने के नाते कुछ औरतें बाँझ या पुत्रहीन स्त्रियों से खुद को अधिक शक्तिमत महसूस करती हैं|"[29] इस प्रकार की सोच के कारण प्रतिशोध की इच्छा पैदा नहीं होती है| नारीवादी दर्शन को माननेवाले ही कानून के माध्यम से अपने अधिकारों को

हासिल करने का धैर्य दिखाते हैं| घरेलू हिंसा से त्रस्त होती स्त्रियाँ आत्महत्या कर लेती हैं| लेखिका इस लेख के ज़रिए यह बताना चाहती है कि अपने अधिकार को समाझकर हमें ज़रूर प्रतिरोध करना चाहिए| अत्याचार सह कर घर के भीतर चुपचाप रहने से कोई बदलाव नहीं आ सकता है| संविधान में घरेलू हिंसा पर नियंत्रण करने केलिए कानून अमल किया गया है| इसका सही उपयोग करें तो एक हद तक घरेलू हिंसा को रोक सकते हैं |

'स्त्री और कानून' में घरेलू हिंसा के शिकार होती स्त्रियों की स्थिति दर्शायी गयी है| मुंबई नगर निगम के बाद्रा स्थित भाभा अस्पताल में स्वायत्त जनसेवी संस्था 'सेहत' की मदद से एक खास रजिस्टर बनाया गया है जिस में शाम रात बजे से सुबह पांच बजे तक अस्पताल के संकटकालीन 'क्राइसिस सेंटर ' में इलाज केलिए आए रोगियों का पूरा लेखा -जोखा दर्ज किया जाता है| इस प्रकार आने वाले रोगियों में पूरा का पूरा घरेलू हिंसा की शिकार बनी औरतें ही हैं| दिन छिपने के बाद सूरज निकलने तक घर की चारदीवारी के भीतर न जाने कितनी बच्चियाँ खुद अपनी ही परिवार के पुरुषों के हाथों क्रूरतम हिंसा की शिकार बनती रहती हैं| चोट गहरी हो तो नेक दिल पड़ोसन

या सहेली के साथ इस केंन्द्र में वे आती हैं वहाँ चुपचाप इलाज कर अंधेरों में गम हो जाती हैं|

ज़्यादातर लोग ग्रामीण औरतें होती हैं| वे ज्यादा समय अस्पताल में रहना नहीं चाहती हैं क्योंकि जांच पड़ताल किये जाने पर घर के पुरुषों को दंड मिल सकते हैं| इससे उनकी हालत और भी बिगड़ जाती है| वे उसे दंड देने केलिए तैयार नहीं होतीं | वे अपनी निस्सहाय स्थिति इस प्रकार व्यक्त करती हैं- "करायेगी तो उनके घर के उस पुरुष को ही दंड मिलेगा न ,जो उनका मालिक है |उत्पीड़क है तो क्या? घर से बाहर कर देगा तो मैं कहाँ जाऊंगी और मेरे बच्चे?"लम्बी उसाँस लेकर उन में से एक ने मेरे सवाल के जवाब को मनो शून्य में फेंका और उठकर लंगडाती हुई वापस लौट गयी| उनकी तीन पसलियाँ चटख गयी थीं और हाथ पर सात टाँगे आये थे |रजिस्टर में चोट की वजह उसने लिखवाई थी, सीढ़ी पर पैर फिसल गया|"[30]

हमारे समाज में भी ऐसा होता है |ज्यादात्तर औरतें अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को सहकर चुप रहना ही चाहती हैं| अपने बच्चों की स्थिति या अन्य परिवारवालों की भलाई के लिए वे सब कुछ सहती हैं| इस प्रकार की स्थिति सिर्फ गाँव में ही नहीं, शहर में भी देखा जा सकता है |अपने

लोगों से मिले ज्यादात्तार प्रताड़ना से स्त्री का मन भी क्षत-विक्षत हो जाता है | वे आत्मसम्मान, स्वाभिमान सब खोकर बैठ जाती हैं और अपनी नियती मानकर चली जाती हैं |इस क्रूर स्थिति में बदलाव लाने के लिए कानून का निर्माण हुआ है |घरेलू हिंसा के शिकार होने वाली स्त्रियों की दयनीय स्थिति नेशनल फॅमिली एंड हेल्थ सर्वे के रपट के माध्यम से व्यक्त लेखिका यों करती है - " नेशनल फॅमिली एंड हेल्थ सर्वे की ताज़ा सालाना रपट के अनुसार प्रताड़ित औरतें ,बच्चों में अनेक तरह के क्रोनिक फोबिया,तनाव जनित रोग (जैसे रक्तचाप,आधे सिर का दर्द ,पीठ का दर्द या चक्कर आना ",एनीमिया और असामयिक गर्भपात जैसी प्रवृत्तियाँ देखी गयी हैं। यही नहीं, हिंसक पुरुषों का यौन जीवन भी प्राय: बहु स्त्रीगामी और असामान्य पाया गया है और उनमें रतिजन्य रोग होने की संभावना भी सामान्य से कहीं अधिक ठहरती है।ऐसे घरों की पुरुष संतान भी अक्सर बडे होने पर उग्र, झगडालू और हिसंक व्यवहार करता है।और स्त्रियों से उनका रिश्ता कभी सहज नहीं बन पाता।कुलमिलाकर घरेलू हिंसा की शिकार एक हो या अनेक, तबाही पूरा परिवार झेलता है।"[31]

नये घरेलू हिंसा निषेध कानून की ओर भी लेखिका का ध्यान गया है। इसका उल्लेख भी वे यों करती हैं- ‘नये घरेलू हिंसा निषेध कानून, अनेक

आयामोंवाली समस्या को पहली बार खुली,व्यावहारिक दृष्टि से देखता है| यह कानून स्त्री की शरीरिक ही नहीं,बल्कि मानसिक प्रताड़ना को भी दंडनीय मानता है|मात्र यह नहीं गहरी असुरक्षा भावना के मद्देनज़र अपराधी को सजा मिलने तक उस स्त्री तथा उसके बच्चों केलिए सुरक्षित छत का प्रावधान करना राज्य का कर्तव्य बनता है| कानून यह भी स्वीकार करता है कि भारतीय समाज में दकियानूनी परंपराओं के चलते कई बार स्त्रियाँ ही नहीं, अनाब्याही बहनें, बेटियाँ और नन्ही बच्चियाँ भी घरों की भीतर अत्याचार का शिकार बनती हैं| हर स्त्री के खिलाफ पुरुष द्वारा घर के भीतर किये गए जुल्म को कानून दंडनीय बताता है|

यथास्थितिवालों के अनुसार इस कानून के माध्यम से स्त्रियाँ अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने की संभावना है| वास्तव में पुरुषवर्चस्ववादी समाज में स्त्रियों का शोषण परंपरावादी मानसिकता को दूर किये बिना स्त्री मुक्ति संभव नहीं होती हैं| "यत्र नार्यस्तु पूज्यंते" की माला जपते हुए समाज यदि घरों के भीतर स्त्रियों की बेगारी के बूते सिर्फ पुरुषों केलिए ही सुविधा के रेशमी घोंसल बनाने में दिल्चस्पी रखता रहा तो उसके द्वारा स्त्री को लाख सोने-रेशम से मढ़ दिया जाए, फिर भी सुखमय परिवार की कामना अंततः एक मरीचिका ही प्रमाणित होगी|"[32] परंपरावादी

मानसिकता में बदलाव अवश्य होना चाहिए| इससे एक हद तक घरेलू हिंसा में रोक ला सकते हैँ।

प्राचीन समय से ही भारतीय समज में कई प्रकार की प्रथाएँ विद्यमान रही हैं जिनमें से अधिकांश परंपराओं का सूत्रपात किसी अच्छे उद्देश्यों से किया गया था। लेकिन समय बीतने पर इन प्रथाओं की उपयोगिता पर भी प्रश्न चिह्न लगता गया। इसके परिणाम स्वरूप पारिवारिक और सामाजिक तौर पर ऐसी अनेक मान्यतायें आज अपना औचित्य खो गयी हैं। दूसरी ओर कुछ परंपरायें ऐसी भी हैं जो बदलते समय के साथ-साथ अधिक विकराल ग्रहण करती जा रही है।दहेज प्रथा ऐसी एक कुरीति बनकर उभरी है जिसने न जाने कितने परिवार को बरबाद कर डाला है। इस प्रथा के अर्तगत युवती के पिता उसे ससुराल विदा करते समय तोफे और कुछ धन देता है। अभी यही धन वैवाहिक संबंध तय करने का माध्यम बन गया है। वर पक्ष के लोग मुह मांगे धन की आशा करने लगे हैं। इसके न मिलने पर स्त्री का शोषण होना,उसे मानसिक और शारिरिक रूप से प्रताडित किया जाना आज बडी बात नहीं है। यही कारण है कि हर विवाह योग्य युवती के पिता को यही डर लगता है कि अगर उसने दहेज देने योग्य धन संचय नहीं किया तो उसकी बेटी के विवाह में परेशानियाँ तो आयेंगी।

जब इस प्रथा की शुरूवात की गई तब से लेकर अब तक इस प्रथा के स्वरूप में कई नकारात्मक परिवर्तन देखे जा सकते हैं। वर्तमान समय में दहेज

व्यवस्था एक ऐसी प्रथा का रूप ग्रहण कर चुकी है जिसके अंर्तगत युवती के माता-पिता और परिवारवालों का सम्मान दहेज में दिये गये धन-दौलत पर भी निर्भर करता है।प्राचीन परंपराओं के नाम पर युवती के परिवारवालों पर दबाव डाल उन्हें प्रताडित किया जाता है। इस व्यवस्था ने समाज के सभी वर्गों को अपनी चपेट में ले लिया है |दहेज़ भारतीय समाज की एक विकृति है जिसमें बहुओं को जलाने, हत्या, इससे सम्बंधित उत्पीडन इत्यादि की घटनाएँ आम है |मृणाल जी ने अपने लेखों के ज़रिए दहेज़ प्रथा से होने वाले अत्याचारों को लेकर विचार- विमर्श किया है| 'स्त्री धन' विवाह के समय में दी गयी पैतृक संपत्ति है| कहा जाता है कि 'स्त्री धन' स्त्री का नितांत 'अपना' है |जितना स्त्री धन उसके पास है ,उतना ही उसका रुतबा सदा श्वसुर कुल में रहेगा| एक स्त्री की दृष्टि से देखा जायें तो उस 'स्त्री धन' से क्या उसे कोई लाभ अपने लिए कभी भी मिल जाता है? लेखिका ने इस प्रश्न को अपने लेख 'उत्पादकों की उत्पादक स्त्री की मुरझाती दुनिया'में प्रस्तुत किया है |

विवाह के समय में मिलने वाली संपत्ति का पूर्ण अधिकार बाद में पति के हाथों में जाता है |सही शिक्षा के अभाव के कारण दहेज़ का विनियोग स्त्रियाँ खुद नहीं कर सकती हैं | पुरानी सामजिक रूढ़ियों के अनुसार वह जीना चाहती है| समाज में दहेज़ की रकम को ज्यादा मूल्य मिलता है,

उस समय स्त्री को एक मनुष्य के रूप में देखने की मानसिकता नहीं है |पुरुषों के हित के लिए सब कुछ अर्पण कर ,खुद चुपचाप स्थिति को सहती रहे तभी वे महान हैं| दहेज़ को लेकर स्त्रियों पर अत्याचार होता ही रहता है |'बहु नहीं धन' लेख के ज़रिए लेखिका ने दहेज़ से त्रस्त नारी की दर्दनाक स्थिति को दर्शाया है| विज्ञापन के माध्यम से ही दहेज़ प्रथा को खूब प्रचार मिलता है |समाज में अपने स्टेटस को बनाए रखने के लिए दहेज़ देना पड़ता है| स्त्री यहाँ बाज़ार की एक चीज़ मात्र बन जाती है | लेखिका स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया के पत्रिका में छपे विज्ञापन का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए समाज में व्याप्त उपभोगी मानसिकता को व्यक्त करती है:-'जिसमें नेपथ्य में एक सज़ा -धजा नव विवाहित जोड़ा माय माँ -बाप के खड़ा मुस्कुरा रहा है और अगर भाग में गहनों से लैस एक माँ गहनों से लदी अपनी छोटी सी बच्ची को दुलारती हुई कह रही है कि कभी यह दिन उनकी लड़की के जीवन में भी आयेगा| विज्ञापन के अंत में पुनः दोहराया गया है कि किस प्रकार जब आपको जमा धन की मियाद पूरी हो जायेगी,तो प्राप्य राशि से आप अपनी बेटी की शादी ऐसी धूमधाम से कर सकेंगे जो शहर में सबसे बहतरीन हो | ज़ाहिर है सरकारी माध्यमों से भी बताया जा रहा है कि आपको अपनी बेटी ब्याहनी है तो खूब रूपया जमा करके रखे।"[33]

दहेज प्रथा से होने वाले अत्याचार को ख़त्म करने के लिए दहेज़ विरोध कानून (1961) में पारित किया गया| कानून अब भी प्रभावशाली नहीं बन गया है | इसका नमूना भी लेखिका प्रस्तुत करती है| दहेज को लेकर बहुओं को पीटे सताए और ज़िंदा जलाए जाने का कार्य भी खूब चलता रहता है| शादी के बाद बहु वर पक्ष वालों के हाथ में उपभोगी चीज़ बन जाती है| भारतीय संस्कृति के अनुसार स्त्रियों को बचपन से ही सब कुछ सहकर जीने का आदेश परिवार द्वारा दिया जाता है |अपने घरवाले भी उसे ससुराल में समझौता करके जीने का आदेश देते हैं| पद्मा नामक गरीब लड़की का निस्सहाय हालत को लेखिका व्यक्त करती है-" पद्मा की माँ शायद इतना रो चुकी थी की उसका गला बैठ गया था| भिंचे गले से वह बताती गयी कि किस प्रकार मौत से दो दिन पहले वह ससुराल वालों की लम्बी फेहरिस्त लेकर घर आयी और रो-रो कर माँ -भाईयों से वितनी करती रही है कि 'मुझे यहाँ बर्तन मलने को रख ले ,पर वहाँ जाने को मत कहो |तब भी समझा-बुझाकर लड़की को वापस भेज दिया गया |उसकी शादी में भाईयों ने अपनी दो स्कूटर बेचकर खर्चा उठाया था| अभागी जीवित रहती तो शायद सफारी सूटों, रेशमी साड़ियों ,अंगूठी तथा स्कूटर की नवीनतम मांग भी पूरी करने को वे बाध्य हो ही जाते |"[34]

पद्मा जैसे कई लडकियाँ हमारे समाज में पायी जाती हैं| पद्मा के ज़रिए भारतीय लड़की की हालत को लेखिका ने प्रस्तुत किया हैं| दहेज़ को लेकर स्त्रियों पर इतना अधिक अत्याचार होने पर भी समाज में कुछ लोगों की मानसिकता निराला ही रहता है |लेखिका अपने मित्र द्वारा बताये गए बातों पर हमारा ध्यान खींचती है |जब लेखिका अखबारी दफ्तर के कार्यालय से अपनी सहकर्मी महिला के साथ एक ऐसी ही संदिग्ध मौत के घटनास्थल को जाने के लिए निकल रही थी ,तब कानूनी दुनिया से सम्बन्ध रखनेवाले एक मित्र ने कहा " दहेज़ के लिए की जाने वाली हत्याओं और ज़्यादातियों का प्रसंग उठाये जाने पर उनकी पहली प्रातिक्रिया यह थी कि जी, आजकल की लड़कियों में टालरेंस (सहनशीलता)की कमी हो गयी है| वे एडजस्ट (समझौता) करना नहीं जानतीं। यह बताये जाने पर कि जिस वक्त मुँह में कपडा ठूँस कर गला घोंटा जा रहा हो या किरासन का पीपा सिर पर उंड़ेलकर माचिस से आग लगायी जा रही हो, उस समय एक हठयोगी ही सहनशीलता या समझौतापरस्ती का विलक्षण प्रदर्शन कर सकता है, उन्होंने अपने ठेठ हरियाणवीं अंदाज़ में कहा, कि जी हैं, सो कुछ ज़्यादती ज़रूर हो जाती है|"[35]

दहेज़ विरोध कानून में छेद ही छेद है | इस कानून की कमजोरियों को लेकर लेखिका कहती है कि दहेज़ लेना और देना दोनों जुर्मा होते हैं| कानूनी जटिलाताओं के कारण ही केस दर्ज होने के बाद भी अपराधी को सज़ा मिलना कठिन होता है| स्त्रियों को हमेशा अत्याचर सहना पड़ता है| संविधान में कानून की मात्रा अधिक होते हुए भी स्त्रियों को न्याय नहीं मिलता है| ससुराल में जलकर मरी तरविंदर की हालत प्रस्तुत करते हुए लेखिका बताती है कि समाज में इस प्रकार का अत्याचार चलता रहता है| लड़कीवालों को आवाज़ उठाने पर भी न्याय नहीं मिलता है |उन्हें चुप कराया जाता है| भारत में कानून अनेक होते हुए भी एक नागरिक के रूप में भी स्त्री को न्याय से दूर रखता है| इसलिए कानून पर रखे विशवास का भी हनन होता है| "तरविंदर की बूढ़ी माँ काँपते स्वर में पूछती है-कितने-कितने हमने जुलूस निकले सुभद्रा भैन (सुभद्रा बुठालिया) कितना हमारे लिए लड़ी, कहाँ कहाँ नहीं गए, क्या हुआ? कभी सोचते हैं जी, बड़ी गलती की, कानून पर भरोसा किया |जब गए थे अपनी बेटी की मट्टी वहाँ से लाने ,तो अपना दिया सामान भी ट्रक में ले आते और बेटी के साथ ही चिता में जला देते और उनकी लड़की को.|"[36] परम्परागत रूढिवादी मानसिकता में बदलाव लाये बिना इस समस्या का समाधान नहीं मिल सकता है| लेखिका अपनी बातों को स्पष्ट

करती हुई कहती है कि " स्थिति का यदि जड़ से प्रतिकार होना है तो हमें समाज में स्त्री की स्थिति और विवाह दोनों के ही प्रति अपने बुनियादी पारंपरिक रुख में परिवर्तन करना होगा | जब तक हमारे यहाँ वैवाहिक सम्बन्ध दो व्यक्तियों के पारस्परिक प्रेम पर आधारित होने की बजाय बिरादरी और घरवालों के माध्यम से 'ठहराए पारिवारिक सामजिक समझौते 'के रूप में तय होते रहेंगे 'दहेज़ के लिए हाशिये पर हमेशा जगह बनी रहेगी |न पुरुष उस आक्रामकता से बरी हो पायेगा जो भारतीय समाज में उसका पुरुष होना उसे देता है, न ही स्त्री उस आत्मदया और भीरुता की काली परछाईयों से छूट सकेगी जो उसे बार-बार खरीदे ,बेचे और जलाए जाने पर बाध्य करती है |"[37] रूढिग्रस्त मानसिकता में सख्त परिवर्तन की ज़रुरत है |धन के लालच में आज कई विवाह होते हैं| इसमें दो व्यक्तियों के बीच मानसिक सामंजस्य नहीं होता है| दहेज़ प्रथा के कारण होने वाली हत्याओं पर रोक लगाने के लिए कई कानून उपलब्ध हैं | फिर भी इससे सही न्याय पाने में स्त्री असमर्थ हुई है |लड़कीवालों की स्थिति भी ऐसी ही है |कई कानूनों के होते हुए भी अत्याचार की शिकार बनी स्त्रियों का ब्यौरा लेखिका प्रस्तुत करती हैं- "1975 से 1979 तक प्रेस द्वारा छापी गयी दहेज़ के लिए जलाई -सताई जानेवाली महिलाओं से संबद्ध खबरों के सर्वेक्षण से पता चलता है |1975 में

ऐसी कुल 670 घटनाएँ प्रकाश में आयीं और 1979 तक जाते-जाते उनकी संख्या 1676 हो गयी थी |इनमें नवविवाहिताओं द्वारा आत्महत्या किये जाने की घटनाएँ शामिल नहीं हैं | 1979 में बहुओं को जलाए जाने की कुल घटनाओं में से 744 उत्तरप्रदेश में ,364 महाराष्ट्र में ,249 आँध्रप्रदेश में ,148 दिल्ली में ,98 राजस्थान में ,48 पश्चिम बंगाल में ,23 पंजाब में ,2 तमिलनाडु में तथा 2 कर्नाटक में घटी |1978 में दहेज़ के लिए की गयी 35 हत्याओं की रीपोर्ट देश भर में दर्ज की गयी |इनमें से कुल आठ मामलों में अभियुक्तों को सज़ा मिली |1979 में इन रिपोर्टों की संख्या बढ़कर 54 हो गयी ,जिसमें से दो अभियुक्तों को सज़ा मिली |1979 से 1981 के बीच 1133 स्त्रियों के अप्राकृतिक तरीके से मरने की रिपोर्ट देश भर में दर्ज हुई |उनमें से कुल 234 मामले विभिन्न घटनाओं के तहत जांज अदालतों में गए और उनमें से भी मात्र 50 में मुक़दमा चल पाया है |"[38] दहेज़ प्रथा से होने वाली अमानवीय कृत्यों को सामने रखते हुए स्त्रियों की सामजिक स्थिति की ओर लेखिका हमारा ध्यान आकर्षित करती है |

'स्त्रीषु हिंसा हिंसा न भवति ' में भी लेखिका ने स्त्रियों पर होने वाली हिंसा के प्रति आवज़ उठाने का कार्य किया है | पेड़-पौधों से लेकर

चींटी तक को कष्ट न पहुँचाने की शिक्षा देने वाले हमारे घरों में पति से लेकर सास तक और बाहर फैक्टरी के सेठ से लेकर थानेदार तक,सब स्त्री द्वारा अन्याय या प्रतिरोध करने पर वे तुरंत या उसके विरुद्ध हिंसक हो जाते हैं|लेखिका इसके लिए उदाहरण भी प्रस्तुत करती है। "अहमदनगर की बीडी कामगार यूनियन में स्त्री कामगारों द्वारा दिन- रात झेले जाने वाले बलात्कार भय का उल्लेख किया (मालिक दिहाड़ी का पैसा काट रहा हो या पत्ते कम तौलता हो या समय पर दिहाड़ी देने से इनकार करता हो तो जो औरत फैक्ट्ररी के अहाते में उठकर इस शोषण का प्रतिकार करती है उसे दंड मिलता है, कठोर शारीरिक ताड़ना या बलात्कार के रूप में) एक अन्य गोष्ठी में दो अध्यापिकाओं ने बताया कि उनके साथ ही एक तलाकशुदा कामगार महिला को पति ने तलाक दे दिया पर जब स्वाभिमानी पत्नी को अपने पैरों पर खड़े देखा तो पहले तो उसे धमकाने आ गया और फिर उसे स्थायी दंड दे गया- उसके चेहरे पर तेज़ाब फ़ेंक उसे विकृत बनाकर ,कि देखता हूँ -अब तुम्हें कौन ब्याहता है ? अब वह स्त्री अंधी विकलांग और पति मूंछों पर ताव देता फिरता है|पुलिस उसकी दोस्त है'नेता उसके यार |"कर लो जो करती हो -वह अपनी भूतपूर्व पत्नी की उन अन्य कामगार साथिनों से कहता है 'जो उस स्त्री को पाल रही है।"[39] सामाजिक व्यवस्था में हो गयी कमी के कारण इस प्रकार की समस्याएँ बढती जाती हैं |स्त्रियों पर होने वाली हिंसा के प्रति न्यायपालिका

भी चुप्पी साधी है| इसलिए अपराध बढ़ने की संभावना भी ज्यादा है| प्रायः हिंसा की शिकार स्त्री को सुरक्षा और हिंसक को दंड मिलने के बजाय ,स्त्री को ही एडजस्ट कराने का रुख अधिक पाया जाता है |लेखिका आगे कहती है- "हमारे तमाम मिथक और उपाख्यान ,हमारे टी.वी., सीरियल हमारी फिल्में और चलताऊ साहित्य यह सब उसी धीरजवंती, लाजवंती, भागवंती स्त्री के गुण गाते हैं ,जो हिंसा की चुनौती से निपटने के बजाय घुट-घुट कर घुलती रहे या जिसमें ज़हर पीकर या आग में कूदकर प्राण दे दिए |"[40] समाज द्वारा आदर्श नारी की छवि पहले ही निर्धारित हुआ है| स्त्री को त्याग और सहन की मूर्ती बनाकर रखनेवाली व्यवस्था को तोड़े बिना स्त्री मुक्ति संभव नहीं होती है| स्त्री सुरक्षा के लिए भी कई कानून पारित किये गये हैं ,फिर भी किसी अपराधी को दंड देने में न्यायपालिका भी असमर्थ बन गयी है | पुरुषों में निहित हिंसक वृत्ति सामजिक परिवेश की ही देन है| मृणालजी अमेरिका के प्रसिद्ध यौन शास्त्री किंसी के रिपोर्ट को प्रस्तुत करते हुए कहा है-" यदि हर माता के प्रति हर नर में हिंसा और पाशविकता कुदरती होती तो ऐसा क्यों है कि संसार के समस्त प्राणियों में स्त्री-हत्या या बलात्कार की घटनाएँ सिर्फ मनुष्य जाति में ही होती हैं? स्त्री के प्रति सिर्फ इसलिए हिंसा है कि वह स्त्री है, यह तेवर मात्र मनुष्य जाति की ही खासियत है | सिंह जाति में तो नर

अपने छौनों की देखभाल करता है |हाथियों में अक्सर वरिष्ठ हथिनी पूरे झुण्ड की अधिपति होती है और नर पेंगुइन पक्षी अपने संतान के पालन पोषण का पूरा बीड़ा उठाता हैं |"[41] समाज में बदलाव लाये बिना इस प्रकार की हिंसा ख़त्म करना आसान काम नहीं है |

स्त्रीयाँ मजबूरीवश वेश्यावृत्ति का धंधा अपनाती है | 'वेश्यवृत्ति और कानूनी मान्यता का सवाल ' लेख में मृणालजी ने समाज में वेशयाओं की बेदहत्तर स्थिति को दर्शाया है| वेश्यालयों के मालिक या दलाल को कानून द्वारा दंड नहीं मिलता है| वेश्यवृत्ति करने वाली हर एक स्त्री को दंड मिलता ही रहता है | लेखिका ने इस में कई सवाल उठाये हैं| क्या वेश्यावृत्ति ऐसा अपराध है जिस में दंड की भागी सिर्फ वेश्या हो जो अक्सर अनिच्छा से यह काम करती है, वह पुरुष नहीं, जो सदा स्वेच्छा से उसका शरीर खरीदता है? वेश्यवृत्ति करने वाली स्त्री को ही हमेशा अपराधी माना जाता है| वेश्यावृत्ति से भी पुरानी धंधा है वेश्याओं की दलाली का | मनुष्य को छोड़कर कुदरत के किसी भी प्राणी समूह में एक गुट द्वारा दूसरे गुट का यौन शोषण या खरीद-फ़रोख्त नहीं होती है| कानून द्वारा इस में रोक लगा सकता है| फिर भी समाज

स्त्री को दोषी मानता है| वेश्यावृत्ति कानूनी होने से वेश्याओं के स्वास्थ्य की जांच होती रहेगी और समाज में यौन रोगों का प्रसार भी घटेगा|

जब वेश्या इस धंधे में भी आती है तो वह भी निरोगी होती है| उसको जो छूत लगाती है वह पुरुष ग्राहकों से ही है |बहुस्त्रीगामी पुरुष ग्राहकों के द्वारा ही उसे रोगग्रस्त होना पड़ता है |इस प्रकार होने पर भी समाज में वेश्याओं को ही अपराधिनी मानी जाती है| कई तरह के कानून का निर्माण हुआ है फिर भी स्त्री सुरक्षा के लिए यह अभी तक पर्याप्त नहीं बन सका है |समाज में वेश्याओं की स्थिति दर्दनाक है |

किसी न किसी कारण से अपने पारिवार से बिछुडी हुई महिला शरणार्थी की दर्दभरी कहानी को ' महिला शरणार्थी की त्रासदी' में अंकित किया गया है| लेखिका के अनुसार महिला शरणार्थी शिबिरों में आती है ,ज्यादात्तर अनपढ़ और गंवार होती है| इसलिए उसे कमाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है | यह महिलाएँ कैसे रहती हैं? अपना गुज़ारा कैसे करती हैं? इन सभी बातों को इस निबंध में व्यक्त किया गया है | वर्तमान समय में ही समाज में शरणार्थियों की संख्या बढ़ती रहती है| शरणार्थियों में अधिक मात्रा में स्त्रियाँ पाई जाती हैं |प्रवासी के रूप में आने के

कारण और अनपढ़ होने के कारण उनको कई तरह के शोषणों का शिकार बनना पड़ता है |अपने देश छोड़कर आने वालों को यहाँ कानूनी मान्यता नहीं मिलती है | शिबिरों में या झोंपड़ियों में रहने वालों को अपनी ज़िंदगी गुजरने के लिए काम करना पड़ता है| कामगारी के क्षेत्र में भी उसे शोषण सहना पड़ता है |एक ओर उसे असुरक्षा का भय और दूसरी ओर शोषण का भय इन दोनों की ज़िंदगी डरावना बनाते हैं| शरणार्थी स्त्रियाँ पारंपरिक,सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा से अधिक वंचित होती हैं |महिला शराणार्थियों बलात्कार की शिकार बनाने की संभावनाएँ अधिक मात्रा में हैं|" अभी हाल में दिल्ली में एक नौ साल की बँगलादेश से भगाकर लाई गयी बच्ची के साथ पुलिसकर्मियों द्वारा सामूहिक बलात्कार का जघन्य प्रकरण जब अखबारों ने उघाड़ा, तो उसके साथ ही यह बात भी सामने आयी कि कैसे कई दिनों तक राजधानी के बीचोबीच पुलिसकर्मियों द्वारा उस मासूम और सहमी हुई बच्ची का लगातार शोषण होता रहा था |लेकिन फिर भी (कभी बच्ची के हिन्दी न जानने तो कभी उसकी बँगला का 'समुचित' अधिकृत सरकारी अनुवाद करने वाला न मिलने का बहाना देकर)उसकी पुलिसिया रपट दर्ज़ नहीं की गई |"[42] ऐसे सैकड़ों मामले दुनिया भर में घट रहे है|

पुलिसिया या कानूनी मदद की ही तरह कानूनी नागरिकता से वंचित होने के कारण शरणार्थ स्त्रियाँ ,राशन कार्ड बिजली तथा पानी जैसी न्यूनतम नागरिक और स्वास्थ्य सुविधाओं से भी वंचित रखी जाती हैं| उनसे काम कराने वाले मालिक उनकी ऐसी असुरक्षित स्थिति का पूरा लाभ उठाते हैं |गरीबी तथा डर के कारण शरणार्थी स्त्रियाँ प्रायः वेश्यावृत्ति करनेवालों के चंगुल में भी आसानी से फंस जाती हैं |लेखिका अपने बातों को स्पष्ट करते हुए कहती है- " आज जर्मनी की सीमा से लेकर कलकत्ता बैंकोक की गलियों तक एक ऐसी वेश्याओं की भीड़ लगी हुई हैं| विशेषज्ञों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एड्स संक्रमण का सबसे अधिक खतरा इसी जमात को है ,और कानून तथा स्वास्थ्य संगठनों की जद से बाहर होने के कारण शेष नागरिकों में इनकी मार्फ़त घातक एड्स विषाणु बड़ी तेज़ी से फ़ैल रहे हैं|"[43] इस समस्या में भी कानून की कमी हम देख सकते हैं| अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी श्रम कानून(इंटरेस्टेड माइग्रेशन एक्ट 1979) है |लेकिन वह अब तक उपेक्षित सा ही रहा आया है| सरकारी कार्यवाही के बिना इस प्रकार की ज्वलंत समस्या का समाधान हम नहीं कर सकते हैं।

भारत में दलित स्त्रियों की स्थिति भी अत्यांत कष्टदायक ही है| आज भी हालत ऐसी है कि यदि आप एक दलित हैं; उस पर भी औरतजात,तो

प्रताडना और उत्पीडन उनके जीवन का अनिवार्य हिस्सा बनता चलता है| भारतीय स्त्री की संघर्ष चेतना और नैतिक गरिमा को लेखिका ने कई निबंधों में उठाया है |समाज में एक और अत्याचार बढ़ता ही रहता है और दूसरी ओर प्रतिरोध भी उठता रहता है| मृणालजी ने 'भँवरी नाम है एक लहर का ' लेख के ज़रिए वर्तमान भारत की लोकतांत्रिक सामाजिक स्थिति की ओर हमारा ध्यान खींचा है| समाज के दो चेहरे लेखिका अखबारों में छपे दो समाचार के माध्यम से प्रस्तुत करती है| उनमें जहाँ प्रमुख खबरों में “पंजाब मुख्यमंत्री के पोते गुरुकीरत सिंह की बलात्कार के आरोप में गिरफ्तारी की सूचना है, तो वहीं कहीं आस-पास (या भीतरी पन्नों में) यह खबर भी दीखती है कि असाधारण साहस और कर्तव्य पारायणता केलिए इस वर्ष का 'नीरजा भनोट स्मृति पुरस्कार ' राजस्तान के भतेरी गाँव की दलितमहिला-भँवरी बाई को दिया जाएगा |"[44]

राजस्थान में रहने वाली भँवरी बाई समाज सेविका का काम करती है| सरकारी प्रोत्साहन पर अपने गाँव में गैरकानूनी बालविवाह रोकने का जो प्रयास उन्होंने किया ,इससे रुष्ट होकर उच्च वर्ग के शोषण का शिकार बनना पडा| उसके साथ बलात्कार भी किया गया | भँवरी बाई के परिवार को नाष्ट करने का सारा कार्य उन्नत लोगों द्वारा किया गया | भंवरी बाई हार मानने

केलिए बिलकुल तैयार नहीं थी| न्याय मिलने केलिए उसने खूब लड़ा | भँवरी सरकारी विकास कार्यक्रम से जुड़कर साथिन बन्ने से पहले पूर्णतः निरक्षर थी| गाँव में साक्षरता कार्यक्रमों की शुरुवात करने के साथ उसने अपने-आप को साक्षर बनाया| भँवरी का पति मोहन सिंह उसे हमेशा हिम्मत बढाने का कार्य करता रहता था| उसको भी कई प्रकार के कष्ट सहने पड़े | लेखिका भँवरी के माध्यम से एक और भारतीय स्त्री की संघर्ष चेतना की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती है दूसरी बात यह है कि आज भी स्त्री उच्च वर्ग के शोषण की शिकार है, और राजनीतिज्ञों द्वारा ही शोषण खूब चलता है| इसके विरुद्ध आवाज़ उठाने का आह्वान भी लेखिका करती है | लेखिका बताती है -"जैसा कि महाभारत युद्ध के समय कहा गया था; देश की जनता के हर अंश को अपना-अपना खेमा इन्हीं दोनों में के बीच चुनना है| अब हाशिए पर बैठकर लहरें गिनने का सुहाना समय जा चुका है| जो लडेगा नहीं वह भी मारा जाएगा|"[45]

5.5. मीडिया जगत में घुटती स्त्रियों की स्थिति :-

समाज के हर क्षेत्र में स्त्रियों पर अत्याचार बढ़ता दिखाई पड़ता है। समाज में स्त्रियों के प्रति होने वाली रूढिगत मानसिकता को दूर करने से

परिवर्तन संभव हो जाता है | पुराने ज़माने से लेकर अब तक मीडिया जगत में स्त्रियों के प्रति अत्याचार हो रहा है | स्त्री को उपभोग वस्तु के सामान मानने वाली मानसिकता को अब ज्यादा देखा जा सकता है |मृणाल पाण्डे जी ने 'जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं' ,निबंध के ज़रिए सिनेमा जगत में अभिनेत्रियों की हालत का आंकन किया है| पुराने- ज़माने के नाटकों में स्त्री का रोल पुरुष करते थे| उस समय नाटक में अभिनय केलिए स्त्री को परिवारवाले नहीं भेजते थे| धीरे-धीरे परिवर्तन के साथ स्त्री ने भी अभिनय जगत में पैर रखा| अभिनय क्षेत्र से अभिनेत्रियाँ धीरे-धीरे विलुप्त हो जाती थीं| लेखिका कुछ अभिनेत्रियों का ब्योरा भी प्रस्तुत करती है | अभिनेत्रियों को प्रसिद्धि के शिखर तक पहूँचने नहीं देते थे| उस समय की सामाजिक परिस्थितियों के कारण वे जल्द ही गृहिणी बन जाती थी | दादाभाई पटेल वह साहसी निर्देशक था जो जोखिम उठाकर लतीफा बेगम और एक अन्य नर्तकी को हैदराबाद से ले आया| " 'इंदरसभा' नाटक में लतीफा बेगम का नृत्य इतना मशहूर हुआ कि दर्शकों के ठट्ठ- के- ठट्ठ उमड़ने लगे | फिर सामजिक यथार्थ रंग लाया और एक दिन एक अनाम रसिक रईस लतीफा जान को रंगमंच की विगं से अपने ओवरकोट में

छिपाकर फिटन में उड़ा ले गए और जनश्रुति के अनुसार, उन्हें अपने घर में डाल लिया |"46 इससे अभिनेत्रियों को अभिनय से छूट जाना पड़ता था|

दादा साहब फालके ने 'भस्मासुर मोहिनी' फ़िल्म बनाई तो उन्होंने दो स्त्रियों को ही (पहली बार) स्त्रीयों के रोल में रजतपट पर उतारा | कमलाबाई ने अपने अभिनय केलिए लोकप्रियता हासिल की थी| फिर भी उसे जो सामजिक अनुभव मिला, वह बुरा था| लेखिका कमलाबाई के ज़रिए उस समय के अभिनेत्रियों के प्रति समाज में होने वाली मानसिकता को व्यक्त किया गया है। 'सिनेविजन' पत्रिका को दिए अपने साक्षात्कार में कमला बाई ने कहा- "फिल्मों में अभिनय करने को कोई भी लड़कियों को प्रोत्साहित नहीं करता था....हमें भारी विरोध झेलना पड़ा था, खासकर उन अभिनेताओं की ओर से जो अब तक औरतों के रोल निभाते रहे थे। वे हमसे बहुत चिढ़ते थे | बाल गन्धर्व जैसों के दबाव में तो कुछ कंपनियों ने औरतों को काम न देने की नीति कठोरता से अपना रखी थी | बाल गन्धर्व यह तो चाहते थे कि मेरे पति उनके बरक्स पुरुष पात्र का रोल करें ,लेकिन जब मेरे पति ने यह शर्त भी रखी, कि उनके साथ उनकी पत्नी तथा सास को भी कंपनी के नाटक में रोल देना होगा, तो उन्होंने मेरे पति को लेने से मना कर दिया।"47

पहले सिनेमा में अभिनय करने के लिए स्त्रियों को नहीं छोड़ते थे |उस समय की सामाजिक धारणा भी यह थी कि स्त्रियों को घर से बाहर काम करने से बदनाम ही परिवार को मिलेगा |पुराने ज़माने के बदले आधुनिक काल में बदलाव भी हम देख सकते हैं| स्त्रियों पर होने वाले शोषण भी उसी प्रकार चलते रहते हैं |सिनेमा जगत में काम करने वाली महिलाओं की स्थिति भी अत्यंत दर्दनाक है | केरियर में वे आगे आये तो पारिवारिक जीवन सुखमय नहीं होता |परिवार वाले भी उसे धन कमाने की वस्तु के रूप में इस्तेमाल करते हैं| आर्थिक रूप से स्वालंबी होती स्त्री ,अपनी कमाई रिश्तेदारों के हाथ में देते हैं| उसे बृहत्तर सामाजिक संरक्षण के अभाव में अनिच्छा होते हुए भी किसी न किसी पुरुष का सहारा लेना ही पड़ता है| यह पुरुष प्रायः उसके पिता, पति या भाई ही होता है| आर्थिक रूप से स्वालंबी होने वाली स्त्रियों की दर्दनाक स्थिति का ब्यौरा लेखिका प्रस्तुत करती है| शांता आप्टे बी.ए हिन्दी फिल्मों का "स्टोर्मे पेट्रेल "(बवंदारी पटाखा)के संज्ञा से प्रसिद्ध होने वाली अभिनेत्री थी |निजी जीवन में भी लीक से हटकर चलती थी |सार्वजनिक रूप में शराब पीनेवाली ,और अपने खिलाफ अंड-बंड लिखने वाले आलोचकों की छडी से पिटाई करने का हौसला रखने वाली भी रही | इतनी सारी कमयाबी रखने वाली शांता आप्टे अपने भाई पर भरोसा रखने

वाली थी |भाई बाबूराव इससे लाभ उठाने वाले आदमी थे |" बाबुराव जैसे बहन की कमाई पर मौज उडानेवाले और उसका कारोबार संभालने के नाम पर उसका पैसा उड़ाने वाले अनेकों भाई हमें आज भी फिल्म नगरी में मिल जायेंगे |शांता बाई ने बाबुराव के साथ मिलकर 'शांता आट्टे कसर्न्स 'नाम से अपनी जो कंपनी बनाई थी ,उसे बाबुराव ने कामधेनु की तरह दुहा, और बाद को खुद शादी करके तब तक फटेहाल हो चुकी बहन को उपेक्षा के अँधेरे में अकेले भटकने को छोड़ दिया |"[48] शांता आप्टे एक उदहारण मात्र है |शांता जैसे कई प्रसिद्ध अभिनेत्रियों की हालत इस प्रकार दर्दनाक दिखाई पड़ता है जिनको अपने ही परिवार वालों के हाथों से कठिनाईयाँ झेलनी पड़ती हैं| तेज़ी से बढ़ती ज़िंदगी को संवारने के लिए मानवीय मूल्यों को नष्ट कर आगे बढ़ने वाले आदमी का दृश्य आज हर कहीं हम देख सकते हैं| अभिनेत्रियों को एक ओर सामाजिक रूढ़ियों का भय सताता रहता है दूसरी ओर परिवार वालों का शोषण।

सिनेमा क्षेत्र के काम करने वाली अभिनेत्रियों को कठिन परिश्रम करना पड़ता है| पुराने ज़माने में स्त्रियों पर अनुशासन ज्यादा लगता था| आज समय के बदलने पर तरीका भी बदल गया है| स्त्री का सौंदर्य प्रदर्शन करके धन जुटाने की प्रक्रिया चल रहा है| अभिनय जगत में भी अद्भुत प्रतिभा का जन्म भी हुआ है | प्रतिभावान अभिनेत्रियों को ज़िंदगी में सफलता

नहीं मिलती है| लेखिका बताती है कि "अभिनय जगत की दुर्वह संकरी गली से गुज़री ऐसी विलक्षण औरतों के भरपूर जीवन पर केन्द्रित फिल्में या उपन्यास आज भी लगभग नहीं हैं तो इसका कारण यह नहीं कि इन औरतों में अपना वह दुर्लभ जीवन भरपूर नहीं जिया। बल्कि यह कि उन्हें चित्रित कर पाने वाले लेखक और निर्देशक हमारे पास नहीं हैं। ऊपरी तौर से प्रेममयी और भीतर से नितांत प्रेमशुन्य जीवन का जीवट भरा साक्षात्कार ऐसी महिलाओं को कितना उदार और बड़ा बनाता है। पर विडंम्बना देखिए वह हमारे साधारण लेखक-निर्देशकों को अब तक महान नहीं बना पाया|"[49]

सिनेमा जगत के अलावा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी स्त्रियों पर अत्याचार होता रहता है। महिला पत्रकारों की स्थिति इससे कुछ भिन्न नहीं हैं। 'महिला पत्रकारों की स्थिति' में आज की पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करने वाली महिला पत्रकारों की हालत को प्रस्तुत किया गया है। पत्रकारिता के क्षेत्र में काम करने वाली स्त्रियों को उच्च पद हासिल करना मुश्किल की बात है। अंग्रेज़ी मीडिया में स्त्रियों की भागीदारी ज़्यादा है। "भाषायी मीडिया से जुडी अधिकांश महिलाएँ प्राय: मालिकों केलिए कम तनख्वाह के बावजूद अपनी अपनी उपलब्धता के बूते ही वहाँ दाखिल हो पाई हैं। स्वभाव से शांतिप्रिय और अज्ञानकारिणी होना उनके चयन की दूसरी बडी वजह है। प्रसूति अवकाश तथा भत्ता, सामान्य वेतन, बच्चों की देखभाल का प्रावधान सरीखी बातें इन्हीं गुणों के चलते उनके लिए आज भी प्राय: आकाशयुक्त कुसुम

ही हैं।"[50] मीडिया की 'सबको खबर दे, सबकी खबर ले' वाली न्यायप्रिय और अग्रगामी छवि के तले व्याप्त गहरा अज्ञान, अन्याय और अहंवादिता को इसमें दर्शाया गया है। "अंग्रेज़ी धर्मग्रथों की लोकप्रिय उक्ति है:- 'फिजिशियन हील दामदेल्फ (चिकित्सकजी, पहले अपना इलाज कीजिए) महिला पत्रकारों के शोषण से भरी यह रपट भी मीडिया से यही कह रही है: 'सबको खबर देनेवालों, कभी-कभार अपनी खबर देनेवालियों की खबर भी ले लिया करो।"[51]

'बॉलिवुड में मौत' में भी लेखिका अभिनेत्रियों की दुस्थिति का खुलासा चित्रण किया है। सभी के देह और कमाई ठनके माता-पिता, पति, भाई, पुत्र अथवा प्रमियों की जमात द्वारा खुलकर उपभोग किया गया। स्थायी प्रेम केलिए तडपने वाली स्त्रियाँ पुरुष द्वारा वंचित होना पडता है। अभिनेत्रियों की ज़िन्दगी भी ऐसा होता है। आर्थिक रूप से स्वावलबी होने पर भी अंत में अकेला रहना पडता है। मृत्यु पर्यंत उनकी संपत्ति हडपने केलिए रिश्तेदारों की भीड होने लगते है।

5.6. नारीवादी सबंधी विचार-विमर्श

'यह तो नारीवाद नहीं' के ज़रिए लेखिका सच्ची नारीवाद की व्याख्या हमारे सामने प्रस्तुत करती है | "नारीवाद कतई स्त्रियों को वृहत्तर समाज से अलग-थलग रखकर देखने और हर क्षेत्र में पुरुषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नहीं| यह तो एक समग्र दृष्टिकोण है, जो संवेदनशील नागरिकों में पहले शोषित और प्रवंचित स्त्रियों की स्थिति के प्रति सहानुभूति और मानवीय दृष्टिकोण विकसित करके उसके उजास में पहले शोषित और प्रवंचित तबकों को समझने की क्षमता देता है| साथ ही उनके प्रति एक तरह की सदयता तथा कर्मठ दायित्वबोध भी जगाता है |"[52] नारीवाद को समग्रता से देखने का प्रयास लेखिका करती है| नारीवाद के नाम पर होने वाली झूठी बातों को वे नकारती हैं| " नारीवादी शब्दावली की ओट में छोटे से संपन्न वर्ग की स्त्रियों की स्वतंत्रता और उपभोगवृत्ति को पूरे देश की स्त्रियों की स्थिति बताते हुए आर्थिक, सामाजिक असमानताओं को जायज ठहराना और मुक्त बाज़ार व्यवस्था तथा स्वकेन्द्रीत उपभोक्तावाद को सभी भारतीय स्त्रियों केलिए एक बेहत्तर विकल्प बताना, यह एक दारुण झूठ के अलावा कुछ नहीं| यदि सच्चे नारीवाद को बचाए रखना है,तो हमें हर क्षेत्र में निर्ममता से इस झूठ का पर्दाफाश करना ही होगा|"[53]

'नारीवादी आन्दोलन की विडंबना' में लेखिका ने नारीवादी आन्दोलन की विडंबना को पर्दाफाश किया है| नारीवादी आन्दोलन को बीसवीं शती में जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ा उसका अंकन इसमें प्रस्तुत किया गया है| एक ओर शहरी महिलाएँ शिक्षित होकर राजनैतिक कार्यक्षेत्र में भी अपनी पैर जमाकर रख रही हैं| दूसरी ओर ग्रामीण औरतें अपने जीवन को स्वस्थ रखने के लिए या आजीविका चलाने के लिए असुरक्षा का बोध झेल रही हैं| भूमंडलीकृत बाज़ार-व्यवस्था ने जो नए रोज़गार आई.टी तबके या आउट सोर्सिंग द्वारा पैदा किये हैं; उनके लिए कुशल, सुशिक्षित और शहरी होना ज़रूरी है| अधिकतर महिलाएँ कामगार नहीं हैं | इसलिए अपने स्वास्थ्य के लिए असुरक्षित और कम आमदनी वाले धंधे अपनाती हैं| आज सौंदर्य प्रतियोगिता के आयोजन भी खूब चल रहे हैं| पहले 'मिस इंडिया' होते वक्त कई प्रकार की बाधा शहरी स्त्रियाँ करती हैं| फिर वह सिनेमा के कार्य क्षेत्र में गुम हो जाती है| लेखिका आगे बताती हैं कि " हमारे 'उदित भारत' का मध्यवर्गीय समाज और उसकी महिलाएँ आत्मकेंद्रित और बृहत्तर सामजिक सच्चाई की ओर जिस तेज़ी से लापरवाह होती जा रही है वह स्वस्थ नहीं है| आज की प्रौढ़ हो चली महिला नारीवादियों ने जब स्त्रियों को अपनी देह और अपने जीवन पर अधिकार दिलाने के लिए आन्दोलन किया

था तो इस इच्छा से नहीं कि उस आजादी का 'विलय' 'काँटा लगा' गर्ल की अक्रामक उच्छृंखलता और 'सैयां दिल में आना रे' की हंटरवाली के पुरुषों के प्रति हिकारत भरे स्वामित्वभाव में हो जाये?"[54] समाज के सजग वर्ग यानी औरतों को तेज़ी से फैलती सौंदर्य प्रतियोगिताओं से मुक्त होने का उपाय सोचना अत्यंत आवश्यक है। नहीं तो महिला मुक्ति के नाम पर आयोजित होने वाले सौंदर्य-प्रतियोगिताएँ नारी दासता के कारण बन जायेंगी।

भूमंडलीकरण का बढ़ता प्रभाव हर कहीं हम देख सकते हैं| चकाचौंध भरी दुनिया में जीने केलिए धन की आवश्यकता है| धनार्जन केलिए नारी भी खुद सौन्दर्य प्रतियोगिता जैसे कार्यक्रमों में भाग लेकर बॉलीवुड का स्टार बनने का सपना देखती है| सौन्दर्य-प्रदर्शन में नारी की भगीदारी दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है | एक ओर नारीवादी आंदोलनों के माध्यम से नारी मुक्ति की कामना करती है तो दूसरी ओर प्रतियोगिताओं में भाग लेकर नारी अपनी अस्तित्व को भी खो देती है | दुनिया का कोई कोना बाज़ार तंत्र से बच नहीं सकता है | नारीवादियों ने नारी मुक्ति केलिए जो लड़ाई लडी थी ,वह सब विफल बना गया है | बाजारवाद के प्रभाव के कारण स्त्री उपभोग की वस्तु मात्र बन गयी है| स्त्री भी बिकाऊ का माल मात्र है| विज्ञापन के जगत में भी स्त्रियों का खूब इस्तेमाल हो रहा है | पश्चिम की उपभोक्तावाद की जड़ें

आज भारत जैसे देशों में भी जम गयी है| पश्चिम की तरह भारत में भी फैशन और स्त्री देह के प्रति आकर्षण दूर तक व्याप्त है| पहले मध्यवर्गीय प्रौढ़-स्त्रियाँ सौन्दर्य प्रतियोगियाओं ,फैशन जैसे कार्यक्रमों पर विरोध प्रकट करती थीं| धीरे-धीरे यह खत्म हो गया| सूचनाक्रांति और उदारवाद का प्रभाव इसका कारण था| लेखिका प्रस्तुत लेखों के ज़रिए नारीवादी दृष्टिकोण में समय-समय पर आनेवाले बदलाव को हमारे सामने पेश किया है| नारीवाद की विडंबनाओं को प्रस्तुत करके पाठकों को भी सोच विचार करने का मौका लेखिका देती है|

5.7. राजनीति में स्त्रियों का भागीदारी:-

'राजनीति' का शब्दिक अर्थ राज्य की नीति अथवा राज्य या शासन करने की नीति है। मानव सभ्यता के विकास के साथ राजनीति का अस्तित्व भी उभर आया है। परिवार से समाज, समाज से प्रांत, प्रांत से राज्य, राज्य से देश का निर्माण होता आया है। मानव सामाजिक प्राणी होने के कारण किसी भी स्थिति में राजनीति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। समाज और राजनीति का संबंध अन्योन्याश्रित है। मृणालजी ने अपने निबन्धों के ज़रिए राजनीति में स्त्रियों की भागीदारी के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण बातें रखी हैं। भारत स्वतंत्र होकर पचास से अधिक वर्ष हो गये हैं। फिर भी देश की आधी आबादी को अभी तक स्वतंत्रता नहीं मिली है। भारतीय संविधान में स्त्रियों

की सुरक्षा के संबंध में भी कई कानूनों का गठन किया है। फिर भी स्त्री की स्थिति दर्दनाक होती रहती है। 'भारतीय राज-समाज के अर्द्धसत्य' में लेखिका ने वर्तमान समय में नारी की राजनैतिक स्थिति का चित्रण किया है। महिलाओं को लोकतंत्र में बराबर का दर्जा, बराबर के मानवाधिकार और भय से सुरक्षा दिलाने की दिशा में आज ईमानदारी नहीं है। ज़्यादातर महिलाओं के मानवाधिकार का उल्लंघन होता ही रहता है। संविधान में स्त्रियों केलिए कई सुरक्षा नियम बनाये गये हैं, फिर भी स्त्री की सामाजिक हालत बदली नहीं है। संसद में स्त्रियों के प्रति होने वाले अत्याचारों को लेकर चर्चायें होती रहती हैं। ऐसी स्थिति में भी राजनीतिज्ञ महिलाओं को आरक्षण देने केलिए हिचकते हैं। लेखिका स्त्रियों को आगे बढ़ाने का उपदेश देते हुए कहती हैं- "स्त्रियों या अवर्णों या अल्पसंख्यकों के खिलाफ जो प्रवृत्तियाँ आज भी दुलीना से लेकर खूनी दरवाजे तक सर उठा रही हैं, उनको समाप्त करने केलिए एक ऐसे लम्बे कार्यक्रम की जरूरत है, जो लोकतंत्र के हर पाए के भीतर औंरतों के पक्ष में क्रमिक अनुकूलन पैदा करे। प्रजातंत्र जब तक सचमुच में पूरी प्रजा का तंत्र बनने की बजाय कुलीन पुरुषों का तंत्र रहेगा, तब तक उसकी राजनीति और अर्थनीति का आधुनिकीकरण ऊपरी मरीचिका ही रहेगा |"[55]

'भारतीय राजनीति में महिला आरक्षण का सवाल' में भी लेखिका महिला आरक्षण से जुडे कई सवालों को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। भारत

के संविधान में शुरू से राष्ट्र के सभी नागरिकों को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय प्रदान करने विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और आराधना की स्वतंत्रता की बात कही गयी है। इसमें लिंग पर आधारित हर प्रकार के भेदभाव को स्पष्ट विरोध किया गया है। आज़ादी की लडाई में भारत के महिला समाज ने पुरुषों के साथ मिलकर काम किया था। महिलाओं को संसद में या राजनीति में भागीदारी नहीं मिलती है। अगर मिले तो भी वह राजनीतिज्ञों के हाथ के मोहरे मात्र बन जाती है। लेखिका महिलाओं को राजनीति के क्षेत्र में कदम रखने की आशा इसलिए करती है कि “यदि आज उनके हाथ सत्ता आई है, तो कल उनकी अन्य बहनें भी बगावत करना सीखेंगी और चूँकि वे विशुद्ध राजनैतिक तथा आर्थिक आधारों पर संघर्ष करेंगी, अत: ठहरी हुई सडाँधवाली भारतीय राजनीति को बदलने के संदर्भ में उनका रोल कुल मिलाकर प्रगतिशील ही होगा ।"[56] उत्पीडित महिला समाज में जितनी भी राजनीतिक जागृति पैदा होगी, उससे पूरे समाज के जनतांत्रिक रूपांतरण की प्रक्रिया को ही बल मिलेगा। आज अपने परिवार में भारतीय स्त्री व्यक्तिश: दलित है। महिलाओं को अपने हक केलिए लडने का उपदेश लेखिका देती है।

‘पंचायती राज में महिला भागीदारी का एक दशक’ में ग्रामीण स्त्रियों की पचायती भागीदारी के बारे में बताया गया है। अर्द्धसाक्षर और नवसाक्षर औंरतों का पचायत में प्रवेश ने लोकतंत्र में एक निशब्द क्रांति का

सूत्रपात किया है। पचायती सरपंच से स्त्रियों को ज़्यादातर न्याय मिलता रहा है। वर्तमान दौर में ग्रामीण औरतें भी पंचायती राज में सक्रियता से भाग ले रही हैं। लेखिका इससे आशा करती है कि ज़्यादातर महिलाओं को आगे आकर अपनी समस्याओं का समाधान खुद करना आवश्यक ही है। पंचायतों में आकर महिलाएँ पुरुषों की तुलना में विकास से जुडी शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, चारा, ईधन आदि को महत्व देती हैं। पारिवारिक समस्याओं से जुडे मामलों में महिला-पंचों की सक्रिय भागीदारी होती है इससे औरतों तथा बच्चों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक असर पडता है। महिला आरक्षण को लेकर सरकारी तौर पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती है। देश की आधी आबादी को उन्नति के शिखर तक ले जाने केलिए पुरुषसत्तात्मक राजनीति में भी बदलाव लाना आवश्यक है। मृणालजी का मानना है “महिला आरक्षण विधेयक का हश्र गवाह है कि भारत के सबसे त्रस्त्र और गरीब लोगों को सत्ता सौंपना, न तो आसान है और न ही यह वर्तमान शासकीय-व्यवस्था को पूर्णत: स्वीकार्य होगा। फिर भी लोकतंत्र को यदि ठहरे हुए जल की सडाँध से मुक्त करना है, तो इस प्रयास को जारी रखे बिना किसी भी दल या वर्ग की निष्कृति नहीं।"[57]

‘संसद में एक बार फिर असत्यनारायण की जै’ और ‘राजनीति में महिला सशक्तिकरण का मतलब’ में भी आरक्षण संबंधी सवालों को उठाया

गया है। मतदान के समय लोग वोट लिने केलिए स्त्रियों के पास जाते हैं और वोट की मांग करते रहते हैं। सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ आवाज़ उठाते वक्त उसे प्रोत्साहित करते है। इसी वक्त आरक्षण संबंधी आवाज़ उठाते वक्त उस का विरोध करते हैं। "जब वे मुहल्ले की राशन दूकानों के खिलाफ थालियाँ पीटती हैं या जल संकट के खिलाफ खाली मटके लेकर सडकों पर ट्राफिक जाम करती हैं, तब प्रबुद्ध नेता उनसे कहते हैं कि वे क्यों नहीं बड़े लक्ष्यों केलिए अपने को कुर्बान करतीं? लेकिन जब स्त्रियों ने उन सत्पुरुषों के ही पद चिह्नों पर चल कर अपनी 50 प्रतिशत आबादी के आधार पर विधायिका में 33 प्रतिशत आरक्षण माँगा, और जातीय आरक्षण वादियों को आईना दिखाया, तो उन्हें तुरंत परकटी और प्रतिक्रियावादी कह दिया गया ।"[58] नेता गण महिला राजनीति में आने से डरते हैं और उसे पद देने केलिए तैयार नहीं होते हैं। यदि स्त्रियों को स्थान देते तो परिवार से जुडे या सामान्य तबके के काम उस पर सौंपने को वे तैयार हो जाते हैं। पुरुषसत्तात्मक समाज में वे ही सिर्फ सत्ता में बढ़ना चाहता है। संसद और भारतीय संविधान में महिलाओं को ऊँचा स्थान दिया जाता है। लेखिका इस लेख के ज़रिए यह बताना चाहती है कि स्त्रियों को राजनीति में आगे आकर पुरुषों को पर्दे के पीछे बैठाना नहीं, देश की आधी आबादी को भी देश केलिए काम करना है, या देश की प्रगति में भागीदारी होना है। इसलिए स्त्रियों को भी अवसर का उपयोग करना

चाहिए। भारतीय संविधान में लिखित संहिता के अनुसार उसे भी एक नागरिक के रूप में अपना स्थान मिलना ही चाहिए।

'नगर निकायों की राजनीति में स्त्रियाँ' के ज़रिए लेखिका ने महिला आरक्षण से जुडी समस्याओं को उभारा है। जातिवाद की समस्या भी आजकल बहुत होता रहता है। लिंगगत अरक्षण से ज़्यादा महत्व आज जातिवाद को देता है। "महिलाओं केलिए इन निकायों में एक तिहाई सीटों का आरक्षण सिर्फ लिंगगत नहीं, बल्कि जातिगत आधार पर भी किया गया था। उदाहरण केलिए दिल्ली एम.सी.डी की सीटों में 9 दलित स्त्रियों, 16 दलितों तथा 37 स्त्रियों केलिए आरक्षित थीं ।"[59] स्त्रियों को राजनीति में भागीदारी मिलता है। इसके पीछे भी पुरुषों का हाथ है। आज ऐसे एक स्थिति हम अक्सर देख सकते हैं कि परिवारवालों की राजनीतिक पृष्ठभूमि को लेकर ही स्त्रियाँ इसमें भाग ले सकती हैं। लेखिका इस प्रकार का आग्रह प्रकट करती है कि वर्तमान दौर में कामकाज के क्षेत्र में जुडी स्त्रियों की संख्या बहुत है। वे आज घर की चारदीवारी तोडकर खुले समाज में कार्य करने केलिए निकली हैं। स्त्रियों को जरूर राजनीति में आगे आना चाहिए। इसलिए स्त्रियों को हाशिए से निकलकर मुख्य धारा की ओर आना आवश्यक है। स्त्रियों की भागीदारी से भी आगे मानव राशि की प्रगति होगी। संविधान में प्रस्तावित अधिकार के प्रति स्त्री को भी सजग होकर आना चाहिए। मृणालजी ने अपने

इन निबधों के ज़रिए नारी को अपनी अस्मिता को पहचानकर, उनकी स्वत्व को प्रकट करने का भी आह्वान किया है।

5.8. निष्कर्ष:-

मृणालजी निबन्ध लेखन में अपनी खास पहचान देकर हिन्दी साहित्य जगत में अवतीर्ण हुई हैं। अपने इन निबन्धों के ज़रिए वर्तमान समाज की विसंगतियों को खासकर महिलाओं की दयनीय स्थिति का अंकन लेखिका करती है। मृणालजी अपनी लेखनी निरंतर सामाजिक अव्यवस्था के विरुद्ध चालाने वाली लेखिका हैं। वर्तमान दौर में भी स्त्रियों की स्थिति में ज़्यादा बदलाव नहीं आया है। पितृसत्तात्मक समाज द्वारा कल्पित नियमों में जकडी हुई स्त्री आज भी अपने अस्तित्व केलिए भटकती है। स्त्री की सामाजिक स्थिति अन्य हाशियेकृत वर्गों से नीचे है। लेखिका हमेशा नारी को जागृत करके मुख्य धारा में अपनी अमिट छाप बनाने का निर्देश देती है। समाज में पल-पल परिवर्तन संभव होता ही रहता है। उसी प्रकार स्त्रियों को भी अपने ऊपर किए जाने वाले अमानवीय अत्याचार को चुप कर सहन करने के बदले खुला प्रतिरोध व्यक्त करना चाहिए। हमारे महान भारतीय संस्कृति में भी स्त्रियों को ऊँचा स्थान दिया गया है। स्त्री को पूजनीय व्यक्ति मानने वाले समाज ही उसका शोषण करता है। स्त्री को इस प्रकार के छद्म मुखौटे से बाहर आकर, आम मानव की तरह अपना हक हासिल करना चाहिए। लेखिका के अनुसार सागर के नीचे बैठकर लहरें गिनना मात्र नहीं, उस सागर की गहराई को

जानने केलिए उस पर कूद पडना चाहिए। स्त्रियों को नीति मिलने केलिए उसे खुद लडना पडेगा। देश की आधी आबादी के चुप रहने से देश की उन्नति नहीं होगी। आधी आबादी को भी अपनी आवाज़ बुलंद करनी चाहिए। पुरूषवर्चस्ववादी रूढिगत विश्वासों को तोडकर उसे समानता केलिए आगे बढना है। समाज में उन्नति होने केलिए स्त्री-पुरुष की समानता आवश्यक है। मृणालजी अपने लेखों के ज़रिए देश की उन्नति केलिए स्त्री और पुरुष को अपने अस्तित्व के साथ आगे बढाने का आह्वान भी करती है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मृणालजी के सारे लेख सामाजिक सरोकारों से जुडे हुए हैं और स्त्री पक्षधरता उन लेखों की आत्मा है |

सन्दर्भ :-

1.मृणाल पाण्डे -परिधि पर स्त्री :-पृ.17

2.वहीं:-पृ.17

3.वहीं:-पृ.17

4. वहीं:-पृ.17

5.वहीं:-पृ.17

6. वहीं:-पृ.18

7.वहीं:-पृ.18

8.मृणाल पाण्डे -स्त्री देह की राजनीतिसे देश की राजनीति तकः-पृ.17

9.वहीं:-पृ.40

10.वहीं:-पृ.:-पृ.118

11.मृणाल पाण्डे -जहां औरतें गढ़ी जाती हैं|:-पृ.111

12.वहीं:-पृ.115

13.वहीं :-पृ.117

14.वहीं:-पृ.118

15.वहीं:-पृ 118

16.मृणाल पाण्डे- स्त्री लम्भा सफर -:पृ.112

17.मृणाल पाण्डे -परिधि पर स्त्री :-पृ.20

18.वहीं:-पृ.58

19.वही:-पृ.60

20.मृणाल पाण्डे -स्त्री देह की राजनीतिसे देश की राजनीति तकः-पृ.108

21.वहीं:-पृ.108

22 वहीं :-पृ.70

23.मृणाल पाण्डे -जहां औरतें गढ़ी जाती हैं|:-पृ.100

24.मृणाल पाण्डे -स्त्री देह की राजनीतिसे देश की राजनीति तक:-पृ.72

25.वहीं :-पृ.74

26.वहीं :-पृ. 73

27.वहीं :-पृ. 27

28.मृणाल पाण्डे- स्त्री लम्भा सफर -:-पृ.18

29.वहीं:-पृ.19

30.वहीं:-पृ 96

31.वहीं :-पृ.97

32.वहीं:-पृ.98

33.मृणाल पाण्डे -स्त्री देह की राजनीतिसे देश की राजनीति तक:-पृ.53

34.वहीं:-पृ.54

35.वहीं:-पृ.55

36.वहीं:-पृ.57

37.वहीं:-पृ.59

38.वहीं:-पृ.63

39.वहीं:-पृ.64

40.वहीं:-पृ.65

41.वहीं:-पृ.67

42.मृणाल पाण्डे -परिधि पर स्त्री :-पृ.50

43.वहीं:-पृ.51

44.वहीं:-पृ.42

45.वहीं:-पृ.42

46.मृणाल पाण्डे -जहां औरतें गढ़ी जाती हैं|:-पृ.13

47.वहीं:-पृ.15

48.वहीं:-पृ.26

49.वहीं:-पृ.30

50.वहीं:-पृ.59

51.वहीं:-पृ.60

52.मृणाल पाण्डे -परिधि पर स्त्री :-पृ.47

53.वहीं:-पृ.47

54.मृणाल पाण्डे -जहां औरतें गढ़ी जाती हैं|:-पृ.62

55.वहीं:-पृ.74

56.वहीं:-पृ.80

57.वहीं:-पृ.89

58.मृणाल पाण्डे- स्त्री लम्भा सफर -:-पृ.13-14

59.वहीं:-पृ.100

उपसंहार

उपसंहार

श्रीमती मृणाल पाण्डे समकालीन हिंदी साहित्य की एक ऐसी महिला रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनात्मक उपस्थिति दर्ज करके हिंदी सहित्य का संवर्द्धन किया है |वे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कलाकार हैं जिन्होंने गद्य की सभी विधाओं में समान रूप से अपनी कलम सफलतापूर्वक चलाई है। उनकी रचनाओं के केंद्र में स्त्रियों को रखा गया है । वे मीडिया पर्सन हैं और स्पष्टोक्ति उनकी रचनाओं की बड़ी खासियत है। उनकी रचनाओं को समाज का आईना कहा जा सकता है। समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और अन्यायों-अत्याचारों की खुली और उनकी रचानों की उल्लेखनीय विशेषता है । विषय की व्यापकता उनकी रचनाओं में पायी जाती है। अपने समय और समाज की सच्ची अभिव्यक्ति के कारण उनकी रचनाएँ मार्मिक बन पडी हैं | समाज में स्त्री -पुरुष के बदलते संबन्धों और पारिवारिक विघटन को उन्होंने अपनी रचनाओं में मार्मिकता के साथ उभारने की कोशिश की है। मृणाल पाण्डेय ने अपनी रचनाओं में स्त्रियों को धीरज बन्दाने का सराहनीय कार्य किया है। अपनी रचनाओं में उन्होंने न केवल अपने परिवेश की सच्चाइयों को उजागर किया है ,बल्कि पाठक को उन समस्याओं के प्रति सजग रहने का आह्वान किया है | मृणालजी ने हिन्दी साहित्य को जो योगदान दिया है,वह अत्यंत महत्वपूर्ण ही है। समय के साथ सरोकार रखनेवाली उपर्युक्त रचनाएँ उनकी पहचान के चिह्न हैं।

नाटककार के रूप में मृणालजी की ख़ास पहचान समकालीन हिंदी साहित्य में है,ख़ास तौर पर महिला नाटककार के रूप में | 'जो राम रचि राखा', 'आदमी जो मछुआरा नहीं था,' 'काजर की कोठरी', 'चोर निकल के भागा', 'शर्माजी की मुक्ति कथा','धीरे-धीरे रे मना' और 'सुपरमैन की वापसी' आदि उनके नाटक हैं। बाज़ारीकरण का प्रभाव, पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, समाज के हर क्षेत्र में होने वाला भ्रष्टाचार आदि को उन्होंने अपने नाटकों में बहुत ही प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है । हमारे समकालीन सामाजिक, राजनैतिक, अर्थिक और सांस्कृतिक जीवन के सभी पहलुओं पर मृणालजी ने प्रकाश डाला है। इसलिए मृणालजी के नाटक बहुत प्रासंगिक भी हैं। मृणालजी स्वयं पत्रकार होने के नाते पत्रकारिता के क्षेत्र में होने वाले भ्रष्टाचार को भी पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

मृणाल पाण्डे की कहानी , उपन्यास और आलोचना में उनकी दृष्टि स्त्री विमर्शवादी है, किंतु उनके नाटक, इसका अपवाद है। इन रचनाओं में उन्होंने स्त्री को 'परिधि' से 'केंन्द्र' में ला खड़ा किया है तो उन्होंने अपने नाटकों में समाज को, उसकी समस्याओं को, उसमें व्याप्त विसंगतियों –विडम्बनाओं को प्रस्तुत किया है। उनके नाटकों में आज के भ्रष्टाचार, अमानवीयता, राजसत्ता की मक्कारी तथा ईमान्दार आदमी की असहायता और विवशता का चित्र अंकित हुआ है । उनके नाटकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनमें स्त्री-पुरुष संबंधों के सीमित दायरे के बदले व्यापक सामाजिक सन्दर्भ प्रस्तुत हुए हैं। मंचीयता के साथ-साथ शिल्प की दृष्टि से भी उनके नाटक काबिले तारीफ ही हैं।

'विरुद्ध', 'पटरंगपुर पुराण', और 'रास्तों पर भटकते हुए' आदि उनके उपन्यास हैं। मृणालजी ने ऐतिसासिक परिवेश को साथ लेकर अपने उपन्यासों में वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश का अंकन किया है। उपन्यासों की कथावस्तु अत्यंत गहरा चिंतन कर देने वाली ही है। संख्या के रूप में उपन्यास कम होते हुए भी विषय की गहनता उसे अन्य महिला उपन्यासकारों से अलग रखती है। अपने उपन्यासों में केन्द्र पात्र के रूप में नारी है तो भी तत्कालीन समाज में घटित सभी घटनाओं का विश्लेषण इन उपन्यासों में दर्शानीय हैं। संक्षेप में कहा जाये तो मृणालजी ने अपने उपन्यासों के द्वारा पाठकों को सच्चे रूप में आज के समाज में सजग रहने का आदेश दिया है। वर्तमान समाज का भी जीता- जागता चित्र उन्होंने बखूबी से उकेरा है ।इसलिए उपन्यासकार के रूप में मृणालजी का स्थान भी उल्लेखनीय ही है।

'दरम्यान', 'शब्दबेधी', 'एक नीच ट्रैजेडी',' एक स्त्री का विदागीत', 'यानी की एक बात थी', 'बचुली चौकिदारिन की कढ़ी' और 'चार दिन की जवानी तेरी' आदि मृणाल पाण्डे के कहानी संकलन हैं। उनकी कहानी कला अत्यंत साहित्यिक है। उन्होंने अपनी कहानियों के ज़रिए समकालीन सामाजिक यथार्थ का खुलासा पाठकों के सामने किया है। उनकी अधिकांश कहानियों के केन्द्र में नारी ही रही है। फिर भी समकालीन समाज में होने वाली सभी विसंगतियों पर भी लेखिका ने अपनी कलम चलाई है। लेखिका ने हमारे सामने कई मुद्दों को पेश करके उस बात पर सोच-विचार करने का या सजह एवं जागृत रहने का आह्वान दिया है। उनकी

इन कहानियों के आधार पर बताया जा सकता हैं कि पारिवारिक जीवन के विभिन्न पक्ष, स्त्री-पुरुष संबंध, परिवार के सदस्यों के आपसी रिश्ते और उसके बदलते रूप, बाल -मनोविज्ञान, स्त्री के प्रति समाज का दृष्टिकोण, स्त्री को दोयम दर्जे का नागरिक मानने की प्रवृत्ति, पुरुषवर्चस्ववाद का विरोध, नौकरी पेशा नारी की यातनाएँ, मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का खोखलापन, पारिस्थितिक सजगता, वृद्धजीवन का यथार्थ जैसे विभिन्न पक्षों को उजागर करने में मृणालजी की कहानियाँ सफल हुई है।

मृणालजी निबन्ध लेखन में अपनी खास पहचान देकर हिन्दी साहित्य जगत में अवतीर्ण हुई हैं। **'स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक', 'परिधि पर स्त्री', 'ओ उब्बीरी', 'जहाँ औरतें गढ़ी जाती है' और 'स्त्री:लंबा सफर'** आदि समीक्षात्मक निबंन्ध हैं । इनमें संकलित निबन्धों के ज़रिए वर्तमान समाज की विसंगतियों को खासकर महिलाओं की दयनीय स्थिति का अंकन लेखिका ने किया है।मृणालजी सामाजिक अव्यवस्था के विरुद्ध निरंतर लेखनी चालाने वाली लेखिका हैं। वर्तमान दौर में भी स्त्रियों की स्थिति में ज़्यादा बदलाव नहीं आया है। पितृसत्तात्मक समाज द्वारा कल्पित नियमों में जकडी हुई स्त्री आज भी अपने अस्तित्व केलिए भटकती है। स्त्री की सामाजिक स्थिति अन्य हाशियेकृत वर्गों से नीचे है। लेखिका हमेशा नारी को जागृत करके मुख्य धारा में अपनी अमिट छाप बनाने का निर्देश देती है। समाज में पल-पल परिवर्तन संभव होता ही रहता है। उसी प्रकार स्त्रियों को भी अपने ऊपर किए जाने वाले अमानवीय अत्याचार को चुपचाप सहन करने के बदले खुला प्रतिरोध व्यक्त करना चाहिए। हमारे महान भारतीय संस्कृति में भी

स्त्रियों को ऊँचा स्थान दिया गया है। स्त्री को पूजनीय व्यक्ति मानने वाले समाज ही उसका शोषण करता है। स्त्री को इस प्रकार के छद्म मुखौटे से बाहर आकर, आम मानव की तरह अपना हक हासिल करना चाहिए। लेखिका के अनुसार सागर के नीचे बैठकर लहरें गिनना ही नहीं, उस सागर की गहराई को जानने केलिए उस में कूद पडना चाहिए। स्त्रियों को नीति मिलने केलिए उसे खुद लडना पडेगा। देश की आधी आबादी के चुप रहने से देश की उन्नति नहीं होगी। आधी आबादी को भी अपनी आवाज़ बुलंद करनी चाहिए। पुरूषवर्चस्ववादी रूढिगत विश्वासों को तोडकर उसे समानता केलिए आगे बढना है। समाजिक उन्नति केलिए स्त्री-पुरुष की समानता आवश्यक है। मृणालजी अपने लेखों के ज़रिए देश की उन्नति केलिए स्त्री और पुरुष को अपने अस्तित्व के साथ आगे बढाने का आह्वान भी करती है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मृणालजी के सारे लेख सामाजिक सरोकारों से जुडे हुए हैं और स्त्री पक्षधरता उन लेखों की आत्मा है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि मृणाल पाण्डेय जी ने अपने नाटकों में राजनीति और समाज के यथार्थ का व्यापक परिप्रेक्ष्य लिया है तो उपन्यासों , कहानियों आलोचना तथा अन्य रचनाओं में स्त्री सशक्तीकरण और स्त्री अस्मिता पर जोर दिया है।लेकिन इन सब में उनकी मानतावादी दृष्टि ही मुखर है|यह मानवतावादी दृष्टि ही उनकी रचनाओं को विशेष बनाती है |अत: यह कहना समीचीन है कि मृणाल पाण्डेय का साहित्य सृजन अत्यंत महत्वपूर्ण है और प्रासंगिक भी |

परिशिष्ट

<u>शोध छात्रा के प्रकाशित शोध लेख</u>

1.'छप्पर' उपन्यास में अभिव्यक्त दलित चेतना- अनुशीलन (शोध पत्रिका) फरवरी 2011.

2.भारतीयता को बाज़ारी संस्कृति का खतरा :चोर निकल के भागा- अनुशीलन(शोध पत्रिका) जनवरी 2012.

3. एस के पोट्टाकाट के उपन्यास विषकन्यका (जहरीली कन्या)-एक पुनर्पाठ- अनुशीलन (शोध पत्रिका) जनवरी2013.

4.बाज़ारवाद और अपसंस्कृति की लोकधर्मी व्यंग्यात्मक प्रस्तुति: चोर निकल के भागा- संग्रथन फरवरी 2013.

5.भवानी प्रसाद मिश्र जी की कविताओं में: अकेलेपन की अभिव्यक्ति- अनुशीलन(शोध पत्रिका) जुलाई 2013.

संदर्भ ग्रंथसूची

संदर्भ ग्रंथसूची

मूल ग्रंथ:-

1) अरविन्द मोहन((अनुवादक) अपनी गवाही
राधा कृष्णा प्रकाशन
प्राइवेट लिमिटेड, 2/38
अंसारी मार्ग, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002, सं.2003

2) मधु.बी.जोशी(अनुवादक) देवी
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं1999

3) मधु. बी. जोशी(अनुवादक) हमको दियो परदेस
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी
मार्ग,दरियागंज,नई दिल्ली-
110002, सं 2001

4) मृणाल पाण्डे एक नीच ट्रेजेडी
राजकमल प्रकाशन प्रा.लि,
1-बी नेताजी मार्ग, नई दिल्ली-
110 002, प्र.सं-1981

5) ,, ,, एक स्त्री का विदागीत
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं-1985

6) ,, ,, ओ उब्बीरी
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं-2003

7) ,, ,, चार दिन की जवानी तेरी
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
प्र.सं.1995

8) ,, ,, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं.2006

9) ,, ,, पटरंगपुर पुराण
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 2/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं. 1983

10)	,, ,,	परिधि पर स्त्री राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.1996
11)	,, ,,	बचुली चौकीदारिन की कढ़ी राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.1990
12)	मृणाल पाण्डे/क्षमा शर्मा(सं)	बन्द गलियों के विरुद्ध राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.2001
13)	मृणाल पाण्डे/ विष्णु नागर(सं)	बोलता लिहाफराजकमल प्रकाशन, 1-बी , नेताजी सुभाष मार्ग ,नई दिल्ली-110002, सं.2007
14)	मृणाल पाण्डे	यानी कि एक बात थी राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.1990
15)	,, ,,	रास्तों पर भटकतए हुए राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.2000

16) ,, ,, विरुद्ध
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं.1977

17) ,, ,, स्त्री देह की राजनीति से देश की
राजनीति तक
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं.1987

18) ,, ,, स्त्री: लम्बा सफर
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
सं.2012

19) ,, ,, संपूर्ण नाटक
राधा कृष्णा प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, 20/38 अंसारी मार्ग,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं.

सहायह ग्रंथ:-

1)डॉ . एम के अजितकुमारी स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों में सामाजिक चेतना जवाहर पुस्तकालय, मथुरा- 281 001, सं 2003

2)अभयकुमार दुबे लोकतंत्र के सात अध्याय वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, प्र सं-2002

3)अरविंद त्रिपाठी आलोचना के सौ बरस शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली-110032, सं-2003

4)अलका प्रकाश नारी चेतना के आयाम लोकभारती पुस्तक-विक्रेता तथा वितरक, 15-ए महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1, प्र सं.2007

5)डो. अलीस बी. ए स्वातंत्र्य पूर्व हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन सूर्य भारती प्रकाशन, नई सडक दिल्ली 110006, प्र सं- 1996

6) उषा यादव हिन्दी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, सं

7) डॉ. करसन बाई समकालीन हिन्दी नाटकों में सामाजिक चेतना साधना प्रकाशन,60 बी राजीव विहार चन्दीपुखा रोड, कानपूर ,सं 2009

8) किशन पटनायक — भारतीय राजनीति पर एक दृष्टि(गतिरोध, संभावना और चुनौतियाँ) राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली-110002, प्र सं 2006

9) डॉ गंगा प्रसाद विमल — आधुनिक हिन्दी कहानी ग्रंथ लोक, 1/11244 सी, निकट कीर्ति मन्दिर सुभाष पार्क, नवीन शाहदरा दिल्ली-110032, सं-2009

10) जगदीश चतुर्वेदी — स्त्री अस्मिता: साहित्य और विचारधारा, आनंद प्रकाशन, कोलकत्ता-700007 सं.

11) जयदेव तनेजा — हिन्दी नाटक: आज कल तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली-110002 प्र. सं 2000

12)जॉन स्टुअट मिल — स्त्री और पराधीनता अनु. युगक थीर संसद प्रकाशन, मेरठ 250004, प्र सं- 2002

13) दिनेशनन्दिनी डालमिया — नये आयामों को तलाशती नारी नवचेतन प्रकाशन, दिल्ली-110059 सं.2007

14) देवेन्द्र चौबे — समकालीन कहानी का समाजशास्त्र प्रकाशन संस्थान, 4715/21, दयानंद मार्ग, दरियागंज,सं.

15) डॉ. नगेन्द्र — हिन्दी वाङ्मय : बीसवीं शती विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, सं.1972

16) नरेंद्र मोहन — भारतीय संस्कृति
प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली110002,
सं.1999

17) नीरज शर्मा — अंतिक दशक की हिन्दी कहानियाँ
संवेदना और शिल्प
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
110002, प्र सं. 2011

18) नीलम मैगजीन — साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी
सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली-
110049, प्र सं- 1999

19) नीहार गीते — स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों के
उपन्यासों में यथार्थ के विभन्न रूप
पंचशील प्रकाशन, जयपुर, सं.1996

20) नागरत्ना.एन. राव — साठोत्तर हिन्दी नाटकों में नारी
न्यू भारतीय बुक कार्पेशन, दिल्ली
110007, प्र सं. 2001

21) नामवरसिंह — आलोचक के मुख से
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
110002, प्र सं. 2005

22) नासिरा शर्मा — औरत केलिए औरत
सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली
110002, सं-2007

23) डॉ पद्मा चामले — आधुनिक हिन्दी कहानियों में युवा
मानसिकता, समता प्रकाशन, 6,
शास्त्री नगर, कानपुर, सं 1996

24) डॉ. पुष्पपाल सिंह — समकालीन क कहानी सोच और समझ
आत्माराम एण्ड संस, कश्मीर रोड,
सं. 1986

25) डॉ प्रिया नायर — साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास और नगरबोध
जवाहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एवं वितरक, सदर बाज़ार,
मथुरा 281001, सं-2009

26) डॉ भगवती शरण मिश्र — हिन्दी के चर्चित उपन्यासकार
राजपाल एण्ड संज , दिल्ली-110006
सं.2010

27) मधुरेश — हिन्दी कहानी: अस्मिता की तलाश
आधार प्रकाशन, पंचकूला-134109
प्र. सं. 1997

28) मनीषा — हमारी औरतें
शिल्पायन, 10295 लेन नं-1, वैस्ट गोरख पार्क, शाहदरा
दिल्ली110032, प्र सं-2006

29)ममता जैताली — आधी आबादी का संघर्ष
राजकमल प्रकाशन प्रा. लि 1 बी नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज
नई दिल्ली-110002, प्र.सं.2006

29) मालती आदवानी — लेखिकाओं की नवें दशक की हिन्दी कहानियों में पारिवारिक संबंध
सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली110049 सं-

30)डॉ एन मोहनन — समकालीन हिन्दी उपन्यास
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
110002, प्र सं. 2013

,, ,, — समकालीन हिन्दी कहानी
शिल्पायन प्रकाशन
वेस्ट गोरख पार्क, शाहदरा, दिल्ली
110032, सं.2007

31)रजनी कोठरी — भारत में राजनीति (कल और आज)
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली110002
प्र.सं- 2004

32)रमणिका गुप्ता — स्त्री विमर्श (कलम और कुदाल के
बहाने), शिल्पायन प्रकाशन
दिल्ली110032
सं.2004

33) डॉ रमेश गौतम — नाट्य विमर्श
नवराज प्रकाशन,दिल्ली-110053
प्र सं 2001

34) राजकिशोर — भारत का राजनीति संकट
वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली110002
प्र.सं 1994

35) डॉ रामजी तिवारी — साठोत्तर हिन्दी उपन्यास
परिदृश्य प्रकाशन, कानपुर-24
मुंबई-400002, प्र सं-2000

36) रोहिणी अग्रवाल — समकालीन कथा साहित्य(सरहदें और
सरोकार) , आधार प्रकाशन, पंचकूला
134113, प्र.सं-2007

37) डॉ .विजय वारद — साठोत्तरी महिला कहानी और महिला लेखिकाएँ, विकास प्रकाशन कानपुर-24, सं. 1993

38) डॉ वीना रानी यादव — हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति, अकादमिक प्रतिभा, 42 एकता अपार्टमेंट, गीता कालोनी, दिल्ली 110031, प्र सं. 2006

39) वीरेन्द्र यादव — उपन्यास और वर्चस्व की सत्ता राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 110002, प्र.सं 2009

40) वेदप्रकाश अमिताभ — हिन्दी कहानी का समकालीन परिदृश्य जवाहर पुस्तकालय, मथुरा-281001, सं.2005

41) डॉ आर शशिधरन — आधुनिक हिन्दी नाटकों में सामाजिक व्यंग्य जवाहर पुस्तकाल्य, मथुरा-281001,सं 2009

42) ,, ,, — समकालीन रंग नाटक जवाहर पुस्तकालय, मथुरा-281001 सं.2008

43) शीला प्रभा शास्त्री — महिला उपन्यासकारों में बदलते सामाजिक संदर्भ, विद्या विहार प्रकाशन, कानपुर-22 सं.1987

44) डॉ सुकुमार भंडारे	समकालीन हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिकचित्रण, विकास प्रकाशन, कानपुर 208027 प्र.सं.2007
45) सुधीश पचौरी	उत्तर यथार्थवाद वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 110002,सं.2004
46) डॉ सुनीता बानी	रांगेय राघव के उपन्यासों में मानव मूल्य विकास प्रकाशन ,कानपुर-27, प्र सं-2007
47) सुप्रिया पी	कृष्णा सोबती की कहानी कला जवाहर पुस्तकाल्य, मथुरा-281001, सं.2008
48)डॉ सुषमा जैमन	भारतीय समाज और महिलाएँ धामाणी मार्केट की गली, चैडा रास्ता, जयपुर, सं.2009
49)डॉ सुषमा त्यागी	प्राचीन ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास और कला अनुराधा प्रकाशन, मेरठ-250002, प्र. सं. 1985
50) क्षमा शर्मा	स्त्रित्ववादी विमर्श (समाज और साहित्य) राजकमल प्रकाशन ,नई दिल्ली, सं.2002
51)डॉ ज्ञानवती अरोडा	समकालीन हिन्दी कहानी :यथार्थ के विविध आयाम हिन्दी बुक सेंटर, नई दिल्ली, सं.1994.

पत्र-पत्रिकाऐं:-

1)	आजकल	जुलाई1982
2)	कथादेश	जुलाई-सितंबर 2007
3)	गगनाञ्चल	अक्टूबर-दिसंबर 2001
4)	गगनाञ्चल	जनवरी-मार्च 2004
5)	गगनाञ्चल	अक्टूबर-दिसंबर 2009
6)	गगनाञ्चल	मई-जून 2011
7)	चिंतन सृजन	अपैल-जून 2013
8)	दस्तावेज़	अक्टूबर-दिसंबर 2000
9)	दस्तावेज़	जुलाई-सितंबर 2004
10)	नटरंग	मार्च-दिसंबर 1989
11)	प्रकर	जनवरी 1987
12)	भाषा	मार्च-अप्रैल 2012
13)	मधुमती	दिसंबर 1994
14)	मधुमती	अगस्त 2006
15)	मधुमती	जुलाई2009
16)	वागर्थ	जुलाई-दिसंबर 1997
17)	वाङ्मय	जुलाई-दिसंबर,2007
18)	समीक्षा	मई-जून 1978
19)	समीक्षा	जनवरी-मार्च 2001
20)	समीक्षा	जुलाई-सितंबर 2002
21)	साहित्यामृत	दिसंबर1997
22)	साहित्यामृत	फरवरी 2000

23) साहित्यामृत मार्च 2012

24) साहित्यामृत मार्च 2012

25) संग्रथन जनवरी 2012

26) हंस जनवरी 1999

27) हंस नवंबर1999

28) हंस जनवरी-फरवरी 2000

29) हंस सितंबर 2000

30) हंस अक्तूबर 2000

31) हंस फरवरी 2001

32) हंस नवंबर 2003

33) हंस अक्तूबर 2002

......................✿✿✹✿✿......................